"यद्यपि भारत के राजा महाराजा देश में अंग्रेजों के आने के पूर्व भी विद्यमान थे, तथापि यह एक नग्न सत्य है कि वे आज केवल मात्र अंग्रेजों की मेहरबानी पर टिके हुये हैं। वे एक साम्राज्यवादी ताकत की देन हैं और उनकी थोड़ी सी नाराजगी भी उनकी सारी संस्था को ताश के पत्ते की तरह ढाह सकती है।"

—महात्मा गांधी
2-8-1942

"जहाँ जनता पर भीषण अत्याचार किये जाते हों, शादी की कुंकुम पत्री तक टैक्स ली जाती हो, उन रियासत के शासक इन्सान नहीं हैवान हैं।"

—जवाहरलाल नेहरू
31-12-1945

प्रस्तावना

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी अपनी स्थापना के 16 वर्ष पूरे करके 15 जुलाई, 1985 को 17वें वर्ष में प्रवेश कर चुकी है। इस अवधि में विश्व साहित्य के विभिन्न विषयों के उत्कृष्ट ग्रंथों के हिन्दी अनुवाद तथा विश्वविद्यालय के शैक्षणिक स्तर के मौलिक ग्रंथों को हिन्दी में प्रकाशित कर अकादमी ने हिन्दी जगत् के शिक्षकों, छात्रों एवं अन्य पाठकों की सेवा करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है और इस प्रकार विश्वविद्यालय स्तर पर हिन्दी में शिक्षण के मार्ग को सुगम बनाया है।

अकादमी की नीति हिन्दी में ऐसे ग्रंथों का प्रकाशन करने की रही है जो विश्वविद्यालय के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के अनुकूल हों। विश्वविद्यालय स्तर के ऐसे उत्कृष्ट मानक ग्रंथ जो उपयोगी होते हुए भी पुस्तक प्रकाशन की व्यावसायिकता की दौड़ में अपना समुचित स्थान नहीं पा सकते हों और ऐसे ग्रंथ भी जो अंग्रेजी की प्रतियोगिता के सामने टिक नहीं पाते हों, अकादमी प्रकाशित करती है। इस प्रकार अकादमी ज्ञान-विज्ञान के हर विषय में उन दुर्लभ मानक ग्रंथों को प्रकाशित करती रही है और करेगी जिनको पाकर हिन्दी के पाठक लाभान्वित ही नहीं गौरवान्वित भी हो सकें। हमें यह कहते हुए हर्ष होता है कि अकादमी ने 325 से भी अधिक ऐसे दुर्लभ और महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन किया है जिनमें से एकाधिक केन्द्र, राज्यों के बोर्डों एवं अन्य संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत किये गये हैं तथा अनेक विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा अनुशंसित।

राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी को अपने स्थापना-काल से ही भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय से प्रेरणा और सहयोग प्राप्त होता रहा है तथा राजस्थान सरकार ने इसके पल्लवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, अतः अकादमी अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में उक्त सरकारों की भूमिका के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती है।

प्रस्तुत पुस्तक 'राजस्थान में स्वतंत्रता-संग्राम' में राजस्थान की जनता का आजादी की लड़ाई में योगदान का मूल्यवान एवं रोचक वर्णन है। पुस्तक एम. ए. इतिहास के छात्राध्यापकों के लिए ही उपयोगी नहीं है बल्कि सामान्य जनसमुदाय के लिए भी ज्ञानवर्द्धक एवं रुचिकर सिद्ध होगी, ऐसी हमारी अपेक्षा है।

हम इसके लेखक श्री बी. एल. पानगड़िया, विषय सम्पादक प्रो. शंकरसहाय सक्सेना भाषा-सम्पादक सुश्री उषा भार्गव एवं आवरण के चित्रकार श्री मोहन शर्मा के प्रति प्रदत्त सहयोग हेतु आभार प्रकट करते हैं।

हरिदेव जोशी
अध्यक्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
एवं
मुख्य मन्त्री, राजस्थान सरकार, जयपुर

डॉ. राघव प्रकाश
निदेशक
राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
जयपुर।

प्राक्कथन

भारत की भूतपूर्व प्रधानमन्त्री स्व. श्रीमती इन्दिरागांधी विद्वानों और लेखकों के सम्मेलनों में अक्सर कहा करती थी कि इतिहास की ऐसी पाठ्यपुस्तकें लिखी जानी चाहिये जो हमारे विद्यार्थियों को देश के स्वतन्त्रता-संग्राम की कहानी सही-सही बता सकें। मार्च, 1983 में मेरी पुस्तक "राजस्थान का इतिहास" का विमोचन करते समय भी उन्होंने मुझसे पूछा था कि क्या उक्त पुस्तक में मैंने राजस्थान में हुए स्वतन्त्रता-आन्दोलन का विवरण शामिल किया है ? जब मैंने उनके प्रश्न का उत्तर हां में दिया तो वे बड़ी प्रसन्न हुईं। मैंने उसी समय संकल्प कर लिया था कि मैं देश के स्वतन्त्रता-संग्राम में राजस्थान के योगदान पर एक अलग से पुस्तक लिखूंगा। श्रीमती गांधी की प्रेरणा से लिखी गयी यह पुस्तक उसी संकल्प का परिणाम है।

साधारणतया हमारे स्वतन्त्रता-संग्राम की कहानी सन् 1857 के विद्रोह से शुरू होती है और 15 अगस्त, 1947 की मध्यरात्रि पर समाप्त हो जाती है, जबकि देश ब्रिटिश-सत्ता के पंजे से मुक्त हुआ था। पर रियासती भारत में स्वतन्त्रता-संग्राम थोड़ा और लम्बा चला। वहां इस संग्राम का अन्तिम पटाक्षेप राजा महाराजाओं और नवाबों की वंश परम्परागत संस्था की समाप्ति पर हुआ। जहां तक राजस्थान का प्रश्न है, स्वतन्त्रता-संग्राम की समाप्ति की तिथि 7 अप्रेल, 1949 मानी जानी चाहिये जबकि वृहत् राजस्थान का निर्माण हुआ और प्रदेश में राजा महाराजाओं के निरंकुश शासन के स्थान पर लोकप्रिय सरकार की स्थापना हुई।

सन् 1857 से 1949 के काल में राजस्थान की रियासतों की जनता द्वारा देश के स्वतन्त्रता-संग्राम में दिये गये योगदान का विवरण यत्र-तत्र देखने को मिलता है। श्री नाथूराम खड़गावत ने अपनी पुस्तक 'राजस्थान्स रोल इन दी स्ट्रगल ऑफ 1857' में स्वतन्त्रता के प्रथम युद्ध में राजस्थान की भूमिका पर भली-भांति प्रकाश डाला है। श्री हीरालाल शास्त्री की आत्म-कथा 'प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र' में जयपुर राज्य में नागरिक अधिकार और उत्तरदायी सरकार की मांग को लेकर हुये जन आन्दोलनों का आभास मिलता है। श्री जयनारायण व्यास के संस्मरण क्रमिक रूप में 'व्यास जी की कहानी उन्हीं की जुबानी' नामक शीर्षक से उनके पुत्र स्व. श्री देवनारायण व्यास द्वारा संपादित साप्ताहिक पत्र 'प्रेरणा' में प्रकाशित हुये हैं। इन संस्मरणों में सन् 1921 से सन् 1942 तक जोधपुर राज्य में हुये जन-आन्दोलनों का विस्तृत विवरण मिलता है। प्रो. शंकरसहाय सक्सेना ने श्री माणिक्यलाल वर्मा की दैनिक डायरियों व अन्य स्रोतों से संकलित सामग्री के आधार पर वर्माजी का जीवन-चरित्र 'जो देश के लिये जिये' नाम से लिखा है। इस पुस्तक में बिजोलिया के किसान आन्दोलन से लगा कर संयुक्त राजस्थान के निर्माण तक मेवाड़ में हुये जन-आन्दोलनों का ब्यौरा मिलता है। श्री गोकुल भाई भट्ट और

वयोवृद्ध स्वतन्त्रता सेनानी श्री रामनारायण चौधरी के संस्मरण भी समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुये हैं जिनसे राजस्थान में हुये विभिन्न जन-आन्दोलनों की झलक देखने को मिलती है। श्री सुमनेश जोशी ने, जो स्वयं एक स्वतन्त्रता सेनानी थे, सन् 1973 में 'राजस्थान के स्वतन्त्रता-संग्राम के सेनानी' नामक ग्रन्थ प्रकाशित कर प्रदेश की विभिन्न रियासतों के जन-आन्दोलनों में भाग लेनेवाले 500 से अधिक देशभक्तों की स्मृति को चिरस्थायी बना दिया है। इन सब प्रयत्नों के बावजूद यह एक कटु सत्य है कि देश के आजाद होने के 38 वर्ष बीत जाने के बाद भी राजस्थान की विभिन्न रियासतों में हुये जनआन्दोलनों के सम्बन्ध में अभी तक कोई एकीकृत पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। इस स्थिति में यदि प्रस्तुत पुस्तक इस कमी की किंचित्‌मात्र भी पूर्ति करती है तो मैं अपने श्रम को सफल मानूंगा।

आजादी के पूर्व राजस्थान में छोटी बड़ी 20 रियासतें थीं इनमें लावा जैसी रियासत भी थी जिसका क्षेत्रफल केवल 30 वर्ग कि. मी. था तो जोधपुर जैसी बड़ी रियासत भी थी जिसका क्षेत्रफल 60,000 वर्ग कि. मी. था। ब्रिटिश सरकार ने अपने हितों की रक्षा के अलावा इन रियासतों को सभी कुछ करने की छूट दे रखी थी। वह रियासतों के आन्तरिक प्रशासन में सार्वभौम सत्ता के रूप में तभी दखल देती थी जबकि उसके स्वयं के हितों को आंच पहुंचती थी। इन रियासतों के वंशपरम्परागत शासक अपनी रियाया के लिये किसी तानाशाह से कम नहीं थे। नागरिक स्वतन्त्रता का इन रियासतों में नामोनिशान नहीं था। देश की स्वतन्त्रता के लिये ब्रिटिश भारत में सन् 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हो चुकी थी। पर राजस्थान की रियासतों में इस प्रकार के संगठनों की विधिवत् शुरुआत 53 वर्ष बाद सन् 1938 में हुई। रियासतों के बीच आपस में कृत्रिम सीमायें बनी हुई थीं। अतः इन रियासतों में हुये विभिन्न सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक आन्दोलनों में किसी प्रकार का समन्वय और सामंजस्य नहीं था। यहां राजनीतिक संगठन भी भिन्न-भिन्न नाम से और भिन्न-भिन्न समय पर बने। कुछ रियासतों में ये संगठन प्रजामण्डल कहलाये तो कुछ में लोक-परिषद् अथवा प्रजा-परिषद्। कहीं ये संगठन सन् 1938 में बने तो कहीं सन् 1945–46 में और कहीं-कहीं तो केन्द्र में राष्ट्रीय सरकार बनने के भी बाद।

भी लड़ना पड़ा। कहने की आवश्यकता नहीं कि रियासती जनता को अपनी इस जद्दोजहद में कांग्रेस और उसके शीर्षस्थ नेता बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल आदि से समय-समय पर मार्गदर्शन और प्रेरणा मिलती रही।

प्रश्न उठता है कि क्या ब्रिटिश शासन-काल में राजस्थान की रियासतों में हुये विभिन्न प्रकार के आन्दोलन हमारे स्वतन्त्रता-संग्राम के अंग माने जाने चाहिये? इसका उत्तर हां में है। रियासती जनता के लिये स्वतन्त्रता का अर्थ ब्रिटिश भारत की तरह केवल ब्रिटिश-शासन के अन्त तक ही सीमित नहीं था वरन् उसमें राजाओं की निरंकुश सत्ता एवं सामन्ती व्यवस्था से मुक्ति पाना भी शामिल था। अतः राजस्थान की रियासतों में लागबाग, बैठबेगार, सामन्तशाही, नागरिक स्वतन्त्रता अथवा उत्तरदायी सरकार की स्थापना आदि प्रश्नों को लेकर जो भी आन्दोलन हुये वे निःसंदेह स्वतन्त्रता-संग्राम के अंग हैं।

उक्त परिप्रेक्ष्य में राजस्थान की विभिन्न रियासतों में हुये जन-आन्दोलनों का एकीकृत इतिहास लिखने की समस्या सचमुच कठिन हो जाती है। यही कारण है कि राजस्थान सरकार के 30 वर्षों के प्रयत्न के बावजूद भी उसे इस दिशा में अभी तक सफलता नहीं मिली है। फिर भी मैंने साहस बटोर कर इस दुरूह कार्य को समर्पित भावना से हाथ में लिया। राजस्थान में निकलने वाले प्रथम दैनिक 'लोकवाणी' के संपादक मण्डल के सदस्य और मेवाड़ प्रजामण्डल के मुख-पत्र प्रजामण्डल-पत्रिका के संपादक के नाते मेरा राजस्थान की विभिन्न रियासतों में हुये आन्दोलनों और उनके प्रमुख सूत्रधारों से निकट का सम्पर्क रहा था। मेवाड़ के उत्तरदायी शासन के आन्दोलन में मैंने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इस कारण मुझे प्रस्तुत पुस्तक के लिये आवश्यक सामग्री जुटाने में बड़ी सहूलियत हुई। मैंने प्रयत्न किया है कि प्रदेश की प्रत्येक छोटी अथवा बड़ी रियासत में हुये हर आन्दोलन का सही-सही चित्र पाठकों के सामने प्रस्तुत करूँ। मैंने यह भी प्रयत्न किया है कि इन आन्दोलनों में भाग लेने वाले प्रमुख कार्यकर्त्ताओं की भूमिका का सही-सही वर्णन करूँ। फिर भी सम्भव है पुस्तक में किसी रियासत में हुये आन्दोलन अथवा किसी कार्यकर्त्ता के साथ पूरा न्याय न हो पाया हो। पर मैं यहां यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि यदि कहीं ऐसा हुआ है तो वह जान बूझकर नहीं वरन् सामग्री के उपलब्ध न होने के कारण ही हुआ है। यदि पाठकगण ऐसी किसी भूल की ओर मेरा ध्यान दिलायेंगे तो मुझे पुस्तक के अगले संस्करण में अपनी भूल का परिमार्जन कर हार्दिक प्रसन्नता होगी।

मैंने राजस्थान की रियासतों में हुये विभिन्न आन्दोलनों का जो लेखा-जोखा इस पुस्तक में प्रस्तुत किया है, वह लिखित व जबानी अनेक स्रोतों से एकत्रित किया है। मुझे कई बार एक ही घटना के सम्बन्ध में परस्पर विरोधी विवरण मिले हैं। मैंने अपनी सहज बुद्धि के आधार पर ऐसी घटनाओं का ठीक-ठीक वर्णन पाठकों के सामने रखने का प्रयत्न किया है। यही कारण है कि कतिपय घटनाओं के स्रोतों का सन्दर्भ इस पुस्तक में देना सम्भव नहीं हुआ है। आशा है मेरी कठिनाई को समझ कर पाठकगण एवं सम्बन्धित व्यक्ति मेरी इस धृष्टता को क्षमा करेंगे।

पुस्तक की छपाई में कुछ अशुद्धियां मेरे ध्यान में आई हैं। उनका शुद्धि-पत्र इस पुस्तक के अन्त में दिया गया है। इसी तरह राजस्थान के स्वतंत्रता-संग्राम से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण सामग्री के साथ ही साथ शहीदों की सूची एवं राजस्थान के स्वतंत्रता-संग्राम का एक कलेण्डर पुस्तक के परिशिष्ट के रूप में जोड़ दिये गये हैं। आशा है पाठकगण इस अतिरिक्त सामग्री से लाभान्वित होंगे।

मैं यहां राजस्थान के प्रतिभाशाली मुख्यमन्त्री श्री हरिदेवजी जोशी के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करना चाहूँगा, जिनकी व्यक्तिगत दिलचस्पी एवं प्रोत्साहन के बिना इस पुस्तक का कांग्रेस शताब्दी समारोह के अवसर पर प्रकाशित होना सम्भव नहीं होता। जोशी जी स्वयं स्वतंत्रता-संग्राम के प्रमुख सेनानी रह चुके हैं। अतः इस प्रकार के प्रकाशन में उनकी दिलचस्पी होना स्वाभाविक था।

मैं राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी के निदेशक डॉ. राघव प्रकाश का भी शुक्रगुजार हूँ जिन्होंने पुस्तक के सामयिक प्रकाशन में कोई कसर उठाकर नहीं रखी। यदि अकादमी पुस्तकों के प्रकाशन में इतनी ही तत्परता दिखाती रही तो मुझे कोई सन्देह नहीं है कि राजस्थान के सुधीवर लेखक और विद्वान अकादमी की ओर अधिक से अधिक आकर्षित होंगे।

☐ बी. एल. पानगड़िया

विषय-सूची

चित्र-सूची

1

राजस्थान—भौगोलिक दृष्टि से

राजस्थान का पतंगाकार राज्य 23° से 30° अक्षांश और 69° से 78° देशान्तर के बीच स्थित है। इसके उत्तर में पाकिस्तान, पंजाब और हरियाणा, दक्षिण में मध्य-प्रदेश और गुजरात, पूर्व में उत्तर-प्रदेश और मध्य-प्रदेश एवं पश्चिम में पाकिस्तान है।

सिरोही से अलवर की ओर जाती हुई 480 कि. मी. लम्बी अरावली पर्वत शृंखला प्राकृतिक दृष्टि से राजस्थान को दो भागों में विभाजित करती है। राजस्थान का पूर्वी सम्भाग शुरू से ही उपजाऊ रहा है। इस भाग में वर्षा का औसत 50 से. मी. से 90 से. मी. तक है। राजस्थान के निर्माण के पश्चात् चम्बल और माही नदी पर बड़े-बड़े बांध और विद्युत गृह बने हैं, जिनसे राजस्थान को सिंचाई और बिजली की सुविधाएं उपलब्ध हुई हैं। अन्य नदियों पर भी मध्यम श्रेणी के बांध बने हैं, जिनसे हजारों एकड़ सिंचाई होती है। इस भाग में ताम्बा, जस्ता, अभ्रक, पन्ना, घीया–पत्थर और अन्य खनिज पदार्थों के विशाल भण्डार पाये जाते हैं।

राज्य का पश्चिमी सम्भाग देश के सबसे बड़े रेगिस्तान "थारपरकर" का भाग है। इस भाग में वर्षा का औसत 12 से. मी. से 30 से. मी. तक है। इस भाग में लूनी, बांडी आदि नदियां हैं, जो वर्षा के कुछ दिनों को छोड़कर प्रायः सूखी रहती हैं। देश की स्वतन्त्रता के पूर्व बीकानेर राज्य गंग नहर द्वारा पंजाब की नदियों से पानी प्राप्त करता था। स्वतन्त्रता के बाद राजस्थान इण्डस बेसिन की रावी और व्यास नदियों के 52·6 प्रतिशत पानी का भागीदार बन गया। उक्त नदियों का पानी राजस्थान में लाने के लिए सन् 1958 में राजस्थान नहर (अब इन्दिरा गांधी नहर) की विशाल परियोजना शुरू की गई। इस परियोजना पर 1,300 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान है। यह योजना आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक पूरी होगी। परियोजना के अन्तर्गत मुख्य नहर 649 कि. मी. और वितरिकाएं 9,000 कि. मी. होंगी। परियोजना की कुल सिंचाई क्षमता 15 लाख हेक्टर होगी। इससे लगभग 37 लाख टन वार्षिक खाद्यान्न उत्पन्न होगा। सन् 1984–85 के अन्त तक मुख्य नहर 615 कि. मी. और वितरिकाएं 3,300 कि. मी. पूरी हो चुकी हैं। इस नहर से इस समय लगभग 4·5 लाख हैक्टर भूमि सिंचाई होनी शुरु हो गई है। इस सिंचाई योजना के फलस्वरूप थारपरकर का महान रेगिस्तान धीरे-धीरे शस्य–श्यामला भूमि में परिवर्तित हो जायेगा और देश का वृहद् अनाज भण्डार बन जायेगा। इस नहर से जोधपुर, बीकानेर आदि नगरों के अलावा रेगिस्तान में स्थित अनेक गांवों को पेयजल भी उपलब्ध होगा।

इण्डस बेसिन की नदियों पर बनाई जाने वाली जल विद्युत योजनाओं में भी राजस्थान भागीदार है। इसे इस समय भाखरा-नांगल और अन्य योजनाओं से यथेष्ट बिजली प्राप्त होती है, जिससे राजस्थान के कृषि एवं औद्योगिक विकास में भरपूर सहायता मिलती है। राजस्थान नहर परियोजना के अलावा इस भाग में जवाई नदी पर निर्मित एक बड़ा बांध है, जिससे न केवल विस्तृत क्षेत्र में सिंचाई होती है, वरन् जोधपुर नगर को पेयजल भी प्राप्त होता है। यह सम्भाग अभी तक औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। पर इस क्षेत्र में ज्यों-ज्यों बिजली और पानी की सुविधायें बढ़ती जायेंगी, औद्योगिक विकास भी गति पकड़ लेगा। इस भाग में लिग्नाइट, फुलर्सअर्थ, टंगस्टन, बैण्टोनाईट, जिप्सम, संगमरमर आदि खनिज पदार्थ प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। जैसलमेर क्षेत्र में तेल और गैस 'मिलने की सम्भावनाएं' हैं। अब वह दिन दूर नहीं है जब कि राजस्थान का यह भाग भी समृद्धिशाली बन जायेगा।

राज्य का क्षेत्रफल 3·42 लाख वर्ग कि. मी. है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह भारत का दूसरा सबसे बड़ा राज्य है। सन् 1981 की जनगणना के अनुसार राज्य की जनसंख्या 3·41 करोड़ है, जिसमें से पुरुष 1·77 करोड़ और स्त्रियां 1·64 करोड़ हैं। अनुसूचित और जन-जातियों की संख्या क्रमशः 58 लाख और 42 लाख है। राज्य में जनसंख्या का घनत्व केवल 100 व्यक्ति प्रति कि. मी. है, जो भारत के पहाड़ी राज्यों को छोड़ कर सबसे कम है। राज्य में एक लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों की संख्या 11, अन्य नगरों और कस्बों की संख्या 146 और गांवों की संख्या 3575 है।

राज्य की राजधानी जयपुर है, जिसकी आबादी 10 लाख से अधिक है। राज्य का सचिवालय और राज्य स्तर के लगभग सभी विभाग राजधानी में स्थित हैं, पर राजस्व मण्डल अजमेर में है। इसी तरह उच्च न्यायालय जोधपुर में है, पर उसकी एक शाखा जयपुर में है।

प्रशासन की दृष्टि से राज्य 27 जिलों में बंटा हुआ है। स्वायत्त शासन के लिए नगरों और कस्बों में नगरपालिकायें एवं ग्रामीण क्षेत्रों के लिये ग्राम-पंचायतें, तहसील-पंचायतें और जिला परिषदें बनी हुई हैं। राज्य में सड़कों की लम्बाई लगभग 50,000 कि. मी. है। राज्य की कुल विद्युत अधिष्ठापित क्षमता 1,714 मेगावाट है। सन् 1983-84 के आंकड़ों के अनुसार राज्य की वार्षिक खाद्यान्न पैदावार लगभग 1 करोड़ मैट्रिक टन है। राज्य की अन्य प्रमुख पैदावार कपास, गन्ना एवं तिलहन है। राज्य में इस समय छोटे-बड़े लगभग 7,500 कारखाने हैं, जिनमें टैक्सटाइल, चीनी, सीमेन्ट, खाद, ताम्बे, और जस्ते के बड़े कल-कारखाने भी सम्मिलित हैं।

2

राजस्थान का शौर्यपूर्ण इतिहास

देश की आजादी के पूर्व राजस्थान मात्र एक भौगोलिक अभिव्यक्ति था। उनमें केन्द्र शासित प्रदेश अजमेर के अतिरिक्त 19 देशी रियासतें थीं। इन रियासतों में उदयपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, और शाहपुरा में गुहिल, जोधपुर, बीकानेर और किशनगढ़ में राठौड़; कोटा और बून्दी में हाडा-चौहान, सिरोही में देवड़ा चौहान, जयपुर और अलवर में कछवाहा, जैसलमेर और करौली में यदुवंशी एवं झालावाड़ में झाला राजपूत राज्य करते थे। टोंक में मुसलमानों एवं भरतपुर तथा धौलपुर में जाटों का राज्य था।

राजस्थान के शौर्य का वर्णन करते हुए सुप्रसिद्ध इतिहासकार कर्नल टॉड ने अपने ग्रंथ "अनाल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान" में कहा है—"राजस्थान में ऐसा कोई राज्य नहीं जिसकी अपनी थर्मोपली न हो और ऐसा कोई नगर नहीं, जिसने अपना लियोनिडास पैदा नहीं किया हो।" टॉड का यह कथन न केवल प्राचीन और मध्य युग में वरन् आधुनिक काल में भी इतिहास की कसौटी पर खरा उतरता है। 8वीं शताब्दी में जालौर के प्रतिहार और मेवाड़ के गहलोत अरब आक्रमणों की बाढ़ को न रोकते तो सारे भारत में अरबों की तूती बोलती नजर आती। मेवाड़ के रावल जैत सिंह ने सन् 1234 में दिल्ली के सुल्तान अल्तुतमिश और सन 1237 में सुल्तान बलबन को करारी हार देकर अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की। सन् 1303 में सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने एक विशाल सेना के साथ मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ पर हमला किया। चित्तौड़ के इस प्रथम शाके मे हजारों वीर–वीरांगनाओं ने मातृभूमि की रक्षा हेतु अपने आपको न्यौछावर कर दिया, पर खिलजी किले पर अधिकार करने में सफल हो गया। इस हार का बदला सन् 1326 में राणा हमीर ने चुकाया, जबकि उसने खिलजी के नुमायन्दे मालदेव चौहान और दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद तुगलक की विशाल सेना को हरा कर चित्तौड़ पर पुनः मेवाड़ की पताका फहराई।

15 वीं शताब्दी के मध्य में मेवाड़ का राणा कुम्भा उत्तरी भारत में एक प्रचण्ड शक्ति के रूप में उभरा। उसने गुजरात, मालवा और नागौर के सुल्तानों को अलग-अलग और संयुक्त रूप से हराया। सन् 1509 में राणा सांगा ने मेवाड़ की बागडोर सम्भाली। सांगा बड़ा महत्वाकांक्षी था। वह दिल्ली में अपनी पताका फहराना चाहता था। सारे राजस्थान पर अपना वर्चस्व स्थापित करने के बाद उसने दिल्ली, गुजरात और मालवा के सुल्तानों को संयुक्त रूप से हराया। सन् 1526 में फरगाना के शासक उमरशेख मिर्जा के पुत्र बाबर ने पानीपत के मैदान में सुल्तान इब्राहिम लोदी को हराकर दिल्ली पर अधिकार कर लिया। सांगा को विश्वास था कि बाबर भी अपने पूर्वज तैमूर लंग की

वावर की भांति लूट-खसोट कर अपने वतन को लौट जायेगा, पर सांगा का अनुमान गलत साबित हुआ। यही नही वावर सांगा से मुकावला करने के लिये आगरा से रवाना हुआ। सांगा ने भी समूचे राजस्थान की सेना के साथ आगरा की ओर कूच किया। वावर और सांगा की पहली भिड़न्त वयाना के निकट हुई। वावर की सेना हार कर भाग खड़ी हुई। वावर ने सांगा से सुलह करनी चाही। पर सांगा आगे वढ़ता ही गया। तारीख 17 मार्च, 1527 को खानवा के मैदान में दोनों पक्षों में घमासान युद्ध हुआ। मुगल सेना के एक वार तो छक्के छूट गये। पर इसी बीच देश के दुर्भाग्य से सांगा के सिर पर एक तीर लगा, जिससे वह मूर्छित होकर गिर पड़ा। उसे युद्ध क्षेत्र से हटा कर वसवा ले जाया गया। इस दुर्घटना के साथ ही लड़ाई का पासा पलट गया। वावर विजयी हुआ और भारत में मुगल साम्राज्य की नींव डालने में वह सफल हो गया। स्पष्ट है कि मुगल साम्राज्य की स्थापना में पानीपत का नहीं वरन् खानवा का युद्ध निर्णायक था।

खानवा के युद्ध ने मेवाड़ की कमर तोड़ दी। यही नहीं वह वर्षों तक गृह-कलह का शिकार वना रहा। अब राजस्थान का नेतृत्व मेवाड़ के शिशोदियों के हाथ से निकल कर मारवाड़ के राठौड़ मालदेव के हाथ में चला गया। मालदेव सन् 1553 में मारवाड़ की गद्दी पर वैठा। उसने मारवाड़ राज्य का भारी विस्तार किया। इस समय शेरशाह सूरी ने वावर के उत्तराधिकारी हुमायूं को हरा कर दिल्ली पर अधिकार कर लिया। शेरशाह ने राजस्थान में मालदेव की वढ़ती हुई शक्ति को देखकर मारवाड़ पर आक्रमण कर दिया। राठौड़ों ने अजमेर के निकट सुमेल गांव में शेरशाह की सेना के ऐसे दांत खट्टे किये कि एक वार तो शेरशाह का हौसला पस्त हो गया। परन्तु अन्त में शेरशाह छल-कपट से जीत गया। फिर भी उसे मारवाड़ से लौटते हुए यह कहने के लिये मजबूर होना पड़ा—"खैर हुई—वरना मुट्ठी भर वाजरे के लिए मैं हिन्दुस्तान की सल्तनत खो देता।"

सन् 1555 में हुमायूं ने दिल्ली पर पुनः अधिकार कर लिया। पर वह अगले ही वर्ष मर गया। उसके स्थान पर अकवर वादशाह वना। उसने मारवाड़ पर आक्रमण कर अजमेर, जैतारण, मेड़ता आदि इलाके छीन लिये। मालदेव स्वयं 1562 में मर गया। उसकी मृत्यु के साथ ही साथ मारवाड़ का सितारा अस्त हो गया। सन् 1587 में मालदेव के पुत्र मोटा राजा उदयसिंह ने अपनी लड़की माना वाई का विवाह शहजादे सलीम से कर अपने आपको पूर्णरूपेण मुगल साम्राज्य को समर्पित कर दिया। अजमेर के कछवाह, वीकानेर के राठौड़, जैसलमेर के भाटी, वूंदी के हाड़ा, सिरोही के देवड़ा और अन्य छोटे राज्य इससे पूर्व ही मुगलों की अधीनता स्वीकार कर चुके थे।

अकवर की भारत विजय में केवल मेवाड़ का राणा प्रताप वाधक वना रहा। अकवर ने सन् 1576 से 1586 तक पूरी शक्ति के साथ मेवाड़ पर कई आक्रमण किये। पर उसका राणा प्रताप को अधीन करने का मनोरथ सिद्ध नहीं हुआ। स्वयं अकवर प्रताप की देश-भक्ति और वीरता से इतना प्रभावित हुआ कि प्रताप के मरने पर उसकी आंखों में आंसू भर आये। उसने स्वीकार किया कि विजय निश्चय ही गहलोत राणा की हुई। यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि देश के स्वतन्त्रता-संग्राम में प्रताप जैसे नर-पुंगवों के जीवन से ही प्रेरणा प्राप्त कर अनेक देशभक्त हंसते-हंसते वलिवेदी पर चढ़ गये।

महाराणा प्रताप की मृत्यु पर उनके उत्तराधिकारी अमरसिंह ने मुगल सम्राट जहांगीर से संधि कर ली। उसने अपने पाटवी पुत्र को मुगल दरवार में भेजना स्वीकार

कर लिया। इस प्रकार 900 वर्ष बाद मेवाड़ की स्वतन्त्रता का भी अन्त हुआ। मुगल-काल में जयपुर, जोधपुर, बीकानेर और राजस्थान के अन्य राजाओं ने मुगलों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर मुगल साम्राज्य के विस्तार और रक्षा में महत्त्वपूर्ण भाग अदा किया। साम्राज्य की उत्कृष्ट सेवाओं के फलस्वरूप उन्होंने मुगल दरबार में बड़े-बड़े ओहदे, जागीरें और सम्मान प्राप्त किये।

3

राजाओं का अधःपतन

सन् 1548 में पुर्तगाल निवासी वास्को-डि गामा ने भारत की खोज की और उसके साथ ही यूरोपीय देशों के लिये भारत से व्यापार करने के द्वार खुल गए । पहले पुर्तगाली भारत में आये और उनके बाद डच । उनकी देखा-देखी सन् 1599 में लन्दन के व्यापारियों ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना की । उक्त कम्पनी ने सन् 1601 में भारत से व्यापार करना शुरु किया । सन् 1612 में कम्पनी ने मुगल सम्राट जहांगीर से कतिपय नगरों में व्यापार करने का फरमान प्राप्त कर लिया । सन् 1616 में इंग्लैण्ड के बादशाह जेम्स् प्रथम ने अपने राजदूत सर टॉमस रो को जहांगीर के दरबार में भेज कर ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थिति सुदृढ़ कर ली । शाहजहाँ के राज्यकाल में कम्पनी ने व्यापार में कई रिआयतें हासिल कीं । उसने बंगाल, मद्रास और बम्बई में अपने ठिकाने स्थापित किये । इस बीच फ्रांसिसी भी भारत में आ गये । उन्होंने भी अपनी शक्ति बढ़ाना शुरु किया । इस प्रकार भारत कई यूरोपीय शक्तियों का अड्डा बन गया ।

सन् 1707 में मुगल सम्राट औरंगजेब की मृत्यु के तुरन्त बाद उनके लड़कों में उत्तराधिकार का संघर्ष शुरु हो गया । साम्राज्य के सूबेदार विभिन्न खेमों में बँट गये । संघर्ष में अन्तिम विजय मोअज्जम की हुई । वह बहादुरशाह के नाम पर मुगल सिंहासन पर आसीन हुआ । पर गृह-युद्ध से केन्द्र कमजोर हो गया । उसके सूबेदार मनमानी करने लगे । हैदराबाद के निजामुलउलमुल्क और बंगाल के सिराजुद्दौला ने अपने आपको स्वतन्त्र घोषित कर दिया । उधर मराठों ने अपनी शक्ति बढ़ाना शुरु किया । बाजीराव पेशवा के राज्य की सीमा अब आगरा और दिल्ली से छूने लगी । पेशवा की आज्ञा से होल्कर और सिन्धिया राजस्थान व मध्य भारत के राजाओं से चौथ वसूल करने लगे । उक्त दोनों मराठा सरदारों ने पिंडारियों के साथ मिल कर राजस्थान की विभिन्न रियासतों में ऐसी तबाही मचाई कि सारा राजस्थान त्राहि-त्राहि करने लगा । 17 जुलाई, 1734 को मेवाड़ के महाराणा जगत सिंह की अध्यक्षता में राजस्थान के सभी राजा हुरड़ा (भीलवाड़ा) नामक स्थान पर मिले । उन्होंने एक करार द्वारा मरहठों का संयुक्त रूप से सामना करने का निर्णय किया । पर करार की स्याही सूख भी नहीं पाई थी कि कतिपय राजा आपसी ईर्ष्या के कारण करार से अलग हो गए । जयपुर, जोधपुर, बीकानेर और कोटा के राजाओं ने अब मुगल सम्राट मुहम्मदशाह के नेतृत्व में मरहठों के विरुद्ध सैनिक अभियान शुरू किया लेकिन आपसी फूट के कारण वह अभियान असफल रहा ।

उधर दक्षिण भारत में अंग्रेजों ने अपने पैर जमा लिये थे । उन्होंने फ्रांसिसियों को परास्त किया । सन् 1757 में प्लासी के युद्ध में नवाब सिराजुद्दौला को हरा कर बंगाल के स्वामी बन बैठे । मद्रास और बम्बई में वे पहले ही कब्जा जमा चुके थे । इस समय मरहठों और पिंडारियों के आक्रमण और लूटपाट से तंग राजस्थान के राजा [illegible] :-

हिम्मत हो गये थे। वे अब लड़खड़ाती मुगल सल्तनत के भरोसे अपने को सुरक्षित महसूस नहीं कर सकते थे। अंग्रेजों के लिए राजस्थान एवं देश के अन्य राजाओं को अपने संरक्षण में लेने का यह एक स्वर्णिम अवसर था। लार्ड हार्डिंगने इस सम्बन्ध में आश्रित पार्थक्य (Subordinate Alliance) की नीति का एलान किया। इस नीति का पहला शिकार हैदराबाद का निज़ाम हुआ। राजस्थान में अंग्रेजों की प्रथम सन्धि नवम्बर सन् 1817 में करौली से हुई। इसके बाद केवल 14 माह के अल्प समय में सन् 1818 के अन्त तक राजस्थान की सभी रियासतों ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से अलग-अलग सन्धियां कर मरहठों और पिण्डारियों के आक्रमणों से राहत की सांस ली। अंग्रेजों ने इसी काल में अजमेर का इलाका भी दौलतराम सिन्धिया से प्राप्त कर लिया था।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी और राजस्थान की विभिन्न रियासतों के बीच हुए अहदनामे कहने मात्र को सन्धि-पत्र थे। राजाओं ने उक्त अहदनामों के फलस्वरूप अंग्रेजों को मरहठों को दी जाने वाली "चौथ" के स्थान पर "खिराज" देना स्वीकार कर लिया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने रियासतों की रक्षा की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली और साथ ही उन पर पाबन्दी लगा दी कि वे अन्य किसी रियासत के साथ किसी प्रकार की सन्धि या अहदनामा नहीं कर सकेंगे। अहदनामों में राजस्थान की अधिकतर रियासतों को अन्दरूनी मामलों में खुद मुख्तारी अर्थात् आन्तरिक स्वतन्त्रता दी गयी थी। पर इन अहदनामों की स्याही भी सूख नहीं पाई थी कि अंग्रेजों ने उक्त रियासतों के अन्दरूनी मामलों में सक्रिय हस्तक्षेप शुरू कर दिया। जोधपुर के महाराजा मानसिंह को अपने लम्बे शासन-काल में पग-पग पर अंग्रेजों के हस्तक्षेप का सामना करना पड़ा और अन्त में उन्हें अंग्रेजों के आगे अपने आपको निःसहाय पाकर साधु बन जाना पड़ा। जयपुर में महाराजा राम सिंह की नाबालगी में रीजेण्ट महारानी ने अंग्रेजों की इच्छा के विपरीत झूंथाराम सिंगवी को अपना प्रधान मंत्री नियुक्त किया। उसकी परिणति राज्य के कई उच्चाधिकारियों एवं अन्य लोगों की फांसी में हुई। इन घटनाओं से राजस्थान के राजा किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गये। वे अहदनामों में निहित आन्तरिक स्वतन्त्रता-की शर्त को ही भूल गये। इस प्रकार देश की अन्य देशी रियासतों की तरह राजस्थान की रियासतों पर भी अंग्रेजों की सार्वभौमिकता स्थापित हो गयी। राजाओं के अधः पतन की यह चरम सीमा थी। जो अंग्रेज सौदागर की तरह इस देश में आये वे सर्व शक्तिमान शासक बन गये।

4

प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम-1857

सन् 1848 में लॉर्ड डलहौजी भारत का गवर्नर-जनरल होकर आया। उसने भारत में अंग्रेजी राज्य के विस्तार हेतु एक नये सिद्धान्त "डॉक्टरिन ऑफ लेप्सेज" का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार यदि कोई राजा या नवाब निःसन्तान मर जाता तो उसकी रियासत जब्त की जाकर उसे ब्रिटिश-भारत का अंग बना दिया जाता। इस नीति के फलस्वरूप सतारा, झांसी, नागपुर, अवध, कर्नाटक आदि रियासतें अंग्रेजों द्वारा जब्त कर ली गई। देशी राज्यों के शासकों में इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई जो सन् 1857 की सैनिक क्रान्ति (गदर) के समय सामने आयी।

10 मई, 1857 को मेरठ की छावनी में भारतीय सेना ने विद्रोह कर देश मे क्रान्ति का बिगुल बजाया। पूर्व नियोजित कार्यक्रम के अनुसार कई देशी राज्यों के शासकों एवं अन्य राष्ट्रीय शक्तियों ने अन्तिम मुगल सम्राट बहादुरशाह "जफर" के नेतृत्व में भारत से अंग्रेजी सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिये शस्त्र उठाये। अंग्रेजों से देश को स्वतन्त्र करने की दिशा में यह पहला बड़ा प्रयत्न था। इसी कारण इस क्रान्ति को भारत की स्वतन्त्रता का प्रथम युद्ध कहा जाता है। दुर्भाग्य से राजस्थान के अधिकांश राजाओं ने राष्ट्रीय शक्तियों का साथ न देकर अंग्रेजों की सहायता की। इसका कारण उनका यह विश्वास था कि अंग्रेजी शासन की बदौलत ही उन्हें मरहटों, पिण्डारियों और उनके स्वयं के जागीरदारों से राहत मिली है।

बीकानेर का महाराजा सरदारसिंह गदर में अंग्रेजों की सहायता देने में अग्रणी था। वह राज्य की सेना के 5,000 घुड़सवार और पैदल लेकर पंजाब के हांसी, सिरसा और हिसार जिलों में पहुँच गया, जहाँ भारतीय सेना की टुकड़ियां विद्रोह में शामिल हो गयी थी। बाढलू नामक स्थान पर बीकानेर की सेना का विद्रोहियों से कड़ा मुकाबला हुआ, जिसमें विद्रोहियों को मात खानी पड़ी। पर बीकानेर की सेना को भी भारी क्षति उठानी पड़ी। उनके कई अधिकारी व सैनिक खेत रहे। राजस्थान के राजाओं में बीकानेर ही ऐसा अकेला राज्य था जहाँ का शासक स्वयं भी अंग्रेजों की सहायतार्थ विद्रोह को दबाने के लिए राज्य से बाहर गया। महाराजा की इन सेवाओं से प्रसन्न होकर अंग्रेज सरकार ने बीकानेर को टीबी परगने के 41 गांव दिये।[1]

जयपुर के महाराजा रामसिंह ने भी गदर के दौरान अंग्रेजों की तन, मन, धन से सहायता की, जिसके फलस्वरूप गदर के बाद में अंग्रेज सरकार ने जयपुर को कोट-कासिम का परगना स्थायी रूप से दे दिया।[2]

---

1. [illegible]—पृ. 155-56।
2. [illegible]—पृ. 195।

मेवाड़ के महाराणा सरूप सिंह ने अपनी सेना अंग्रेजों की सहायतार्थ नीमच भेजी। उस समय मेवाड़ की उक्त सेना में यह अफवाह फैल गयी कि सेना को दिये गये आटे में मनुष्यों की हड्डी का चूरा मिला दिया गया है। इससे सेना में विद्रोह की भावना भड़क उठी। महाराणा ने अपने वकील को नीमच भेजा। उसने सेना के जवानों के सामने उस आटे की रोटियां बना कर खाई, तब कहीं जाकर सेना का क्रोध शान्त हुआ। महाराणा ने पोलीटिकल एजेन्ट और 40 अन्य अंग्रेज स्त्री-पुरुषों को अपने महल जगमन्दिर में शरण देकर उनकी विद्रोहियों से रक्षा की।[1]

मेवाड़ के चित्तौड़गढ़ जिले में निम्बाहेड़ा टोंक के नवाब का इलाका था। वहाँ का हाकिम विद्रोहियों से मिल गया। इस विद्रोह को कप्तान सोवर्स ने मेवाड़ की सेना की सहायता से दबा कर नीम्बाहेड़ा का प्रशासन मेवाड़ राज्य को सौंप दिया। फरवरी, 1858 में विद्रोही नेता तांतियां टोपे अपने पांच हजार सैनिकों के साथ मेवाड़ में घुस आया, पर मेवाड़ की सेना ने अंग्रेजी सेना की सहायता से उसे भगा दिया। देश में विद्रोह समाप्त होने के बाद अंग्रेजों ने नीम्बाहेड़ा पुनः टोंक के नवाब को सौंप दिया। इससे महाराणा को बड़ी निराशा हुई। उसे आशा थी कि गदर में उसके द्वारा दी गयी सहायता के उपलक्ष में नीम्बाहेड़ा मेवाड़ को दे दिया जाएगा, पर उसे केवल "खिल्लत" से ही संतोष करना पड़ा।[2]

गदर में बांसवाड़ा के महारावल लक्ष्मण सिंह की सहानुभूति अंग्रेजों के साथ थी। तातियां टोपे ने 11 दिसम्बर, 1857 को बांसवाड़ा को घेर लिया और उस पर अधिकार कर लिया। महारावल राजधानी छोड़ कर जंगलों में भाग गया। राज्य के सरदारों ने विद्रोहियों का साथ दिया। गदर की समाप्ति के बाद ही महारावल पुनः बांसवाड़ा लौट पाया।

डूंगरपुर के महारावल उदयसिंह द्वितीय ने गदर में अंग्रेजों की सहायता की। उसने खेरवाड़ा की छावनी के भील सैनिकों को विद्रोह में शामिल होने से रोका।

टोंक का नवाब वजीर खां गदर के दौरान अंग्रेजों के साथ था, पर उसकी सेना का एक बड़ा भाग विद्रोहियों से मिल गया। नवाब के मामा मीर आलम खां ने विद्राहियों का साथ दिया। नवाब के वफादार सैनिकों ने आलम खां की हवेली को घेर लिया। मुठभेड़ में आलम खां मारा गया। उसकी जागीर ज़ब्त कर ली गयी। पर टोंक के 600 विद्रोही सैनिक मुगल सम्राट की सहायतार्थ दिल्ली पहुँचने में कामयाब हो गए। अगले वर्ष अर्थात् 1858 में तांतिया टोपे बंदा के नवाब के साथ टोंक पहुँचा। टोंक के एक जागीरदार नासिर मुहम्मद खां ने टोपे का साथ दिया। बनास नदी के किनारे और अमीरगढ़ के किले के निकट विद्रोहियों और नवाब की सेना के बीच कई मुठभेड़ें हुई। नवाब ने अपने को किले में बन्द कर लिया। विद्रोहियों ने नवाब के दीवान फैज्जुल्ला खां को पकड़ लिया। उन्होने टोंक के तोपखाने पर अधिकार कर लिया और जेल एवं कोतवाली से कैदियों को मुक्त कर दिया। विद्रोहियों ने टोंक राज्य पर अपने शासन की घोषणा कर दी और नगर को लूट लिया। सूचना मिलने पर दिल्ली से मेजर ईडन एक

---

1. जगदीशसिंह गहलोत—राजपूताने का इतिहास-पृ. 279।
2. वही वही -पृ. 280।

बड़ी सेना लेकर टोंक की ओर रवाना हुआ। विद्रोही टोंक छोड़ कर नाथद्वारा की ओर चले गए।[1]

अलवर के महाराजा बन्ने सिंह ने आगरा के किले में घिरे घिरे हुए अंग्रेजों की स्त्रियों व बच्चों की सहायता के लिए अपनी सेना और तोपखाना भेजा। पर विद्रोहियों ने अछनेरा के निकट उक्त सेना को घेर लिया। अलवर की सेना के कई अफसर व सैनिक मारे गए।

गदर के दौरान भरतपुर में महाराजा जसवन्त सिंह के नाबालिग होने के कारण राज्य का शासन अंग्रेजी पोलीटिकल एजेन्ट के हाथ में था। अतः भरतपुर की सेना तांतिया टोपे का मुकाबला करने के लिये अंग्रेजी सेना की सहायतार्थ दौसा भेजी गयी। परन्तु राज्य के मेवों और गुर्जरों ने विद्रोहियों का साथ दिया। फलस्वरूप राज्य में नियुक्त अंग्रेज अधिकारी भरतपुर छोड़ कर भाग गए। राज्य में ऐसा लगने लगा जैसे ब्रिटिश सत्ता समाप्त हो गयी हो। गदर शान्त होने के बाद ही पोलिटिकल एजेन्ट ने राज्य में पुनः अपना वर्चस्व स्थापित किया।[2]

धौलपुर का महाराजा भगवन्त सिंह अंग्रेजों का वफादार था। अक्टूबर, 1857 में ग्वालियर और इन्दौर से लगभग 500 विद्रोही सैनिक धौलपुर राज्य में घुस आए। राज्य की सेना और कई वरिष्ठ अधिकारी विद्रोहियों से मिल गए। विद्रोहियों ने दो महीने तक राज्य पर अपना अधिकार बनाये रखा। दिसम्बर में पटियाला की सेना ने धौलपुर पहुंच कर विद्रोहियों का सफाया किया। राज्य पर पुनः महाराजा का वर्चस्व स्थापित हुआ।[3]

करौली के महाराव मदनपाल ने गदर के दौरान कोटा के महारावल को विद्रोहियों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए अपनी सेना भेज कर ब्रिटिश सरकार की खैरख्वाही का परिचय दिया। इसके उपलक्ष में करौली जैसी छोटी-सी रियासत के राजा को अंग्रेजों ने 17 तोपों की सलामी और जी. सी. आई. की उपाधि से विभूषित किया।[4]

राजस्थान के अन्य राज्य जैसलमेर, सिरोही, बून्दी और शाहपुरा के शासक भी गदर में अंग्रेजों के वफादार रहे और इसके उपलक्ष में उन्होंने छोटी-मोटी रियासतें अथवा सम्मान प्राप्त किये।

राजस्थान में सन् 1857 की घटनाओं की एक और तस्वीर भी थी। 21 अगस्त, 1857 को जोधपुर राज्य में स्थित एरिनपुरा-छावनी में ब्रिटिश फौज के भारतीय दस्तों ने बगावत का झण्डा खड़ा कर दिया। बागी सैनिक ए. जी. जी. के सदर मुकाम आबू पहुंच गए और वहां पर कर्नल हॉल और कई अंग्रेज अधिकारियों को मौत के घाट उतार दिया। वहां से "चलो दिल्ली, मारो फिरंगी" के नारे लगाते हुए उन्होंने दिल्ली की ओर कूच किया। राह में उन्होंने मारवाड़ के एक बड़े ठिकाने आऊवा पर मुकाम किया। वहां के ठाकुर कुशालसिंह चांपावत ने बागी सेना का नेतृत्व करना स्वीकार कर

लिया। आसोप, गूलर और आलनियावास के ठाकुर भी सदल-बल विद्रोहियों से आ मिले। इस प्रकार विद्रोहियों की सैन्य शक्ति लगभग 6 हजार हो गयी।

अजमेर के चीफ कमीश्नर सर पैट्रिक लारेन्स की प्रार्थना पर जोधपुर के महाराजा तख्तसिंह ने अपने किलेदार ओनाड़ सिंह पंवार के नेतृत्व में 10 हजार फौजें और 12 तोपें विद्रोहियों को कुचलने के लिए भेजीं। पर विद्रोहियों के सामने राज्य की सेना नहीं टिक सकी। उसकी तोपों सहित सारी युद्ध-सामग्री व एक लाख रुपया विद्रोहियों के हाथों में पड़ गया।[1] जोधपुर की सेना के सेनापति पंवार एवं उसके कई अफसर व सैनिकगण खेत रहे। अब सर पैट्रिक लारेन्स और जोधपुर का पोलीटिकल एजेन्ट मेसन ससैन्य आहूवा पहुचे। 18 दिसम्बर को दोनों पक्षों में घमासान युद्ध हुआ। अंग्रेजी सेना हार गयी। मेसन मारा गया। विद्रोहियो ने उसका सिर धड़ से अलग कर दीवार पर टांक दिया। लारेन्स अजमेर की ओर भाग गया।

उक्त समाचार जब गवर्नर जनरल लार्ड केनिंग के पास पहुंचे तो उसे बड़ी चिन्ता हुई। उसने 20 जनवरी, सन् 1858 को पालनपुर और नसीराबाद से एक बड़ी सेना आहूवा भेजी। क्रान्तिकारी इस बड़ी सेना के सामने नहीं टिक सके। क्रान्तिकारियों के नेता या तो पकड़ लिए गये या भाग गये। उनको जन-धन की अपार हानि उठानी पड़ी। आहूवा व अन्य ठिकानों को लूटा गया और बरबाद कर दिया गया। इसके पूर्व कि इस क्षेत्र में क्रान्ति का पटाक्षेप होता जोधपुर में एक ऐसी घटना घटी जिसने बुझते हुए दीपक की लौ की तरह काम किया। जोधपुर के शस्त्रागार में आग लग गयी। उससे ऐसा विस्फोट हुआ कि सारा नगर हिल उठा। कई मकान ढह गये। 500 से अधिक व्यक्ति मारे गए और हजारों घायल हुए। एक चार मन का पत्थर 6 मील दूर जा पड़ा। उस समय जोधपुर के किले में अजमेर और नसीराबाद से आये हुए अंग्रेज परिवार शरण पा रहे थे। विस्फोट की आवाज सुनकर उन्होंने समझ लिया कि विद्रोही नगर में आ गए और अन्त निकट है। पर जब यह पता लगा कि धमाका शस्त्रागार में हुए विस्फोट से हुआ है, तब कहीं जाकर उनकी जान में जान आई।[2] बाद में जनता के मनोबल को कायम रखने के लिए राज्य में प्रचार करवाया गया कि शस्त्रागार में विस्फोट विद्रोहियों की करतूत से नहीं वरन् उस पर बिजली पड़ जाने से हुआ है।

आज भी आहूवा क्षेत्र की जनता निम्नलिखित लोक गीत के जरिये आहूवा में हुए संग्राम की याद यदा-कदा दिलाती रहती है—

"ढोल बाजे चंग बाजे।
भलो बाजे बांकियो ॥
एजेन्ट को मार कर।
दरवाजे पर टांकियो ॥
झूझे आहूवो ये झूझे आहूवो।
मुल्का में ठावो हियो आहूवो ॥[3]

---

1. महाराजा सर प्रतापसिंह का स्व-लिखित चरित्र, पृ. 38, 39।
2. वही वही वही
3. ज्वाला (साप्ताहिक) ता. 2 सितम्बर, 1978 के अंक से साभार।

कोटा राज्य में भी कोटा–कण्टिनजेण्ट ने 15 अक्टूबर, 1857 को विद्रोह कर दिया। उन्होंने कोटा स्थित पोलोटिकल एजेन्ट बर्टन और कतिपय अंग्रेज अधिकरियों को मौत के घाट उतार दिया। इसी समय स्थानीय फौज भी विद्रोहियों से मिल गयी। विद्रोहियों ने राज्य के कई इलाके अपने अधिकार में कर लिए। उन्होंने कोतवाली, राज्यकोष और रसद भण्डार पर अधिकार कर लिया एवं कोटा महाराव रामसिंह को नजरबन्द कर दिया। करौली की सेना ने कोटा पहुँच कर महाराव को मुक्त कराया। विद्रोहियों का लगभग 6 माह तक राज्य के विभिन्न भागों पर अधिकार रहा।[1] 1 मार्च, सन् 1858 के कर्नल रार्बट के नेतृत्व में अंग्रेज सेना कोटा पहुँची। उसने विद्रोहियों का सफाया कर दिया। विद्रोहियों के नेता जयदयाल और महाराव खां फांसी के तख्ते पर लटका दिये गये। कोटा कण्टिनजेण्ट भंग कर दी गयी। बर्टन की रक्षा करने में लापरवाही बरतने के आरोप में महाराव की तोपों की सलामी 17 से घटा कर 13 कर दी गयी।[2]

अजमेर-मेरवाड़ा की नसीराबाद छावनी में दो रेजीमेण्ट थीं। मेरठ में सैनिक विद्रोह की खबर पाकर 2 मई को नसीराबाद स्थित दोनों पल्टनों ने विद्रोह कर दिया। विद्रोहियों ने अंग्रेज अधिकारियों के घरों को लूट लिया अथवा जला दिया। विद्रोही दिल्ली की ओर कूच कर गये जहां उन्होंने एक अंग्रेजी फौज को करारी शिकस्त दी। विद्रोही अगर दिल्ली की बजाय अजमेर जाकर वहाँ के शस्त्रागार पर अधिकार कर लेते और प्रशासन हाथ में ले लेते तो राजपूताने की रियासतों में विद्रोह को भारी बल मिलता और उस पर नियन्त्रण पाना अंग्रेजी सल्तनत के लिये आसान न होता। पर देश के भाग्य में तो अभी गुलामी ही बदी थी।

स्पष्ट है 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम में राजस्थान के राजाओं ने प्रायः अंग्रेजों का साथ दिया, पर यह भी स्पष्ट है कि राजस्थान की जनता और जागीरदारों की सहानुभूति विद्रोहियों के साथ थी। यही कारण था कि राजस्थान में विद्रोही नेता तांतिया टोपे को अनेक स्थानों पर महत्त्वपूर्ण सफलतायें मिलीं। कोटा, टोंक, बांसवाड़ा और भरतपुर आदि रियासतों पर तो महीनों तक विद्रोहियों का अधिकार रहा और उनका यह अधिकार तभी समाप्त हुआ जबकि देश के शेष भागों में क्रान्ति असफल हो गयी। यह केवल संयोग नहीं था कि तांतिया टोपे के राजस्थान में कई बार प्रवेश करने के बावजूद भी ब्रिटिश एवं रियासती सेनायें उसे पकड़ नहीं सकीं।

अन्ततोगत्वा विदेशी जूये को उखाड़ फैंकने के इस प्रथम बड़े प्रयत्न में भारत असफल रहा, परन्तु इस विद्रोह के फलस्वरूप ब्रिटिश सरकार ने भारत का शासन ईस्ट इण्डिया कम्पनी से हटाकर सीधा अपने हाथों में ले लिया। ब्रिटेन की महारानी विक्टोरिया भारत की "साम्राज्ञी" घोषित कर दी गयी। ब्रिटिश सरकार ने राजाओं का निसंतान होने की स्थिति में गोद रखने का अधिकार प्रदान कर दिया।

5

सशस्त्र क्रान्ति के प्रयत्न

सन् 1857 के विद्रोह की असफलता से देश में अंग्रेजी हूकूमत का वर्चस्व स्थापित हो गया। पर इस स्थिति में वदलाव आने में अधिक देर नहीं लगी। सन् 1905 में "वंग-मंग" ने देश में क्रान्ति की ज्वाला को एक वार फिर प्रज्वलित कर दिया। महा-विपल्वी नायक रासविहारी वोस के नेतृत्व में देश के विभिन्न भागों में सशस्त्र क्रान्ति का आयोजन होने लगा। राजस्थान में इस क्रान्ति की धुरी थे शाहपुरा निवासी वारहट केशरी सिंह, खरवा ठाकुर गोपाल सिंह, जयपुर के अर्जुनलाल सेठी तथा व्यावर के सेठ दामोदरदास राठी। इन्होंने राजस्थान में अभिनव–भारत-समिति नामक क्रान्तिकारी संगठन की शाखा स्थापित की। इस संस्था द्वारा भरती किये गये युवकों को अर्जुन-लाल सेठी द्वारा जयपुर में स्थापित वर्धमान विद्यालय में शिक्षण दिया जाता था। वहाँ से शिक्षित हुये युवकों को क्रान्तिकारी कार्यों के व्यावहारिक ज्ञान के लिये रासविहारी वोस के विश्वस्त सहायक सहायक मास्टर अमीरचन्द के पास भेजा जाता था।

सशस्त्र क्रान्ति की इस लहर में राजस्थान में सवसे वड़ा योग ठाकुर केशरी सिंह वारहट और उनके परिवार का था। सन् 1872 में शाहपुरा (भीलवाड़ा) के निकट अपनी पैतृक जागीर के गाँव देवपुरा में उत्पन्न श्री वारहट अनेक भारतीय भाषाओं के ज्ञाता, डिंगल के उत्कृष्ट कवि और महान् देशभक्त थे। उन्होंने राजस्थान के राजाओं एवं जागीरदारों में राष्ट्रीय भावना भरने का प्रयत्न किया और उन्हें अपने गौरवपूर्ण अतीत का स्मरण कराया। सन् 1903 में लॉर्ड कर्जन के दरवार में भाग लेने के लिये मेवाड़ के महाराणा फतहसिंह जव दिल्ली के लिये रवाना हुये तो वारहट के "चेतावनी के चूंग-टिया"[1] से प्रभावित होकर वे दरवार में भाग लिये विना ही उदयपुर लौट आये।

श्री वारहट युवावस्था में ही महाराणा उदयपुर के पास चले गये थे। वहाँ से वे कोटा महारावल की सेवा में पहुँच गये। इस वीच उनका रासविहारी वोस एवं अन्य क्रान्तिकारी नेताओं से सम्पर्क वना। यह जानते हुये भी कि क्रान्तिकारियों का मार्ग अत्यन्त खतरनाक और मौत की ओर ले जाने वाला है, श्री वारहट ने अपने सहोदर सिंह, जोरावर पुत्र प्रताप सिंह एवं जामाता ईश्वरदान आसिया को रासविहारी वोस के सहा-यक मास्टर अमीरचन्द की सेवा में क्रान्ति का व्यवहारिक अनुभव और प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिये दिल्ली भेज दिया।

---

1. देखिये परिशिष्ट 1

सन् 1912 में ब्रिटिश सरकार ने भारत की राजधानी कलकत्ता से हटा कर दिल्ली लाने का निर्णय किया। इस अवसर पर तारीख 23 दिसम्बर सन् 1912 को भारत के गवर्नर जनरल लार्ड-हार्डिंग ने दिल्ली में प्रवेश करने के लिए एक शानदार जुलूस का आयोजन किया। उधर रासबिहारी बोस ने हार्डिंग को मारने की एक साहसी योजना बनाई। उसने बंगाल के बसन्त कुमार विश्वास और राजस्थान के जोरावर सिंह एवं प्रताप सिंह आदि विश्वस्त युवकों के कन्धों पर यह भार डाला। ये युवक चाँदनी चौक स्थित पंजाब नेशनल बैंक की इमारत पर पहुँच गये। जब वायसराय जुलूस में हाथी पर सवार होकर वहाँ से गुजर रहा था तो उन्होंने उस पर बम फेंका। हार्डिंज के शरीर पर जख्म आये, पर वह बच गया। परन्तु उसका छत्रधारी अंगरक्षक महावीर सिंह घटनास्थल पर ही मारा गया। क्रान्तिकारियों ने सारा कार्य इस सफाई से किया कि भारत सरकार की पुलिस अभियुक्तों का सुराग तक नहीं लगा सकी। पुलिस ने संदेह में प्रताप सिंह और ईश्वरदान आसिया को गिरफ्तार किया, पर उनके विरुद्ध किसी प्रकार का सबूत नहीं होने से उन्हें छोड़ देना पड़ा।

उन दिनों क्रान्तिकारी अपनी गतिविधियों के संचालन के लिये धनाढ्य लोगों और बैंकों पर डाका डालकर धनराशि एकत्र किया करते थे। राजस्थान के क्रान्तिकारियों ने इस सम्बन्ध में जोधपुर के एक धनी साधु प्यारे राम की कोटा में और बिहार के आरा जिले के एक महन्त की नीमाज में हत्या कर दी। दिल्ली बम केस की तहकीकात के सम्बन्ध में इन दोनों हत्याओं का भेद खुला। नीमाज हत्याकाण्ड में जोरावर सिंह के विरुद्ध वारण्ट जारी हुआ। पर वह दिल्ली बम काण्ड के तुरन्त बाद ही फरार हो गया था और जीवन-पर्यन्त ही फरार रहा। वह अज्ञात अवस्था में अनेक कष्ट भोगता हुआ सन् 1937 में कोटा में शहीद हुआ। स्वर्गीय श्री अर्जुनलाल सेठी इसी काण्ड में गिरफ्तार किए गए। उन पर जुर्म साबित नहीं हुआ। इसके बावजूद उन्हें मद्रास राज्य की वेलूर जेल में 5 वर्ष तक नजरबन्द रखा गया।

प्रतापसिंह सन् 1917 में बनारस षड़यन्त्र अभियोग में पकड़ा गया। उसे 5 वर्ष की सजा हुई। उसे बरेली सैन्ट्रल जेल में बन्द कर दिया गया। वहाँ भारत सरकार के गुप्तचर विभाग का निदेशक सर चार्ल्स क्लीव लैण्ड उससे मिला और उसे कहा कि उसकी माता उसके लिए दिन-रात रोती है और उसके वियोग में अपने प्राण त्याग देगी। यदि वह क्रान्तिकारियों की गतिविधियों की सरकार को जानकारी दे देगा तो उसे रिहा कर दिया जाएगा। वीर प्रताप ने उत्तर दिया, "मेरी माँ रोती है तो उसे रोने दो। मैं अपनी माँ को हँसाने के लिये हजारों माताओं को रुलाना नहीं चाहता।" क्लीव लैण्ड ने अपने संस्मरणों में इस घटना का विवरण देते हुए लिखा है, "मैंने आज तक प्रताप सिंह जैसा वीर और विलक्षण बुद्धिवाला युवक नहीं देखा। उसे सताने में हमने कोई कसर नहीं रखी पर हम इस में सफल नहीं हुए। हम सब हार गए। वह विजयी हुआ।"[1] अन्त में प्रताप सिंह जेल में अकेले रहते ही सभी अमानुषिक यातनाओं को भोगता हुआ 27 मई, 1918 को केवल 22 वर्ष की आयु में शहीद हो गया।

प्यारेराम हत्याकाण्ड के संदेह में वारहट केशरी सिंह को पकड़ लिया गया। उनके खिलाफ कोई ठोस सबूत नहीं मिला। पर न्याय का नाटक कर उन्हें 20 वर्ष के कारावास का दण्ड दिया गया। उनकी पैतृक सम्पत्ति और जागीर जप्त कर ली गयी। उन्हें राज्य के बाहर बिहार की हजारी बाग जेल में सजा काटने के लिये भेज दिया गया, जहाँ से जेल सुपरिटेण्डेण्ट की शिफारिश पर उन्हें 5 वर्ष बाद ही रिहा कर दिया गया। वे रिहा होकर कोटा पहुँचे। उन्हें अपने पुत्र प्रताप सिंह के बरेली जेल में शहीद होने के समाचार मिले तो उन्होंने कहा, "भारत माता का पुत्र उसकी मुक्ति के लिये बलिदान हो गया।" बारहटजी का शेष जीवन कोटा में ही बीता। वे अन्तिम वर्षों में महात्मा गांधी के बड़े प्रशंसक हो गए। उनको विश्वास हो गया कि महात्मा गांधी ही अपने असहयोग आन्दोलन द्वारा देश को अंग्रेजों से मुक्त करा सकेंगे। सन् 1928 में अखिल राजस्थान हिन्दी कवि सम्मेलन के अजमेर अधिवेशन में गांधीजी की प्रशंसा में उन्होंने एक कविता लिख भेजी थी, उसका एक छोटा-सा अंश नीचे उद्धृत किया जाता है :—

सर्व उपाय छुटे, प्राण सौरभ लेत।
तत्र पर गांधी बिन, आये है ठिकाने ना।
असहयोग मंत्र फूंकि, ईशा सदी बीसी में।
शीशी में उतारे बिना भूत यह माने ना।[1]

बारहटजी ने सन् 1940 में अपना शेष जीवन गांधी जी की सेवा में बिताने की इच्छा प्रकट की गांधीजी ने उनको स्वीकृति भी दे दी, परन्तु इसी बीच वे बीमार रहने लगे और कुछ समय बाद इस असार संसार से चल बसे। इसके कुछ समय पूर्व उनके सहोदर जोरावरसिंह अज्ञात अवस्था में शहीद हो चुके थे। उन्होंने अपनी पुत्री चन्द्रमणी को एक पत्र में ठीक ही लिखा था कि "भारत के एक महत्त्वपूर्ण प्रदेश में जागृति का आरम्भ अपने कुटुम्ब की महान आहूति से ही हुआ है। इस राज-सूय यज्ञ में हम लोगो की बली मंगलरूप में हुई।" स्वयं रासबिहारी बोस बहुत वर्षों पहले कह चुके थे :—

"भारत में एक मात्र ठाकुर केशरीसिंह ही एक ऐसे क्रांतिकारी हैं जिन्होंने भारत माता की दासता की शृंखलाओं को काटने के लिए अपने समस्त परिवार को स्वतन्त्रता के युद्ध में झोंक दिया।"[2]

12 फरवरी, सन् 1915 को रासबिहारी बोस के नेतृत्व में लाहौर में क्रान्तिकारियों ने निर्णय लिया कि 21 फरवरी को देश के विभिन्न स्थानों में सशस्त्र विद्रोह का श्रीगणेश किया जाए। भूतपूर्व केन्द्र शासित प्रदेश अजमेर इलाके में विद्रोह कि संचालन का भार खरवा ठाकुर गोपाल सिंह और उनके साथी भूपसिंह ने उठाया। भूपसिंहफिरोजपुर षडयन्त्र में फरारी की स्थिति में गोपाल सिंह के पास खरवा में आ गए थे। दोनों ने सैकड़ों युवकों का दल तैयार किया और 30 हजार से अधिक बन्दूकें एकत्र की। दुर्भाग्य से अंग्रेज सरकार पर क्रान्तिकारियों की देशव्यापी योजना का भेद खुल गया। फलतः देशभर मेंक्रान्तिकारियों को समय से पूर्व ही पकड़ लिया गया। इस प्रकार योजना असफल हो गयी। राजस्थान में भी क्रान्तिकारियों ने अस्त्र-शस्त्र गुप्त स्थानों में छिपा दिये और दल को

---

1. ठाकुर केशरी सिंह बारहट स्मारिका, 1976 में श्री सवाई सिंह धमोरा का लेख।
2. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना—"राजस्थान के क्रान्तिकारी परिवार-पृ. 4।

बिखेर दिया। अजमेर की पुलिस ने ठाकुर गोपाल सिंह और उनके साथियों को खरवा के जंगलों में पकड़ लिया। उन्हें टाडगढ़ के किले में नज़रबन्द कर दिया। कुछ ही समय बाद भूपसिंह पहरेदारों की आँखों में धूल झोंक कर किले से फरार हो गया। यही भूपसिंह आगे जाकर विजयसिंह 'पथिक' के नाम से बिजौलिया की किसान क्रान्ति का सूत्रधार बना।

———

पर 5 रु. चंवरी-कर के रूप में ठिकाने को देना पड़ता था। विरोधस्वरूप किसानों ने लड़कियों की शादी करना स्थगित कर दिया, पर राव के कान पर जूं तक नही रेंगी। सन् 1905 में किसान शादी योग्य 200 कन्याओं को लेकर राव के पास पहुंचे और चंवरी माफ करने की प्रार्थना की। पर वह टस से मस नही हुआ। किसानों ने निश्चय किया कि जब तक चंवरी की लागत समाप्त नही की जाती और लगान में कमी नहीं की जाती वे ठिकाने की भूमि पर खेती नहीं करेंगे और ठिकाने को लगान या लाग बाग नहीं देंगे। अक्षय तृतीया को खेतों में हल जोतने का मुहूर्त होता था, पर उस वर्ष उक्त तिथि को ऊपरमाल में हल नही चले। राव घबरा गया। उसने किसानों को बुलाया। वह उनके साथ आदर भाव से पेश आया। उसने चंवरी की लागत माफ कर दी एवं लगान उपज के आधे हिस्से के स्थान पर 2/5 ही लेने की घोषणा की। किसानों की उस जमाने में यह एक अप्रत्याशित विजय थी। इस सफलता ने किसानों के भावी असहयोग एवं अहिंसात्मक आन्दोलन की आधारशिला रखी।

सन् 1906 में राव कृष्णसिंह की मृत्यु हो गयी। उसके स्थान पर पृथ्वीसिंह बिजोलिया का स्वामी बना। मेवाड़ राज्य के नियमों के अनुसार पृथ्वीसिंह को बिजोलिया का उत्तराधिकारी स्वीकार करने के पूर्व उसे तलवार–बन्धाई के रूप में महाराणा को एक बड़ी धन राशि देनी थी। पृथ्वीसिंह ने वह भार जनता पर डाल दिया। उसने एक ओर लगान में वृद्धि कर दी एवं दूसरी ओर "तलवार-बन्दी" की लागत लगा दी। किसानों ने साधु सीताराम दास, फतहकरण चारण और ब्रह्मदेव के नेतृत्व में राव की इस कार्यवाही का विरोध किया। उन्होंने सन् 1913 में ऊपर माल के क्षेत्र को पड़त रखा और ठिकाने को भूमि-कर नहीं दिया। बदले की कार्यवाही में राव ने चारण और ब्रह्मदेव को बिजोलिया से निर्वासित कर दिया एवं साधु सीताराम को पुस्तकालय की नौकरी से अलग कर दिया। उसने कई किसान कार्यकर्त्ताओं को जेल में डाल दिया। आन्दोलन कुछ समय के लिये दब गया। इसी बीच पृथ्वीसिंह की मृत्यु हो गयी। उसका पुत्र केशरसिंह नाबालिग था। अतः मेवाड़ सरकार ने ठिकाने पर मुनंसरिमात (कोर्ट ऑफ वार्ड्स) कायम कर दी।

बिजोलिया के किसान-आन्दोलन में श्री विजयसिंह पथिक ने सन् 1916 में प्रवेश किया। श्री पथिक का पूर्व नाम भूपसिंह था। भूपसिंह बुलन्दशहर जिले के गुठावली गांव में पैदा हुये थे। उनके दादा 1857 की क्रान्ति में मालागढ़ नवाब की सेना का नेतृत्व करते हुये शहीद हो गये थे। भूपसिंह 1907 में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी शचीन्द्र सान्याल और रासबिहारी बोस के सम्पर्क में आये और तभी से वे क्रान्तिकारी गतिविधियों में भाग लेने लग गये थे। बोस ने उन्हें राजस्थान में क्रान्ति का आयोजन करने के लिये खरवा ठाकुर गोपाल सिंह के पास भेजा। पर देश में क्रान्ति की योजना असफल हो गयी। सर्वत्र क्रान्तिकारी लोग पकड़े गये। राजस्थान में भूपसिंह और गोपालसिंह अन्य साथियों के साथ टाडगढ़ के किले में बन्द कर दिये गये। इन्हीं दिनों फिरोजपुर षड्यन्त्र अभियोग में भूपसिंह के विरुद्ध वारन्ट जारी हुआ। पर सरकारी [illegible] भी भूपसिंह टाडगढ़ से फरार निकल गये। उन्होंने पगड़ी दाढ़ी बढ़ा ली और नाम भूपसिंह से बदल कर विजयसिंह "पथिक" रख लिया। तभी से जीवन भर वे इसी नाम से जाने जाते रहे।

पथिकजी ने अब युद्ध के चन्दे के विरोध में आवाज बुलन्द की। पथिकजी भूमिगत थे। अतः वे तो नहीं पकड़े जा सके पर आन्दोलन के प्रमुख कार्यकर्त्ता साधु सीताराम दास और प्रेमचन्द भील पकड़ लिये गये। उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। लगभग 1,300 व्यक्तियों के बयान लिये गये पर सभी ने एक स्वर से बयान दिये कि हमें युद्ध का चन्दा न देने के लिये किसी ने नहीं बहकाया है, हम तो लगान व लाग-बागों के भार से दबे हुये हैं। अतः हम चन्दा नहीं दे सकते। इधर पथिकजी ने बिजोलिया के किसानों पर हो रहे अत्याचारों के सम्बन्ध में लोकमान्य तिलक को एक पत्र लिखा। लोकमान्य ने शीघ्र ही महाराणा फतेहसिंह को लिखा कि "मेवाड़ राजवंश ने स्वतन्त्रता के लिये बहुत बलिदान किये हैं। आप स्वयं स्वतन्त्रता के पुजारी हैं, अतएव आपके राज्य में स्वतन्त्रता के उपासकों को जेल में डालना कलंक की बात है।" इस पत्र का यह असर हुआ कि महाराणा के आदेश से साधु सीतारामदास और प्रेमचन्द भील छोड़ दिये गये।

अब पथिकजी ने किसानों को संगठित करने का कार्य तेजी से शुरू किया। ऊपर-माल के स्त्री-पुरुष और बच्चों को आन्दोलन के रंग में रंग दिया। किसान पंचायत ने ठिकाने को स्पष्ट चेतावनी दे दी कि किसान अनुचित लागतें और बेगार नहीं देंगे। सारा ऊपर-माल सत्याग्रह सम्बन्धी गीतों से गूंजने लगा। एक ओर वर्माजी द्वारा रचित "पंछिड़ा" गाया जाने लगा तो दूसरी ओर प्रज्ञाचक्षु भंवरलाल स्वर्णकार अपनी निम्नलिखित कविता के माध्यम से गांव-गांव में अलख जगाने लगने।

"मान-मान मेवाड़ा राणा, प्रजा पुकारे रे।
इस जार को पतो न लाग्यो, सुण राणा फतमाल रे॥"

पथिकजी ने देश भर में बिजोलिया के किसान आन्दोलन के प्रचार की सुव्यवस्था की। उन्होंने बिजोलिया के किसानों की ओर से रक्षा बन्धन के अवसर पर चांदी की एक राखी कानपुर से निकलने वाले "प्रताप" के सम्पादक श्री गणेश शंकर विद्यार्थी के पास भेजी। विद्यार्थीजी ने राखी को स्वीकार करते हुये आन्दोलन का समर्थन करने का आश्वासन दिया। उन्होंने अपने इस पवित्र आश्वासन को अन्त तक निभाया।

मेवाड़ के कारकुनों को यह सन्देह हो गया कि बिजोलिया के नायब मुन्सरिम डूंगरसिंह भाटी पथिकजी से मिले हुये हैं। अतः सरकार ने उनके स्थान पर पहले शोप-लाल को और बाद में माधोसिंह कोठारी को नायब मुंसरिम नियुक्त किया। कोठारी ने आते ही किसानों से लागतें और बेगार देने को कहा। किसानों ने स्पष्ट इन्कार कर दिया। इस पर ठिकाने ने 51 किसानों को गिरफ्तार कर लिया। पथिकजी इस समय सत्याग्रह के देश व्यापी प्रचार के लिये विद्यार्थीजी से मिलने कानपुर गये हुये थे। वहां से पथिकजी कांग्रेस के सन् 1918 के अधिवेशन में शामिल होने के लिये दिल्ली गये। उनकी अनु-पस्थिति में वर्माजी और साधुजी आन्दोलन का संचालन कर रहे थे। वर्माजी किसान पंचा-यत के तीन अन्य प्रतिनिधियों को लेकर पथिकजी के आदेशानुसार दिल्ली पहुंचे। वहां इन सबकी विद्यार्थीजी से मुलाकात हुई। दिल्ली से बिजोलिया के कार्यकर्ता नया उत्साह लेकर वापिस लौटे। उन्होंने निश्चय कर लिया कि किसी भी हालत में बेगार नहीं देंगे और ठिकाने के जुल्मों के आगे नहीं झुकेंगे। इनके लौटते ही ठिकाने ने वर्माजी और प्रतिनिधि मण्डल के अन्य सदस्यों को जेल में बन्द कर दिया। इसी दिन साधु सीतारामदास व कई किसान भी गिरफ्तार कर लिये गये। इस प्रकार दमन-चक्र शुरू हुआ। ठिकाने ने किसानों की

खड़ी फसल नष्ट कर दी। उनके साथ मार-पीट की और उन्हें तरह-तरह से जलील किया पर किसानों ने वेगार देना मंजूर नहीं किया। पथिकजी ने स्मृति-पत्रों द्वारा भारत सरकार और मेवाड़ सरकार को ठिकाने के अत्याचारों से अवगत कराया।

अप्रेल, 1919 में न्यायमूर्त्ति बिन्दुलाल भट्टाचार्य की अध्यक्षता में एक जांच आयोग नियुक्त किया गया। पथिकजी की सलाह पर किसानों ने आयोग के सामने यह मांग रखी कि वे आयोग के साथ तभी सहयोग करेंगे जबकि उनके नेता जेल से मुक्त कर दिये जायेंगे। आयोग ने इस मांग को स्वीकार कर लिया। साधु सीतारामदास जी, वर्मा जी आदि प्रमुख कार्यकर्ताओं को रिहा कर दिया गया। आयोग ने दोनों पक्षों को सुनने के बाद राज्य से सिफारिश की कि किसान कार्यकर्ताओं को जेल से छोड़ दिया जाये, अनावश्यक लागतें समाप्त कर दी जायें एवं वेगार प्रथा बन्द कर दी जायें। मेवाड़ सरकार ने आयोग की सिफारिशों पर कोई निर्णय नहीं लिया। बड़ी इन्तजार के बावजूद जब मेवाड़ सरकार की ओर से समस्या का कोई समाधान नहीं मिला तो किसानों ने यह प्रतिज्ञा कर ली कि वे न तो लागतें ही देंगे और न ही वेगार। उधर ठिकाना इस बात पर अड़ा रहा कि बिना लाग व वेगार दिये लगान स्वीकार नहीं करेंगे। इसी बीच ठिकानें ने सिंचित भूमि का लगान बढ़ा दिया। किसानों ने निर्णय किया कि वे सिंचित भूमि नहीं जोतेंगे। ठिकाने ने घोषणा की कि यदि किसान असिंचित भूमि को जोतेंगे तो सिंचित भूमि का लगान भी देंगे चाहे वे सिंचित भूमि जोतें या नहीं जोतें। एक बार पुनः किसान पंचायत तथा ठिकाने के बीच संघर्ष छिड़ गया। ठिकाने ने दो सौ प्रमुख किसानों को जेल में डाल दिया। अन्त में मेवाड़ सरकार ने आदेश दिया कि किसानों से केवल उसी भूमि का लगान लिया जावे जिस भूमि को वे जोतें। इस प्रकार किसानों की यह एक और विजय हुई।

इसी वर्ष अमृतसर कांग्रेस में पथिक जी के प्रयत्न से लोकमान्य तिलक ने बिजोलिया सम्बन्धी प्रस्ताव रखा परन्तु महात्मा गांधी ने इस सुझाव पर वह प्रस्ताव वापिस ले लिया गया कि महामना मालवीयजी मेवाड़ के महाराणा से मिलकर इस मामले को तय करवानें का प्रयत्न करेंगे। इस बीच महाराणा ने पुनः एक जांच आयोग की नियुक्ति की। इस आयोग ने किसानों के पक्ष को सही माना। इसके बावजूद मेवाड़ सरकार ने आयोग की रिपोर्ट पर कोई कार्यवाही नहीं की। मालवीयजी महाराणा से मिले। पर उन्हें भी सफलता नहीं मिली। इस प्रकार किसान और ठिकाने में गतिरोध बना रहा। पथिक जी महात्मा गांधी जी से मिलने के लिये बम्बई गये। उन्होंने बिजोलिया के किसानों की करुणा गाथा महात्मा गांधी को सुनाई। महात्मा गांधी जी ने अपने सचिव महादेव देसाई को पथिक जी के साथ बिजोलिया भेजा। देसाई ने अपनी रिपोर्ट महात्मा गांधीजी को दी। इस रिपोर्ट से प्रभावित होकर महात्मा गांधी ने पथिक जी को वचन दिया कि यदि मेवाड़ सरकार ने बिजोलिया के किसानों के साथ न्याय नहीं किया तो वे स्वयं बिजोलिया सत्याग्रह का संचालन करेंगे। महात्मा गांधी ने किसानों की शिकायतें दूर करने के लिवे महाराणा फतेहसिंह को एक पत्र भी लिखा।[1] पर कोई फल नहीं निकला। महाराणा तो स्वयं अपने अस्तित्व के लिये ब्रिटिश सरकार से टक्कर ले रहे थे।

---

1. श्री रामनारायण चौधरी—"नवजीवन" उदयपुर ता. १२-३-८२ के अंक में "पथिकजी जैसा और नहीं हुआ" लेख से।

पथिकजी की बम्बई यात्रा के समय यह निश्चय किया गया था कि पथिकजी के सम्पादकत्व में वर्धा से राजस्थान केशरी नामक पत्र निकाला जाये। पत्र के सहसम्पादक श्री रामनारायण चौधरी और ईश्वरदानजी आसिया एवं व्यवस्थापक श्री हरिभाई किंकर एवं श्री कन्हैयालाल कलयंत्री नियुक्त किये गये। पत्र की आर्थिक जिम्मेदारी सेठ जमनालाल जी बजाज ने उठाई। पथिकजी बिजोलिया से वर्धा चले गए। उन्होंने पत्र का बड़ी खूबी से संचालन किया। पत्र सारे देश में लोकप्रिय हो गया। पर पथिकजी का बजाजजी की विचारधारा से मेल नहीं खाया और वे वर्धा छोड़कर अजमेर चले गए। इस बीच बिजोलिया आन्दोलन का संचालन वर्मा जी ने किया।

सन् 1920 की नागपुर कांग्रेस में सर्वश्री पथिकजी, साधु सीतारामदास, रामनारायण चौधरी, माणिक्यलाल वर्मा, किंकरजी एवं कई किसान नेता बिजोलिया सत्याग्रह के सम्बन्ध में महात्मा गांधी से मिले और उनसे असहयोग आन्दोलन के सम्बन्ध में आशीर्वाद प्राप्त किया। इस समय पथिकजी के प्रयत्नों से अजमेर में राजस्थान-सेवा-संघ की स्थापना हो चुकी थी। पथिकजी ने अब अजमेर को अपनी प्रवृत्तियों का केन्द्र बनाया। वहाँ से उन्होंने एक नया पत्र "नवीन राजस्थान" प्रकाशित किया। इधर वर्माजी सदल-बल नागपुर अधिवेशन में से लौटकर बिजोलिया पहुँचे और किसान आन्दोलन को तीव्र बनाने में जुट गए। इन दिनों पथिकजी के आग्रह पर श्री अर्जुनलाल सेठी बिजोलिया आए जहाँ किसानों ने उनका धूमधाम से स्वागत किया।

किसानों के लगान, लागतें और बेगार बन्द कर देने से ठिकाने की आय के सब स्रोत बन्द हो गए। इसके अलावा आन्दोलन के कारण ठिकाने पर पुलिस का खर्चा बढ़ता जा रहा था। राव केशरी सिंह ने समझौते के प्रयत्न किए, पर उनके कामदारों ने समझौता होने नहीं दिया। अन्त में पथिकजी की सलाह पर किसान पंचायत ने निर्णय लिया कि ठिकाने के कोई आदेश नहीं माने जाएँ, न लगान दिया जाए न बेगार, एवं ठिकाने की कचहरी का बहिष्कार किया जाए। वर्माजी के प्रयत्नों से किसानों ने शराब पीना और मृत्यु-भोज करना बन्द कर दिया।

सन् 1921 में बारिश होते ही किसानों ने फसल बोई। जब फसल पक गई तो किसानों ने 8 अक्टूबर, 1921 को ठिकाने को नोटिस दिया कि वे एक सप्ताह में कूंता कर दें अन्यथा फसल काट ली जायेगी। ठिकाने ने उत्तर दिया कि पुराना बकाया लगान मय लागतों के दिये बिना कूंता नहीं किया जाएगा। किसानों ने फसल काट ली। ठिकाने ने अपने छोटे-छोटे जागीरदारों को एकत्र कर किसानों को भयभीत करने का प्रयत्न किया परन्तु ठिकाने को इसमें सफलता नहीं मिली।

समझौता हो गया। 35 लागतें माफ कर दी गई। ठिकाने के जुल्मी कामदार हटा दिये गये। किसानों पर चलाये गये मुकदमें उठा लिये गये। जिन किसानों की जमीन दूसरों के कब्जे में थी, वह उन्हें पुनः सौंप दी गयी। तीन साल के भीतर बिजोलिया जागीर में जमीन का बन्दोबस्त कर लगान जिन्स की बजाय नकदी में परिणित करने का आश्वासन दे दिया गया। यह किसानों की एक महान् विजय थी।

दुर्भाग्य से समझौता ठिकाने की बदनियती के कारण टिकाऊ नहीं रह पाया। इसी बीच बेगूं किसान आन्दोलन के सिलसिले में पथिकजी पकड़ लिये गये और उन्हें पांच वर्ष की सजा दी गयी। साधु सीतारामदास जी खादी कार्य में लग गये और मध्यप्रदेश चले गये। अब बिजोलिया के किसान आन्दोलन की सारी जिम्मेदारी वर्मा जी पर आ पड़ी।

सन् 1923 में बिजोलिया के राव का विवाह हुआ। इस विवाह में ठिकाना किसानों से बेगार लेना चाहता था। अतः ठिकाने और किसानों में फिर ठन गई। बिजोलिया में सन् 1923 से 1926 तक लगातार अतिवृष्टि तथा अनावृष्टि से फसलें खराब हो गई। इनसे किसानों की आर्थिक स्थिति अत्यधिक बिगड़ गई। इसके बावजूद ठिकाने ने लगान व लागबाग वसूल करना प्रारम्भ कर दिया। सन् 1926 में ठिकाने में बन्दोबस्त हुआ। उसमें लगान की दरें ऊंची नियत की गई। जनवरी 1927 में मेवाड़ के बन्दोबस्त अधिकारी श्री ट्रेन्च बिजोलिया आये। किसानों ने अपनी शिकायतें उनके सामने रखी। ट्रेन्च ने किसी प्रकार पंचायत और ठिकाने में समझौता तो करा दिया, पर इसके थोड़े समय बाद ही मार्च, 1927 में वर्माजी को जेल में रख दिया। उन्हे जमानत देने पर 12 दिन बाद रिहा किया गया। यह जमानत किसी बहाने जब्त कर ली गई। सरकार ने वर्मा जी से दुबारा जमानत मांगी। वह उन्होंने नहीं दी। फलतः वे 27 मई, 1918 को पुनः गिरफ्तार कर लिये गये। इन्हीं दिनों पथिकजी कारावास की अवधि समाप्त कर उदयपुर जेल से रिहा हुये। उन्हें मेवाड़ से निर्वासित कर दिया गया, पर वे बिजोलिपा की सीमा पर ग्वालियर राज्य के कुमरिया गांव में रहकर बिजोलिया पंचायत का मार्ग-दर्शन करते रहे। बिजोलिया के किसान नये बन्दोबस्त में निर्धारित लगान की ऊँची दरों से क्षुब्ध थे।

पथिकजी के जेल से रिहा होने के पूर्व ही किसान पंचायत यह निर्णय कर चुकी थी कि लगान की ऊंची दरें निर्धारित करने के विरोध में किसान माल की जमीन का इस्तीफा दे देंगे। पथिकजी ने किसानों को समझाया कि उन्हें यह कदम तभी उठाना चाहिये जबकि उन्हें यह पक्का विश्वास हो जाय कि उनकी इस्तीफा दी हुई जमीन को और लोग नहीं उठायेंगे। किसानों को भरोसा था कि किसान पंचायत के निर्णय के विरुद्ध कोई व्यक्ति ऐसी भूमि को उठाने का साहस नहीं करेगा। अतः किसानों ने मई सन् 1927 मेंअपनी-अपनी जमीनों के इस्तीफे दे दिये। ठिकाने ने इन जमीनों को नीलाम किया। किसानों के दुर्भाग्य से जमीनों को उठाने वाले मिल गये। किसान मात खा गये। इस समय पथिकजी और वर्माजी के आपसी सम्बन्ध बिगड़ चुके थे। इसी प्रकार पथिकजी और राजस्थान सेवा संघ के मंत्री श्री राम नारायण चौधरी के बीच भी गहरा मतभेद हो गया था। परिणाम यह हुआ कि राजस्थान सेवा संघ छिन्न-भिन्न हो गया।

किसानों द्वारा अपनी जमीनों के इस्तीफे देने के प्रश्न को लेकर पथिकजी पर आक्षेप किये जाने लगे। वे इस आन्दोलन से उदासीन हो गये। किसानों ने अब श्री माणिक्यलाल वर्मा को अपना प्रधान कार्यकर्ता स्वीकार किया। वर्माजी सेठ जमनालाल बजाज तथा श्री हरिभाऊ उपाध्याय से मिले और प्रार्थना की कि वे बिजोलिया के किसानों का नेतृत्व

स्वीकार करें। सेठ जी ने वर्माजी की प्रार्थना इस शर्त पर स्वीकार की कि पथिकजी इस आन्दोलन से अलग रहेंगे। पथिकजी ने किसान पंचायत के नेतृत्व से इस्तीफा दे दिया। श्री रामनारायण चौधरी भी आन्दोलन से अलग हो गये। अब सेठजी इस आन्दोलन के सर्वेसर्वा बना दिये गये। सेठजी ने आन्दोलन के संचालन का भार श्री उपाध्याय को सौंपा किसान अपनी-अपनी इस्तीफाशुदा जमीन को वापिस प्राप्त करने के लिये व्यग्र थे। उपाध्यायजी ने ट्रेंच से मिल कर एक समझौता किया, जिसके अनुसार ट्रेंच ने वादा किया कि किसानो की जमीनो को नये बापीदारों को समझा कर उक्त जमीनें वापिस पुराने किसानो को दिलाने का प्रयत्न करेंगे। परन्तु ट्रेंच के इस आश्वासन को कार्यरूप में परिणित नही किया गया। अतः वर्माजी के नेतृत्व में किसानों ने निश्चय किया कि वे अपनी-अपनी जमीने वापिस प्राप्त करने के लिये सत्याग्रह करेंगे।

अक्षय तृतीया सन् 1931 को प्रातःकाल 6·00 बजे चार हजार किसानों ने अपनी इस्तीफाशुदा जमीनों पर हल चलाना आरम्भ किया। ठिकाने के कर्मचारी, सेना, पुलिस के सिपाही तथा जमीनों के नये मालिक किसानों पर टूट पड़े। किसानों ने शान्ति के साथ मार सहन की। उसी दिन प्रातः 4·00 बजे वर्माजी गिरफ्तार कर लिये गये थे। दूसरे दिन 200 किसान भी पकड़ लिये गये, जिनमें से 40 प्रमुख किसानों को छोड़ कर अन्यों को थोड़े समय बाद रिहा कर दिया गया। उन 40 किसानों पर मुकदमा चलाया गया। वर्माजी को 6 माह का कठोर कारावास दिया गया तथा किसानों को तीन-तीन माह का। राज्य ने किसानो के सत्याग्रह का मुकाबला करने के लिये बिजोलिया में सेना और पुलिस तैनात कर दी। इस समय उपाध्यायजी के मेवाड़ प्रवेश पर प्रतिबन्ध था। अतः उन्होंने सर्वश्री दुर्गाप्रसाद चौधरी, पं० लादूराम, अचलेश्वर प्रसाद शर्मा, श्रीमती रमादेवी आदि को बिजोलिया भेजा। पर उन्हें बिजोलिया से निर्वासित कर दिया गया। श्री प्यारचन्द बिश्नोई एक व्यापारी का वेश धारण कर बिजोलिया पहुँचे। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। इस बीच किसान सत्याग्रह करते रहे और गिरफ्तार होते रहे।

उपाध्यायजी ने मेवाड़ राज्य के अधिकारियों को किसानों की जमीनें वापिस लौटाने के सम्बन्ध में कई पत्र लिखे, परन्तु उनके प्रयत्न निष्फल रहे। उपाध्यायजी की प्रार्थना पर अखिल भारतीय देशी राज्य लोक-परिषद ने यह मसला अपने हाथ में लिया। उसने एक जांच समिति की नियुक्ति की। उपाध्यायजी ने महात्मा गांधी को भी बिजोलिया में हो रहे दमन से अवगत कराया। महात्मा गांधी की सलाह पर मालवीयजी ने मेवाड़ के प्रधानमंत्री सर सुखदेव प्रसाद को इस सम्बन्ध में एक पत्र लिखा। बिजोलिया का मसला अब अखिल भारतीय रूप धारण कर चुका था।

सर सुखदेव ने स्थिति की गम्भीरता को समझते हुए सेठ जमनालाल बजाज को वार्ता के लिए उदयपुर आमन्त्रित किया। फलतः लोक-परिषद की जांच समिति ने अपनी कार्यवाही स्थगित कर दी। सेठजी ता. 20-7-31 को उदयपुर पहुंचे और महाराणा तथा सर सुखदेव प्रसाद से मिले। इस भेंट के फलस्वरूप एक समझौता हुआ जिसके अनुसार सरकार ने आश्वासन दिया कि माल की जमीनें धीरे धीरे पुराने बापीदारों को लौटा दी जायेंगी, [illegible] 1922 के समझौते का पालन किया जायगा। समझौते के फलस्वरूप सत्याग्रही जेल से रिहा कर दिए गए, पर जमीनों की वापसी के सम्बन्ध में कोई ठोस कार्यवाही नहीं हुई। इस बात पर [illegible] किसानों का [illegible] लेकर सर सुखदेव से मिलने उदयपुर गए। सर सुखदेव ने [illegible] को गिरफ्तार

करवा दिया और कुम्भलगढ़ जेल में नजरबन्द कर दिया। मेवाड़ सरकार ने डेढ़ वर्ष बाद नवम्बर, 1933 में वर्माजी को रिहा कर दिया, पर साथ ही उन्हें मेवाड़ से निर्वासित कर दिया।

बिजोलिया आन्दोलन का पटाक्षेप सन् 1941 में हुआ जबकि मेवाड़ में सर टी. विजय राघवाचार्य प्रधानमंत्री बने। इस समय मेवाड़ प्रजामण्डल से पाबन्दी उठायी जा चुकी थी और वर्माजी आदि प्रजामण्डल के नेता मुक्त किये जा चुके थे। राघवाचार्य के आदेश से तत्कालीन राजस्वमंत्री डॉ. मोहनसिंह मेहता बिजोलिया गए और वर्माजी और अन्य किसान नेताओं से बात-चीत कर किसानों की समस्या का समाधान करवाया। किसानों को अपनी जमीनें वापिस मिल गयीं। वर्माजी के जीवन की यह प्रथम बड़ी सफलता थी। इस लम्बे संघर्ष में बिजोलिया के किसानों को बड़ी-बड़ी कुर्बानियां देनी पड़ीं। सार्वजनिक कार्यकर्ताओं को जेल के अलावा अनेक शारीरिक यातनाएँ भोगनी पड़ीं। देश के इतिहास में यह अपने ढंग का अनूठा किसान आन्दोलन था जो राज्य की सीमायें लाँघ कर पड़ोसी राज्यों में भी फैला। इस आन्दोलन ने राजस्थान की रियासतों को एक नयी चेतना प्रदान की। सन् 1938 में मेवाड़, शाहपुरा, बून्दी आदि रियासतों में प्रजामण्डलों की स्थापना हुई, उनकी पृष्ठ-भूमि में यही किसान आन्दोलन था। इस आन्दोलन में वर्माजी जैसे तेजस्वी नेता को जन्म दिया जो आगे जाकर राजस्थान के राजनीतिक आन्दोलन के एक प्रमुख कर्णधार बने।

(2) अन्य किसान आन्दोलन

बिजोलिया के किसान आन्दोलन के दूरगामी परिणाम हुए। राजस्थान सेवा संघ के नेतृत्व में बिजोलिया की भाँति मेवाड़ के अन्य इलाकों में भी किसान पंचायतों की स्थापना हुई। इन पंचायतों का सम्बन्धित क्षेत्रों में इतना प्रभाव बढ़ गया कि उनके निर्णय को जनता सर्वोपरि समझने लगी। एक प्रकार से ये पंचायतें अपने-अपने क्षेत्र में समानान्तर सरकारें बन गयीं। बिजोलिया आन्दोलन की लपटें पड़ौस की जागीर बेगूं में भी पहुंची। बेगूं के किसानों की समस्याएँ वही थीं, जो बिजोलिया के किसानों की। बेगूं के किसान सन् 1921 में मेनाल नामक स्थान पर एकत्र हुए। उन्होंने निश्चय किया कि बिजोलिया की भाँति बेगूं में भी लागबाग, बेगार और ऊँचे लगान के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ा जाये और पथिक जी को आन्दोलन का नेतृत्व करने के लिए आमंत्रित किया जाय। पथिकजी ने इस आन्दोलन का भार राजस्थान सेवा संघ के मंत्री श्री रामनारायण चौधरी पर डाला।

श्री चौधरी के नेतृत्व में किसानों ने निर्णय किया कि फसल का कूंता नहीं कराया जाय। भूमि का बन्दोबस्त होने के बाद जो लगान निर्धारित किया जाय, वही दिया जाय। लागतें और बेगार नहीं दी जाय और सरकारी कार्यालयों और अदालतों का बहिष्कार किया जाय। बिजोलिया के बाद बेगूं में भी किसान आन्दोलन की शुरुआत होने से न केवल मेवाड़ के जागीरदार वरन् मेवाड़ सरकार और अंग्रेजी हुकुमत भी चौंक उठी। इन्हीं दिनों महाराणा फतेह सिंह को प्रशासन सम्बन्धी कई अधिकार महाराज कुमार भूपाल सिंह को देने पड़े। महाराज कुमार अंग्रेजों की मुट्ठी में थे। इधर बेगूं के आस-पास के सभी जागीरदार रावट्या के जागीरदार के नेतृत्व में संगठित हो गए। उन्होंने मेवाड़ सरकार की सहायता से आन्दोलन को दबाने का निश्चय किया। दमन-चक्र शुरू हुआ। गाँव-गाँव में छोटे और बड़े सभी जागीरदारों ने किसानों की खड़ी फसल को नष्ट करने, परम्परा के अनुसार किसान को जंगल से घास और लकड़ी न काटने देने और मवेशियों

को चरनोट में न चरने देने आदि दमनपूर्ण कार्यवाहियाँ शुरू कर दीं। कई जगह न केवल किसानों को बल्कि उनकी पत्नियों को भी पिटवाया गया और उनको बेइज्जती की गई। किसानों की सभाओं को भंग करने के प्रयत्न किये गए। इस दमन के फलस्वरूप बेगूं के किसानों ने बिजोलिया के किसानों की भांति जमीन को पड़त रख दिया। लगातार दो वर्षों के संघर्ष के बाद बेगूं ठाकुर रावत अनूप सिंह को झुकना पड़ा। उन्होंने किसानों की मांगों को स्वीकार करते हुए उनसे समझौता कर लिया। परन्तु मेवाड़ सरकार और रेजिडेण्ट को यह बात नहीं भायी। उन्होंने राजस्थान सेवा संघ और रावल अनूप सिंह के बीच हुए समझौते को 'बोल्शेविक' फैसले की संज्ञा दी। रावल अनूप सिंह को उदयपुर में नजरबन्द कर दिया एवं ठिकाने पर मुंसरमात बैठा दी। भ्रष्टाचार और दमन के लिये मशहूर लाला अमृतलाल को बेगूं का मुंसरिम नियुक्त कर दिया।

सरकार ने बन्दोबस्त आयुक्त श्री ट्रेंच को बेगूं के किसानों की शिकायतों की जाँच करने भेजा। मेवाड़ सरकार ने आज्ञा निकाली कि ट्रेंच कमिशन के सामने किसान किसी भी बाहरी आदमी को अपने प्रतिनिधि के रूप में नहीं भेज सकेंगे। ऐसा इसलिए किया गया कि किसान पंचायत कहीं राजस्थान सेवा संघ से सहायता प्राप्त न कर ले। किसानों को राज्य की यह शर्त स्वीकार नहीं हुई। उन्होंने आयोग का बहिष्कार कर दिया। ट्रेंच ने एक तरफा निर्णय दे दिया। उसने अपने निर्णय में पथिकजी पर किसानों में विरोध की भावना फैलाने और समानान्तर सरकार स्थापित करने का आरोप लगाया। ट्रेंच ने केवल दो-चार मामूली लागतों को छोड़कर शेष सभी लागतें और बेगार को उचित ठहराया। ट्रेंच के फैसला देते ही ठिकाने के मुंसरिम लाला अमृतलाल ने सरकारी सेना की सहायता से लगान वसूल करना शुरू किया। बेगूं के किसान ट्रेंच के निर्णय पर विचार करने के लिए गोविन्दपुरा में एकत्र हुए। लगातार पांच माह तक किसान पंचों और ठिकाने के मुंसरिम के बीच समझौता-वार्ता चलती रही, पर समझौता नहीं हो सका। ट्रेंच तथा लाला अमृतलाल ने गोविन्दपुरा में एकत्र किसानों को तितर-बितर करने की आज्ञा दी, पर किसान डटे रहे। 13 जुलाई 1923 को किसानों को सेना ने घेर लिया। सेना ने गोलियां चला दीं, जिनसे रूपाजी और कृपाजी नामक दो किसान शहीद हो गए। सिपाही औरतों पर भी टूट पड़े। उन्हें नंगा कर दिया और कई प्रकार से अपमानित किया। इस काण्ड के बाद 500 से अधिक किसानों को गिरफ्तार कर बेगूं जेल में बन्द कर दिया गया। इस काण्ड की भारत भर के समाचार-पत्रों ने घोर निन्दा की। "तरुण राजस्थान" ने तो महाराणा फतेहसिंह से मांग की कि वे उनके उत्तराधिकारी महाराज कुमार भूपाल सिंह से शासनाधिकार वापिस छीन लें। महाराणा स्वयं इस काण्ड से दुःखी थे। उन्होंने मेवाड़ के दीवान प्रभासचन्द्र चटर्जी की ड्योढ़ी बन्द कर दी। उन परिस्थितियों में मेवाड़ के शासन के प्रति नाराजगी दिखाने के लिये महाराणा इससे अधिक कुछ नहीं कर सकते थे।

मेवाड़ सरकार ने एक ओर तो 'प्रताप', 'राजस्थान केसरी', 'नवीन राजस्थान' आदि पत्रों के मेवाड़ प्रवेश पर पाबन्दी लगा दी तथा दूसरी ओर उसने एक विज्ञप्ति प्रकाशित की जिसमें कहा गया कि "किसान पंचायत सोवियत ढंग की बोल्शेविक संस्था है और यह किसानों को लगान देने से मना करती है। ट्रेंच कमीशन किसानों से लगान वसूल करने गया तो किसानों ने [illegible] किया। इस [illegible] व्यवस्था के लिए सेना को [illegible] प्रयोग करना पड़ा।"

सेना के अत्याचारों से किसानों का मनोबल गिरता देख पथिक जी ने स्वयं बेगूं आन्दोलन का नेतृत्व सम्भाला। आन्दोलन पुनः उभर आया। किसानों ने लगान और बेगार देना बन्द कर दिया। जो किसान ठिकाने से भयभीत होकर लगान और बेगार देते थे उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाने लगा। इस प्रकार किसानों का असहयोग आन्दोलन पूर्णता को पहुँच गया। इससे मेवाड़ सरकार और ठिकाने के मुंसरिम लाला अमृतलाल तिलमिला उठे। पथिकजी 10 सितम्बर, 1923 को गिरफ्तार कर लिए गए। उन्हें बेगूं ले जाया गया और उनके पैरों में बेड़ियां डाल दी गई।

बेगूं ठिकाने की ओर से पथिक जी पर राजद्रोह, वर्जित साहित्य रखना और सरकारी आदेश भग करना आदि संगीन आरोप लगाए गए। इन आरोपों की सुनवाई के लिए सरकार ने तीन सदस्यों का एक आयोग नियुक्त किया। इस आयोग ने सितम्बर, 1923 में मामले की सुनवाई शुरू की और फरवरी, 1925 मे अपना निर्णय दिया। इस निर्णय के अनुसार पथिक जी केवल वर्जित साहित्य रखने के अपराधी माने गए। उन्हें एक वर्ष की कैद और एक हजार रुपये जुर्माने की सजा दी गई। पथिक जी ने इस निर्णय के विरुद्ध मेवाड़ हाईकोर्ट (महेन्द्राज सभा) में अपील प्रस्तुत की। यह अपील 8 न्यायाधीशों की बेंच ने सुनी। हाइकोर्ट ने आयोग के निर्णय से सहमति प्रकट की, पर महाराज कुमार और ब्रिटिश सरकार को यह निर्णय नहीं भाया। उन्होंने सात उच्चाधिकारियों का एक नया आयोग नियुक्त किया, जिसमें राज्य के मन्त्री, इन्सपेक्टर जनरल ऑफ पुलिस, जिला हाकिम आदि शामिल थे। उच्च न्यायालय के निर्णय को अस्वीकार कर इस प्रकार का आयोग नियुक्त करना न्याय का मखौल करना था। इस आयोग ने अपने आकाओं की इच्छानुसार पथिकजी के विरुद्ध आरोपों को सही मानते हुए उनको पांच वर्ष की सजा दी। एक लम्बे समय तक जेल में रहने के बाद पथिक जी 27 अप्रेल, 1927 को रिहा किये गये।

सन् 1926 में पं. नयनूराम शर्मा के नेतृत्व में बून्दी के किसानों ने बेगार, लागबाग और लगान की ऊंची दरों के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ा। स्थान-स्थान पर सभाएँ और सम्मेलन हुए। स्त्रियों ने भी इस आन्दोलन में भाग लिया। राज्य ने दमन का सहारा लिया। डाबी के किसानों के सम्मेलन पर पुलिस ने गोली चला दी, जिनसे नानक जी भील घटनास्थल पर ही शहीद हो गए। आज भी किसान उस शहीद को लोक-गीतों के माध्यम से श्रद्धापूर्वक स्मरण करते रहते हैं।

अलवर राज्य में जन जागृति की शुरुआत ही किसान आन्दोलन से हुई। राज्य में जंगली सूअरों को नाज खिला कर रोंधों मे पाला जाता था। ये सूअर किसानों की खड़ी फसलों को बरबाद कर देते थे। इनके मारने पर राज्य ने पाबन्दी लगा रखी थी। सूअरों के उत्पात से दुखी होकर सन् 1921 में राज्य के किसानों ने आन्दोलन चलाया। महाराजा को झुकना पड़ा। रोंधों को उठा दिया गया और किसानों को सूअर मारने की इजाजत दे दी गयी।

किसानों का एक जबरदस्त आन्दोलन उक्त राज्य मे सन् 1925 में हुआ। तारीख 24 मई, 1925 को राज्य के किसानों ने लगान वृद्धि के विरोध मे नीमूचाना गाँव में सभा का आयोजन किया। राज्य की सेना ने गाँव को घेर कर मशीनगनों से गोलियाँ चलाई. जिसमे सैकड़ों स्त्री-पुरुष और बच्चे मारे गए। सेना ने गाँव में आग लगा दी,

जिससे किसानों की झोपड़ियां और पशु जल गए। इस काण्ड से सारे देश में सनसनी फैल गई। महात्मा गांधी ने इस काण्ड को जलियांवाला बाग काण्ड से भी अधिक वीभत्स बताया और उसे 'Dyrism double distilled' की संज्ञा दी।

वर्तमान शताब्दी के तीसरे दशक में राज्य के सीकर, तोरावाटी और उदयपुरवाटी के किसानों ने अपना एक संगठन बनाया, जिसने श्री हरलाल सिंह के नेतृत्व में जागीरदारों के जुल्मों के विरुद्ध एक आन्दोलन छेड़ा। इस आन्दोलन में कई किसान मारे गए, और अनेक कार्यकर्ता गिरफ्तार हुए।

———

7

जन-जातियों के आन्दोलन

(1) भीलों के आन्दोलन

राजस्थान में भील, मीणा, ग्रासिये आदि जन-जातियां प्राचीनकाल से निवास करती आयी हैं। वस्तुतः ये जातियां यहाँ की मूल निवासी थीं। राजपूतों के राज्य स्थापित होने के पूर्व राजस्थान के भागों में इन जन-जातियों के छोटे-बड़े अनेक जनपद थे। मेवाड़ राज्य की रक्षा में वहाँ के भीलों ने सदैव महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। यही कारण था कि मेवाड़ के राजचिह्न में राजपूत के साथ एक धनुर्धारी भील का चित्र भी अंकित था। इसी तरह जयपुर में राजा के राज्याभिषेक के समय मीणा लोग ही अपने खून से राज-तिलक करते थे।

समय के फेर से ये बहादुर जातियां अन्य जातियों से अलग-थलग पड़ गयीं। राष्ट्र की मूलधारा से उनका सम्पर्क टूट गया। वे सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से एकदम पिछड़ गयीं। उन्हें वनवासी, आदिवासी और कहीं-कहीं तो जुरायम पेशा जातियों की संज्ञा तक दी जाने लगी। ब्रिटिश काल में देश के अन्य भागों की तरह राजस्थान में भी सरकार और साहूकार ने समानरूप से इन जातियों का शोषण किया। पर उस काल में राष्ट्रीय विचारधारा से प्रभावित कुछ ऐसे जन-सेवक पैदा हुए, जिन्होंने इन जातियों में जागृति का शंख फूंका और इन्हें अपने अधिकारों का भान कराया। ऐसे जन-सेवकों में प्रमुख थे—स्वनामधन्य "गुरुगोविन्द"।

श्री गोविन्द का जन्म सन् 1858 में डूंगरपुर राज्य के बांसिया ग्राम में एक वणजारे के घर में हुआ था। उन्होंने एक गाँव के पुजारी की सहायता से अक्षरज्ञान प्राप्त किया। वे स्वामी दयानन्द सरस्वती की प्रेरणा से युवावस्था में ही जन-जातियों की सेवा में जुट गये। उन्होंने आदिवासियों की सेवा हेतु सन् 1883 में सम्प सभा की स्थापना की। इस संस्था के माध्यम से उन्होंने मेवाड़, डूंगरपुर, ईडर, गुजरात, विजयनगर और मालवा के भील और ग्रासियों को संगठित किया। उन्होंने एक ओर उक्त जातियों में व्याप्त सामाजिक बुराइयों और कुरीतियों को दूर कर करने का प्रयत्न किया तो दूसरी ओर उनको अपने मूलभूत अधिकारों का अहसास कराया। वे शीघ्र ही इन जातियों में लोकप्रिय हो गये। लोग उन्हें श्रद्धा से गुरुगोविन्द के नाम से सम्बोधित करने लगे।

गुरुगोविन्द ने सम्प सभा का प्रथम अधिवेशन सन् 1903 में गुजरात में स्थित मानागढ़ की पहाड़ी पर किया। इस अधिवेशन में गुरुगोविन्द के प्रवचनों से प्रभावित होकर हजारों भील-ग्रासियों ने शराब छोड़ने, बच्चों को पढ़ाने और आपस के झगड़े अपनी पंचायत में ही निपटाने की शपथ ली। गुरुगोविन्द ने उन्हें बैठ-बेगार और गैरवाजिब लागतें

नहीं देने के लिये आह्वान किया। इस प्रकार हर वर्ष आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को मानागढ़ की पहाड़ी पर सम्प सभा का अधिवेशन होने लगा। भील आदिवासियों में दिन-प्रति-दिन बढ़ती हुई जागृति से आस-पास की रियासतों के शासक सहम उठे। उन्हें भय हो गया कि ये जन-जातियां सुसंगठित होकर भील राज्य की स्थापना करेंगी। उन्होंने ब्रिटिश सरकार से प्रार्थना की कि भीलों के इस संगठन को सख्ती से दबा दिया जाये। हर वर्ष की भांति सन् 1888 की आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को मानागढ़ की पहाड़ी पर सम्प-सभा का विराट अधिवेशन हुआ, जिसमें भारी संख्या में भील स्त्री-पुरुष शामिल हुए। मानागढ़ की पहाड़ी चारों ओर से ब्रिटिश सेना द्वारा घेर ली गयी। उसने भीड़ पर गोलियों की बोछार कर दी। फलस्वरूप 1500 आदिवासी घटनास्थल पर ही शहीद हो गये और हजारों घायल हो गए। गुरुगोविन्द और उनकी पत्नी को गिरफ्तार कर लिया गया। गुरुगोविन्द को अदालत द्वारा फांसी की सजा दी गयी। मगर भीलों में प्रतिक्रिया होने के डर से सरकार ने उनकी यह सजा 20 वर्ष के कारावास में बदल दी। पर वे 10 वर्ष बाद ही रिहा कर दिये गये। गुरुगोविन्द ने अपना शेष जीवन गुजरात के कम्बोई नामक स्थान पर बिताया। सवासौ से अधिक वर्ष बीत जाने के बावजूद आज भी भील लोग गुरुगोविन्द की याद में मानागढ़ की पहाड़ी पर हर वर्ष आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को एकत्र होकर उन्हें अपनी श्रद्धाञ्जली अर्पित करते हैं।

राजस्थान के आदिवासियों में गुरुगोविन्द के बाद जिनको सबसे अधिक स्मरण किया जाता है, वे हैं स्व. श्री मोतीलाल तेजावत। सन् 1886 में मेवाड़ के आदिवासी क्षेत्र फलासिया के कोलियारी ग्राम में एक ओसवाल परिवार में उत्पन्न श्री तेजावत उस जमाने के मुताबिक थोड़ा बहुत पढ़-लिखकर झाड़ोल ठिकाने के कामदार बन गये। परन्तु थोड़े ही समय में ठिकाने और सरकार द्वारा आदिवासियों पर ढाये जाने वाले जुल्मों से उद्वेलित होकर उन्होंने ठिकाने की नौकरी को तिलाञ्जलि दे दी। वे अब आदिवासियों की सेवा में तल्लीन हो गये। उन्होंने सन् 1921 में झाड़ोल, कोटड़ा, सादड़ी आदि क्षेत्रों के भीलों को जागीरदारों द्वारा ली जानेवाले बैठ-बेगार और लागबागों के प्रश्न को लेकर संगठित किया। धीरे-धीरे ये आन्दोलन सिरोही, दांता, पालनपुर, ईडर, विजयनगर आदि राज्यों में फैल गया। श्री तेजावत ने बैठ-बेगार और लागबाग समाप्त करने सम्बन्धी मांगों को लेकर आस-पास की रियासतों के भीलों का एक विशाल सम्मेलन विजय नगर

'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दौरान पुनः जेल में बन्द कर दिया गया। सन् 1945 में उन्हें जेल से रिहा किया गया, पर फिर उनके उदयपुर से बाहर जाने पर पाबन्दी लगा दी गयी, जो देश के आजाद होने तक चालू रही। उन्होंने अपना शेष जीवन सामाजिक सेवाओं में गुजारा। उनका देहान्त 5 दिसम्बर सन् 1963 को हुआ।

भील आदिवासियों के लिये देश की आजादी के पूर्व अन्य जिन जन-सेवकों ने महत्वपूर्ण कार्य किया, उनमें प्रमुख थे सर्वश्री माणिक्यलाल वर्मा, भोगीलाल पांड्या, मामा बालेश्वर दयाल, बलवन्तसिंह मेहता, हरिदेव जोशी एवं गौरीशंकर उपाध्याय। उन्होंने भील क्षेत्रों में जगह-जगह शिक्षण संस्थायें, प्रौढ़ शालायें और होस्टल आदि स्थापित कर भील और आदिवासियों में नये जीवन का संचार किया।

(2) मीणों के आन्दोलन

भूतपूर्व जयपुर राज्य में बसनेवाली मीणा जाति किसी जमाने में राज्य के कई भागों में शासन करती थी। मीणे जन्म-जात सैनिक थे और अपने आपको क्षत्रीय मानते थे। खोहगंग, मांची, गेटोर, झोटवाड़ा, आमेर, भांडारेज, नरेठ, शोभनपुर आदि क्षेत्रों में सैकड़ों वर्षों तक मीणों के जन-पद रहे। ये जनपद इतने छोटे थे कि कभी भी कोई बड़ी शक्ति इन पर प्रहार करती तो ये ताश के पत्तों की तरह ढह जाते। पर शताब्दियों तक इस ओर किसी हमलावार का ध्यान नहीं गया। यह इलाका रेगिस्तान का भाग था। अतः शायद किसी भी महत्वाकांक्षी राजा ने मुट्ठी भर बाजरे के लिये इस बहादुर कौम को छेड़ना उचित नहीं समझा। पर यह स्थिति सदैव के लिये चलने वाली नहीं थी।

टॉड के अनुसार 10वीं शताब्दी के शुरू में नरवर (ग्वालियर) के शासक सोढ़ाराव की मृत्यु हो गयी। उसके स्थान पर उसका छोटा भाई नरवर का शासक बन गया। फलतः सोढाराव की पत्नी अपने शिशु पुत्र दुल्हाराव को लेकर नरवर से प्रस्थान कर गयी और खोह-गंग के मीणा शासक आलनसिंह के यहाँ शरण ली। आलन सिंह को दुल्हाराव के खानदान का पता चला तो उसने दुल्हाराव को अपना भाई और उसकी माँ को अपनी बहन मान लिया।[1] जब दुल्हाराव सयाना हुआ तो उसके मन में अपना स्वयं का राज्य स्थापित करने की आकांक्षा प्रबल हुई। उसने धीरे-धीरे अपना संगठन बनाया। एक दिन आलन सिंह और उसके सहयोगी मीणें दीपावली के अवसर पर एक तालाब के किनारे पितरों को जल तर्पण कर रहे थे कि दुल्हाराव एवं उसके साथी उन पर टूट पड़े। आलन सिंह और उसके 1500 सहयोगी मारे गये। मीणों की स्त्रियाँ अपने पतियों के साथ सती हो गयीं। आज भी इनकी छतरियाँ और देवलें खोहगंग के निकट पायी जाती हैं। कुछ भी हो दुल्हाराव ने खोहगंग पर अधिकार कर ढूंढ़ार में कछवाह राज्य की नीव डाली। इसके बाद दुल्हाराव ने माची जनपद के शासक राव नाथू मीणा को हराकर माची को अपने राज्य में मिलाया।[2] रहा सहा कार्य दुल्हाराव के उत्तराधिकारी कोकिल और मेंकुल ने पूरा कर दिया, जिन्होंने ढूंढ़ार के गेटोर, आमेर, झोटवाड़ा आदि सभी मीणा जनपदों को समाप्त कर कछवाहा राज्य का विस्तार किया।[3]

---

1. टॉड "ए. ए. ए. ऑफ राजस्थान" पृ. 281।
2. टॉड ए. ए. ए. ऑफ राजस्थान (अ.) पृ. 282।
3. ,, ,, ,, पृ. 282।

ढूंढ़ार में मीणों का शासन समाप्त हो गया। उनके स्थान पर कछवाहा शासक बन गये। पर एक लम्बे समय तक मीणों के एक बड़े वर्ग को यह स्थिति स्वीकार नहीं हुई। वे छापामार पद्धति से राज्य की शासन व्यवस्था को चुनौती देते रहे। कछवाहा शासकों ने उन्हें तुष्ट करने के लिये खेती करने के लिये कृषि योग्य भूमि आवंठित की। फलत: अधिकांश मीणे खेती करने लग गये। वे जमींदार मीणों के नाम से जाने गये। राज्य ने मीणों के उस वर्ग से, जो अब भी लड़ाई का रास्ता अख्तियार किये हुए था, समझौता कर उन्हें राज्य की शान्ति-व्यवस्था की जिम्मेदारी सौंपी। ये मीणें चौकीदारी करते और एवज में गांव वालों से चौथ वसूल करते। ये मीणें 'चौकीदार-मीणा' कहलाये। यहीं से मीणों के पतन की शुरूआत हुई।

अब राज्य में हर डकैती और चोरी के लिये चौकीदार मीणों को जिम्मेदार ठहराया जाने लगा। यही नहीं, किसी चोरी का माल बरामद न होने की हालत में उक्त माल की कीमत कानून द्वादरसी के अन्तर्गत मीणों से वसूल की जाने लगी। मीणे अपने ऊपर डाले गये इस दण्ड की क्षति-पूर्ति चोरी और डकैतियों से करते। राज्य के कई जागीरदार भी चोरियों और डकैतियों में मीणों का इस्तेमाल करते। इससे मीणों में अपराध की प्रवृत्ति को और बढ़ावा मिला। राज्य में चोरी, नकबजनी और लूटमार की वारदातें बढ़ गयी।

भारत सरकार ने सन् 1924 में क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट लागू किया। जयपुर राज्य में भी उक्त कानून की छाया में मीणों को जुरायम पेशा मान कर हर मीणा परिवार के बालिग स्त्री-पुरुष ही नहीं, 12 वर्ष से बड़े बच्चों का भी निकटस्थ पुलिस थाने में नाम दर्ज करवाना और दैनिक हाजरी देना आवश्यक कर दिया। इस प्रकार शताब्दियों से स्वच्छन्द विचरने वाली बहादुर मीणा जाति साधारण मानव अधिकारों से भी वंचित कर दी गयी। सरकार की इस कार्यवाही का विरोध करने के लिये उसी वर्ष सर्वश्री छोटू राम झरवाल, महादेवराम पबड़ी, जवाहर राम, मानोलाल आदि मीणों ने "मीणा-जाति-सुधार कमेटी" के नाम से एक संस्था स्थापित की। पर कुछ वर्षों बाद इस संस्था का लोप हो गया। इसी बीच सन् 1930 में जयपुर राज्य ने अपना स्वयं का जुरायम-पेशा-कानून रियासत में बाकायदा लागू कर दिया। पुलिस ने उक्त कानून के अन्तर्गत हाजरी आदि के प्रावधानों का कठोरता से पालन करना शुरू कर दिया। इससे मीणों में असंतोष बढ़ गया। सन् 1933 में मीणा क्षत्रीय महासभा की स्थापना हुई। उक्त सभा ने जयपुर सरकार से जुरायम-पेशा कानून रद्द करने की मांग की। राज्य ने उनकी यह मांग न केवल अस्वीकार कर दी वरन् साम, दाम, दण्ड और भेद से संस्था का ही विघटन करवा दिया।

अप्रैल 1944 में जैन मुनी मगनसागरजी की अध्यक्षता में नीमकाथाना में मीणों

तारीख 10 अगस्त को राज्य सरकार ने मीणों की यह माँग स्वीकार कर ली कि जिन मीणों ने पिछले 10 वर्षों में कोई अपराध नहीं किया है, उन्हें 'एम' पास दे दिया जायेगा। सरकार ने यह भी बात स्वीकार कर ली कि मीणा खालसा इलाके में चौकीदारी के लिये जिम्मेदार नहीं है। सरकार ने मीणों की अन्य माँगों पर विचार करने के लिये एक समिति नियुक्ति कर दी जिसमें मीणों के प्रतिनिधियों को भी शामिल किया गया। मीणा सुधार समिति को सरकार के निर्णय से संतोष नहीं हुआ। ता. 28 अक्टूबर को सरकार के रवैये पर विचार करने के लिये बागावास में मीणों का सम्मेलन हुआ, जिसमें जयपुर प्रजा मण्डल के नेता श्री हीरालाल शास्त्री, श्री टीकाराम पालीवाल आदि ने भी भाग लिया। सम्मेलन की अपील पर तत्काल ही 16 हजार मीणों ने चौकीदारी से इस्तीफे दे दिये। फलस्वरूप राज्य ने उनकी चौकीदारी की एवज में दी गयी कृषि भूमि को खालसा कर लिया। उसी दिन मीणों ने राज्य भर में मुक्ति दिवस मनाया।

मीणा सुधार समिति के सदस्य जयपुर राज्य के गृहमन्त्री से मिले और उन्हें सरकार द्वारा की गयी घोषणाओं और आश्वासनों का पालन करने की प्रार्थना की। पर इन मुलाकात का कोई ठोस नतीजा नहीं निकला। फलतः मीणा सुधार समिति के आह्वान पर राज्य के मीणों ने 6 जून, 1947 को जयपुर में विशाल प्रदर्शन किया, जिसमें "जरायम पेशा कानून" का पुतला और कानून की प्रतियाँ जलायी गयी। उसी दिन से मीणों ने पुलिस में हाजरी देना बन्द कर दिया। फलतः हजारों मीणों को जेल में यातनायें भुगतनी पड़ीं, पर पुलिस मीणों को हाजरी देने के लिये बाध्य करने में सर्वथा असफल रही। इसी बीच वृहद् राजस्थान बनाने की प्रक्रिया शुरू हो गयी। फलतः राज्य की ओर से जरायम पेशा कानून में सुधार करने की दिशा में ढ़िलाई आ गई। 1949 में वृहद् राजस्थान बन गया। जयपुर रियासत राजस्थान का अंग बन गई। पर मीणों के लगातार प्रयत्न करने के बावजूद भी सन् 1952 में जाकर राजस्थान की विभिन्न रियासतों के जरायम पेशा कानूर रद्द किये गये। इस प्रकार 28 वर्ष लम्बे संघर्ष के बाद मीणों ने पुनः अपने मूलभूत अधिकार प्राप्त किये। बहादुर मीणा कौम पुनः बन्धनों से विमुक्त हो गयी। आज यह जाति राजस्थान की प्रगतिशील जातियों में से एक है। मीणों का वह वर्ग जो पुश्तों से चोरियाँ और डकैतियाँ करता था, आज एक सभ्य समाज के रूप में उभर आया है। इस कौम के सैकड़ों नवयुवक पढ़ लिख कर अखिल भारतीय सेवाओं, राज्य सेवाओं और विश्व-विद्यालयों में जिम्मेदार पदों पर कार्यरत हैं।

———

8

अन्य आन्दोलन

किसान आन्दोलन और जनजाति आन्दोलन के अलावा भी राजस्थान के विभिन्न भागों में स्थानीय और क्षेत्रीय समस्याओं को लेकर और भी कई सशक्त आन्दोलन हुए, जिनसे स्थानीय जनता में जाग्रति का प्रादुर्भाव हुआ। अन्ततोगत्वा ये आन्दोलन राजस्थान में भावी राजनैतिक आन्दोलनों को आधार दिला सके।

जोधपुर :

मारवाड़ (जोधपुर) में जनजाग्रति की शुरुआत सन् 1920–21 के तोल आन्दोलन को लेकर हुई। मारवाड़ में 100 तोले का सेर होता था। राज्य सरकार ने निर्णय किया कि ब्रिटिश भारत की तरह जोधपुर राज्य में भी 80 तोले का सेर हो। जनता इस परिवर्तन के लिए तैयार नहीं थी। सरकार के उक्त निर्णय से राजधानी की जनता में रोष फैल गया। सुप्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता श्री चांदमल सुराना ने कुछ जोशीले युवकों के सहयोग से मारवाड़-सेवा-संघ की स्थापना की। इस संस्था के माध्यम से श्री सुराना ने जोधपुर में हड़ताल का आह्वान किया। हड़ताल सफल रही। सरकार झुक गयी। नया तोल जारी करने का निर्णय रद्द कर दिया गया। जोधपुर राज्य के इतिहास में जनता की यह पहली विजय थी।

मारवाड़-सेवा-संघ को दूसरी सफलता सन् 1922-24 में मिली, जबकि संघ के विरोध स्वरूप सरकार को मारवाड़ से मादा पशुओं की निकासी बन्द करनी पड़ी। उन्हीं दिनों मारवाड़-सेवा-संघ का स्थान मारवाड़-हितकारिणी-सभा ने लिया। सभा के अध्यक्ष श्री चांदमल सुराना और मंत्री श्री किशनलाल बापना थे। संस्था के अन्य प्रमुख कार्यकर्ता थे, सर्वश्री प्रतापचन्द सोनी एडवोकेट, शिवकरण जोशी, जयनारायण व्यास और आनन्दराज सुराना।

सन् 1925 में महाराजा जोधपुर श्री उम्मेदसिंह सपत्नी इङ्गलैण्ड जाने वाले थे। उस समय जोधपुर के प्रधानमंत्री सर सुखदेव प्रसाद थे। जनता में सर सुखदेव प्रसाद के विरुद्ध असंतोष फैला हुआ था। महाराजा की प्रस्तावित यात्रा से जन-प्रतिनिधियों में यह भावना व्याप्त हो गयी कि महाराजा की अनुपस्थिति में सर सुखदेवप्रसाद अपने प्रतिद्वन्द्वियों के विरुद्ध बदले की भावना से काम लेंगे। अतः जोधपुर की जनता की ओर से 25 फरवरी को महाराजा के सामने एक प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया गया कि इस समय इङ्गलैण्ड में इनफ्लूएंजा फैला हुआ है और महारानी गर्भवती हैं, अतः वे अपनी यात्रा स्थगित कर दे। प्रार्थना-पत्र में आगे कहा गया कि यदि महाराजा को यह प्रार्थना स्वीकार न हो तो वे राज्य का शासन-भार सर सुखदेव प्रसाद के स्थान पर महाराज अजीतसिंह को सौंप दे।

17 मार्च को 2,000 लोगों के जन-समूह ने राय का बाग महल में महाराजा को स्वयं को एक और ज्ञापन प्रस्तुत कर सर सुखदेव प्रसाद को हटाने की मांग को दोहराया। अगले

ही दिन मारवाड़-हितकारिणी-सभा के अध्यक्ष श्री सुराना और श्री प्रतापचन्द सोनी ने इसी आशय का एक तार महाराजा को दिया। इन सब कार्यवाहियों से जोधपुर प्रशासन बौखला गया। उसने 20 मार्च 1925 को मारवाड़-लोक-हितकारिणी-सभा के प्रमुख कार्यकर्ता सर्वश्री चांदमल सुराना, प्रतापचन्द सोनी और शिवकरण जोशी को देश-निकाला दे दिया। सरकार ने सभा के अन्य कार्यकर्ता सर्वश्री जयनारायण व्यास, आनन्दराज सुराना, कस्तूर करण, अब्दुल रहमान अन्सारी और बच्छराज व्यास को 10 नम्बरी करार देकर उनके लिए जुरायम पेशा लोगों की तरह प्रतिदिन पुलिस थाने में हाजिरी देना आवश्यक कर दिया। जोधपुर सरकार प्रतापचन्द सोनी से तो इतनी खिन्न थी कि उसने न केवल श्री सोनी को देशभद्र किया वरन् उसके पुत्र श्री मूलचन्द सोनी को कालेज में भर्ती होने से भी रोक दिया।

श्री सुराना आदि के देश निकाले के विरोध में 6 मई को जोधपुर में मारवाड़ हितकारिणी सभा के तत्वावधान में एक सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें सरकार से तीनों कार्यकर्ताओं के निर्वासन आदेश रद्द करने की मांग की गई। परन्तु जनता की इस माग का जोधपुर राज्य पर कोई असर नहीं पड़ा। कुछ महीनों बाद महाराजा विदेश से जोधपुर लौटे। सर्वश्री चांदमल सुराना, प्रतापचन्द सोनी और शिवकरण जोशी ने प्रार्थना की कि वे कई महिने निर्वासन में रह चुके हैं, अतः मारवाड़ में पुनः प्रवेश करने की आज्ञा प्रदान की जाय। इधर श्री जयनारायण व्यास ने 3 नवम्बर, 1925 को महाराजा को एक लम्बा पत्र लिखते हुए अपने साथियों और मारवाड़ हितकारिणी सभा की स्थिति स्पष्ट की। अन्ततोगत्वा श्री सुराना आदि को मारवाड़ में प्रवेश करने की अनुमति मिल गयी। इसी तरह व्यासजी आदि कार्यकर्ताओं पर से पुलिस की निगरानी भी समाप्त कर दी गयी। इसके साथ ही मारवाड़ की जनजाग्रति का एक अध्याय समाप्त हुआ।

बीकानेर :

बीकानेर राज्य में सामाजिक चेतना की लहर पैदा करने का श्रेय चूरू के सुप्रसिद्ध विद्वान पं० कन्हैयालाल ढूंढ और उनके सुयोग्य शिष्य स्वामी गोपालदास को जाता है, जिन्होंने ने सन् 1907 में चूरू में सर्वहितकारिणी सभा स्थापित की। इस संस्था ने चूरू में लड़कियों की शिक्षा हेतु पुत्री पाठशाला और अछूतों की शिक्षा के लिये 'कबीर-पाठशाला' स्थापित की। इस संस्था ने जयपुर राज्य के अनेक गांवों में भी पाठशाला, पुस्तकालय और वाचनालय खोले। स्वामी गोपालदास और पं० चन्दनमल बहड़ इसी संस्था के माध्यम से राज्य के सार्वजनिक जीवन में उतरे थे।

चूरू में 26 जनवरी, 1930 को सर्वश्री बहड़ और स्वामी गोपालदास ने अपने सहयोगियों के साथ चूरू के सर्वोच्च शिखर धर्मस्तूप पर तिरंगा झण्डा फहरा कर राज्य में सनसनी मचा दिया। महाराजा गंगासिंह ने बहड़ आदि को चूरू नगरपालिका की सदस्यता से निलम्बित कर दिया, परन्तु पं० मदनमोहन मालवीय के हस्तक्षेप पर महाराजा ने उन्हें पुनः बहाल कर दिया।

महाराजा ने सन् 1928 में स्वर्गीय सेठ जमनालाल वजाज को भी राज्य में प्रवेश करने से रोक दिया।

उस समय राज्य में भाषण और लेखन पर भारी अंकुश लगा हुआ था। यही नहीं राज्य में किसी प्रकार की सामाजिक अथवा शैक्षणिक प्रवृत्तियां चलाना भी जोखिम से भरा हुआ था। महाराज की इन नीतियों के कारण राज्य के शिक्षित समाज का अन्दर ही अन्दर दम घुट रहा था। सन् 1931 में महाराजा ने खाद्यान्नों पर कर लगाया। उनके इस कदम ने राज्य के कुछ साहसी कार्यकर्ताओं को खुले मे आने के लिए मजवूर कर दिया। चूरू के स्वामी गोपालदास और पं० चन्दनमल वहड़ एवं उनके साथियों ने वीकानेर के इतिहास में पहली वार राज्य के विरुद्ध एक संगठित अभियान आरम्भ किया। उन्होंने चूरू में एक सार्वजनिक सभा की। इधर भादरा के सत्यनारायण एडवोकेट ने भी राज्य की दकियानूसी नीति के विरुद्ध आवाज उठाई। दिल्ली के 'प्रिन्सली इण्डिया' और 'रियासती' एवं अजमेर के 'त्यागभूमि' आदि समाचार पत्रों में राज्य के दमन-सम्बन्धी समाचार प्रकाशित हुए। महाराजा गंगासिह इस समय दूसरे गोल मेज सम्मेलन में भाग लेने लन्दन गये हुए थे। वे वहाँ भारत को ब्रिटिश झण्डे के नीचे स्वायतत्ता प्रदान करने की वकालत कर रहे थे।

पं० चन्दनमल वहड़ और उनके साथियों ने राज्य द्वारा किए जा रहे जुल्मों का ज्ञापन तैयार किया। उस पर राज्य के हजारों लोगों के हस्ताक्षर करवा कर एवं उसे छपवा कर न केवल वीकानेर राज्य में वरन् लन्दन में चल रहे गोल-मेज सम्मेलन एवं अन्य स्थानों में भी वितरित करवाया। भला महाराजा गंगासिह वीकानेर की रिआया की यह हरकत कैसे वर्दाश्त कर सकते थे ?

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में दखल रखने वाले महाराजा गंगासिह वीमारी का वहाना कर गोल-मेज सम्मेलन के पूर्व ही पहले स्टीमर से वीकानेर लौट आए। महाराजा और उसके दीवान सर मनुभाई महता की व्यक्तिगत देख-रेख में पं० चन्दनमल वहड़ और सत्यनारायण सर्राफ आदि व्यक्तियों के खिलाफ राजद्रोह के अभियोग में तहकीकात शुरू हुई। 13 जनवरी, 1932 को चन्दनमल वहड़ और सत्यनारायण सर्राफ गिरफ्तार कर लिए गए। वाद में तहकीकात के दौरान स्वामी गोपालदास, वद्रीप्रसाद और प्यारेलाल सारस्वत भी पकड़ लिए गए। 13 अप्रेल, 1932 को सैशन्स जज श्री वृजकिशोर चतुर्वेदी की अदालत में उक्त अभियुक्तों के विरुद्ध राजद्रोह के अभियोग का मुकदमा प्रारम्भ हुआ। वीकानेर के सुप्रसिद्ध वकील श्री रघुवरदयाल गोयल और उनके साथी श्री मुक्ताप्रसाद ने इस मुकदमे में अभियुक्तों की ओर से पैरवी कर अदम्य साहस का परिचय दिया। अदालत ने न्याय का नाटक कर अभियुक्तों को 3 माह से लगा कर सात वर्ष तक की वड़ी सजाएं दीं। स्मरण रहे इस मामले में स्वामी गोपालदास ने अदालत की कार्यवाही में भाग लेने से इन्कार कर दिया था। यह मामला वीकानेर षड़यन्त्र अभियोग के नाम से विख्यात हुआ। महाराजा गंगासिह की इस मामले में सारे देश में और समाचार-पत्रों में तीखी आलोचना हुई। लाला सत्यनारायण सर्राफ 3 जुलाई, 1936 को सजा काट कर रिहा हुए। उन्होंने पुनः राजनैतिक गतिविधियाँ शुरू कर दीं। वे 16 मार्च, 1937 को राज्य से निर्वासित कर दिये गये।

जैसलमेर :

जैसलमेर के महारावल शालिवाहन द्वितीय (श्यामसिंह) के समय में लानी टैक्स को लेकर सन् 1896 में व्यापारिक वर्ग ने एक आन्दोलन छेड़ा। राजधानी में कई दिन हड़ताल चली। महारावल ने, जो अपने प्रधानमंत्री के हाथ की कठपुतली थे, आन्दोलन को दबा दिया। परन्तु इसके फलस्वरूप व्यापारिक समाज के कई परिवार जैसलमेर छोड़ कर अन्यत्र चले गए। इससे यहां के व्यापार को बड़ा धक्का लगा। सन् 1915 में कुछ युवकों ने सर्वहितकारी वाचनालय स्थापित करने का प्रयत्न किया, पर राज्य ने उसे चलने नहीं दिया। नवम्बर, 1930 में पण्डित जवाहरलाल नेहरू के जन्म-दिवस के अवसर पर सर्वश्री रघुनाथसिंह महता, आईदानसिंह और सागरमल गोपा ने एक विज्ञप्ति निकाल कर नेहरूजी के स्वास्थ्य की शुभकामना की। उन्हीं दिनों जैसलमेर में श्री रघुनाथ महता की अध्यक्षता में माहेश्वरी युवक मंडल की स्थापना हुई। ये कार्यवाहियाँ राज्य द्वारा गैर कानूनी मानी गई। तीनों नवयुवक गिरफ्तार कर लिए गए। सन् 1937-38 में शिव शंकर गोपा, जीतमल जगाणी, मदनलाल पुरोहित, मदनलाल जगाणी, लालचन्द जोशी आदि नवयुवकों ने लोक परिषद् की स्थापना का प्रयास किया। परन्तु महारावल ने कड़ाई के साथ इन नवयुवकों की गतिविधियों का दमन किया। अधिकतर युवकों को जैसलमेर छोड़ना पड़ा। लालचन्द जोशी को तो 6 माह के लिये जेल में भी रहना पड़ा।

टोंक :

टोंक में पहला जन-आन्दोलन सन् 1920-21 में हुआ। उस समय टोंक का दीवान मोतीलाल था। उसने राज्य में अनाज खरीदने का ठेका रतलाम के कतिपय व्यापारियों को दे दिया। राज्य में अनाज के भाव चढ़ गए। नवाब ने मस्जिदों में वाज (भाषण) देने की मनाही कर दी। नवाब ने अब्दुल समद नामक एक भूतपूर्व राज्य कर्मचारी को जेल से रिहा कर दिया, जिसको रिश्वत-खोरी के अपराध में कुछ ही समय पहले 13 वर्ष की सजा दी गयी थी। इन सब कारणों से टोंक में जन-आन्दोलन भड़क उठा। 14 जनवरी, 1921 को जनता ने जुम्मा मस्जिद के बाहर नवाब को घेर लिया और उसके साथ दुर्व्यवहार किया। जनता ने मांग की कि दीवान मोतीलाल को बरखास्त किया जाए, अनाज को राज्य के बाहर निष्कासित करने से रोका जाए और अनाज सस्ते भावों पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था की जाए। नवाब ने ज्वार के भाव निश्चितकर दिये। परन्तु आश्वासनों के बावजूद अन्य मांगों के सम्बन्ध में कोई कार्यवाही नहीं की। इसी बीच नवाब ने सैयदों को राज्य से निकाल दिया। राज्य में फिर असन्तोष भड़क उठा। निषेधाज्ञा के बावजूद सार्वजनिक सभाएँ की गईं, जिनमें नवाब की तीव्र शब्दों में निन्दा की गई। नवाब को अंग्रेजी फौज बुलानी पड़ी। कई लोग गिरफ्तार कर लिये गये। आन्दोलन दबा दिया गया। पर अंग्रेजों की सैनिक कार्यवाही की ब्रिटिश भारत में बड़ी आलोचना हुई। फलस्वरूप गिरफ्तार व्यक्तियों को छोड़ दिया गया। सार्वजनिक सभाएं करने तथा मस्जिदों में धार्मिक मसलों पर बोलने की इजाजत देदी गई। शिकायतें सुनने के लिए एक सलाहकार समिति का निर्माण किया गया, पर टोंक में असन्तोष की लहर चलती रही और समय-समय पर कुछ न कुछ घटनाएं होते रहे। नवाब इब्राहीम खां सन् 1930 में मर गया।

भरतपुर :

जगन्नाथदास अधिकारी ने गंगाप्रसाद शास्त्री एवं कतिपय सरकारी अधिकारियों के सहयोग से उक्त संस्था की स्थापना की। इस संस्था ने थोड़े ही समय में बड़ी लोकप्रियता प्राप्त कर ली। फलतः यह संस्था भरतपुर में एक विशाल पुस्तकालय बनाने में सफल हो गई। अधिकारी ने 1920 में दिल्ली से "वैभव" नामक समाचार-पत्र प्रकाशित किया, जिसमें भरतपुर राज्य विरोधी समाचार छपे। महाराजा कृष्णसिंह ने अवसर पाते ही अधिकारी को गिरफ्तार करलिया, पर कुछ समय बाद उसे न केवल रिहा ही कर दिया वरन् एक बड़े सरकारी मन्दिर का महन्त भी बना दिया। इन्हीं दिनों भरतपुर में शुद्धि आन्दोलन चला जिसमें महाराजा के अलावा ठाकुर देशराज, सांवल प्रसाद चतुर्वेदी, एवं पं. रेवतीसरण शर्मा ने सक्रिय भाग लिया।

सन् 1928 में महाराजा को गद्दी से उतारने के साथ ही साथ डंकन मैकंजी ने जगन्नाथदास अधिकारी को भी राज्य से निर्वासित कर दिया। इस अवसर पर भरतपुर की जनता ने हजारों की संख्या में एकत्रित होकर अधिकारी को ठाटबाट के साथ विदाई दी। मैकंजी ने ठाकुर देशराज को गिरफ्तार कर उस पर देशद्रोह का मुकदमा चलाया। यद्यपि वे उक्त अपराध से बरी कर दिये गये, पर मुकदमें के दौरान उन्हें लगभग 4 माह जेल में रहना पड़ा।

सन् 1930–31 में राज्य में प्रजापरिषद् और राष्ट्रीय युवक दल आदि संस्थायें कायम हुई। उन्हीं दिनों नमक सत्याग्रह में भाग लेने के लिये भरतपुर से एक जत्था अजमेर भेजा गया, जिसमें सर्वश्री किशनलाल जोशी, विरेन्द्रदत्त, महेशचन्द्र, तत्थराम, इन्द्रभान और ठाकुर पूरण सिंह शामिल थे। सन् 1931 में जगन्नाथ प्रसाद कक्कड़ दिल्ली के क्रान्तिकारियों को बन्दूकें पहुंचाने के सम्बन्ध में पकड़ लिये गये। वे लगभग 7 माह तक जेल में रहे। सन् 1932 में मदनमोहन लाल पोद्दार और गोकुलचन्द दीक्षित को ब्रिटिश भारत में राजनैतिक गतिविधियों में भाग लेने के फलस्वरूप 6 माह से अधिक जेल में रखा गया। सन् 1937 में जगन्नाथ कक्कड़ ने गोकुल वर्मा और मास्टर फकीरचन्द आदि के साथ भरतपुर कांग्रेस मण्डल की स्थापना की एवं कांग्रेस की सदस्यता का अभियान चलाया। इस प्रकार एक लम्बे समय तक भरतपुर में जागृति की चिनगारियाँ जलती और बुझती रहीं।

करौली :

करौली के कु. मदनसिंह ने सन् 1927 में बेगार प्रथा समाप्त करने, खेती की रक्षा के लिये सूअर मारने की स्वतन्त्रता एवं उर्दू के बजाय हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिये आन्दोलन चलाया। उन्होंने अपनी पत्नी के साथ भूख हड़ताल शुरू की। राज्य ने उनकी मांगें स्वीकार कर लीं। उसी वर्ष श्री मदनसिंह राज्य में हैजा-पीड़ित हरिजनों की सेवा करते हुये स्वयं भी हैजे के शिकार हो गये और मर गये। सन् 1930 में सपोटरा के चिरंजीलाल शर्मा अजमेर जाकर नमक सत्याग्रह में शामिल हुये, जहाँ उन्हें 4 माह की सजा हुई। इसके तुरन्त बाद वे करौली आये, परन्तु करौली राज्य ने उनकी राजनैतिक गतिविधियों को लेकर गिरफ्तार कर लिया और 3 माह बाद जेल से मुक्त किया। उन्हीं दिनों उन्होंने हरिजन उत्थान के सम्बन्ध में एक पर्चा निकाला। इस पर उन्हें तीन महीने की सजा हुई। सन् 1932 में सर्वश्री कल्याणप्रसाद गुप्त, रामगोपाल आदि को राजद्रोह के अभियोग में गिरफ्तार कर लिया गया, पर उन्हें 22 दिन बाद ही रिहा कर दिया गया।

धौलपुर :

धौलपुर में जन जागृति के अग्रदूत स्व० यमुनाप्रसाद वर्मा थे। उन्होंने सन् 1910 में आचार सुधारिणी सभा स्थापित कर धौलपुर के जवानों को समाज सेवा की ओर आकर्षित किया। सन् 1911 में उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की। वर्मा की इन प्रवृत्तियों में, ज्वालाप्रसाद जिज्ञासु ने सक्रिय हाथ बँटाया। राज्य में आर्य समाज का प्रभाव दिनों-दिन बढ़ने लगा तो अधिकारियों ने उनकी प्रवृत्तियों में बाधा डालना शुरू किया। सरकार ने आर्य समाज मन्दिर कपर ब्जा कर लिया। सन् 1918 में ज्वालाप्रसाद जिज्ञासु के नेतृत्व में आर्य समाज ने सत्याग्रह शुरू किया। लगभग एक हजार सत्याग्रहियों ने आन्दोलन में भाग लिया। जिज्ञासु, जौहरीलाल इन्दु, विष्णुस्वरूप वैद्य आदि कई कार्यकर्ता गिरफ्तार हुए। अन्त में राज्य को झुकना पड़ा और आर्य समाज मन्दिर पुनः आर्य समाज को सौंपना पड़ा। इन्हीं सामाजिक कार्यकर्ताओं ने सन् 1934 में नागरी प्रचारिणी सभा स्थापित की जिससे राज्य में मातृभाषा हिन्दी का बड़ा प्रचार हुआ।

अलवर :

दिल्ली के निकट स्थित होने के कारण यह स्वाभाविक था कि ब्रिटिश भारत में होने वाले आन्दोलनों की हवा के झोंके अलवर राज्य के वायुमण्डल को भी प्रभावित करते। राज्य में जन जाग्रति के अग्रदूत पं० हरिनारायण शर्मा ने सन् 1923 में अपने परिवार का मन्दिर हरिजनों के लिये खोल कर राज्य में तहलका मचा दिया। उन्होंने अस्पृश्यता-निवारण संघ, वाल्मीकि संघ और आदिवासी संघ की स्थापना कर अनुसूचित और जन-जातियों के उत्थान के कार्य को हाथ में लिया। उन्होंने खादी और स्वदेशी वस्तुओं के उत्पादन और उपयोग का प्रचार किया। उन्होंने राज्य में साम्प्रदायिक तनाव के नाजुक अवसरों पर नागरिक समितियों के माध्यम से हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिये सद्भावनापूर्ण वातावरण बनाया। उन्होंने राज्य के हर स्तर पर हिन्दी समितियों का गठन कर राष्ट्र-भाषा हिन्दी का प्रचार किया। संक्षेप में श्री शर्मा ने राज्य में वे सभी प्रवृत्तियाँ चालू की जो ब्रिटिश भारत में उस समय महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यक्रम का अङ्ग थी। इससे जनता में अभूतपूर्व जाग्रति का संचार हुआ। उस समय अलवर के शासक महाराजा जय सिंह थे जो स्वयं राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत थे। वे श्री शर्मा की विविध सामाजिक सेवाओं से इतने प्रभावित थे कि राज्य के शासन सुधार और विकास आदि सभी महत्व-पूर्ण मामलों में उन्होंने सदैव श्री शर्मा का सहयोग लिया। श्री शर्मा एक प्रकार से महा-राजा के अवैतनिक सलाहकार बन गये थे।

मार्च 1933 में ब्रिटिश सरकार ने महाराजा जयसिंह को उनकी राष्ट्रीय गतिविधियों के कारण न केवल गद्दी से हटा दिया, वरन् उन्हें देश से भी निर्वासित कर दिया। 19 मई, 1937 को महाराजा जयसिंह का संदिग्ध अवस्था में देहान्त हो गया। ब्रिटिश सरकार ने स्व० महाराजा द्वारा मनोनीत उत्तराधिकारी के स्थान पर एक प्रतिक्रियावादी जागीरदार के पुत्र तेजसिंह को गद्दी पर बैठा दिया। इसकी राज्य में बड़ी प्रतिक्रिया हुई। कुछ नौजवानों ने अलवर में 'पुरजन विहार' पर तिरंगा झण्डा फहरा दिया। उसी दिन पहलीबार अलवर में आमसभा का आयोजन किया गया, जिसमें ब्रिटिश सरकार के फैसले की कटु आलोचना की गयी। राज्य सरकार ने रातोंरात छापा मार कर आन्दोलन के प्रमुख कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया। इनमें प्रमुख थे सर्वश्री हरिनारायण शर्मा, कुंजविहारीलाल मोदी, पं० सालिगराम, अब्दुल शकूर जमाली, डॉ. मुहम्मदअली और लक्ष्मीराम सौदागर। उन्हें 'राजद्रोह' के अपराध में विभिन्न सजाएं हुईं। इन बन्दियों को जेल में कठोर यातनायें दी गयीं जिनमें अनाज पिसवाना भी शामिल था।

बून्दी :

बून्दी में महाराव ईश्वरसिंह का शासन था। सन् 1927 में उसकी पासवान की मृत्यु हो गयी। राजघराने के पुरोहित श्री रामनाथ कुदाल ने पासवान की अन्तिम क्रिया करने से इसलिये इन्कार कर दिया कि वह बून्दी राजघराने की सदस्या नहीं थी। इस पर पुलिस ने उसे खुले आम निर्दयतापूर्वक कत्ल कर दिया। इस घटना के विरोध में राजधानी में लगातार नौ दिन तक हड़ताल रही और प्रदर्शन हुए। पुलिस को प्रदर्शनकारियों पर गोली चलानी पड़ी। कुछ लोगों को चोटें आयीं।

बून्दी की जन जाग्रति का वर्णन करते हुये हमें सहज ही वहां के प्रतिष्ठित नागर परिवार का स्मरण हो आता है। इस परिवार के श्री नित्यानन्द महता को राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेने के कारण बून्दी राज्य ने राज्य से निर्वासित कर दिया और उनकी पारिवारिक सम्पत्ति जब्त कर ली। श्री नित्यानन्द ने सन् 1930, 32 और 40 के विभिन्न आन्दोलनों में भाग लिया और ब्रिटिश जेलों में सजाएं भुगतीं। श्री नित्यानन्द की पत्नि सत्यभामा और पुत्र ऋषिदत्त ने भी राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेकर उनका अनुसरण किया।

———

9

राजाओं में ब्रिटिश विरोधी भावनायें

सन् 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम में राजस्थान के प्रायः सभी राजाओं ने अंग्रेजों का साथ दिया था। पर कालान्तर में वहाँ के कपितय राजाओं में ब्रिटिश विरोधी भावनायें जाग्रत हुई।

सन् 1818 की संधि के द्वारा अन्य राजाओं की तरह मेवाड़ के महाराणा भी ब्रिटिश सत्ता की सार्वभौमिकता स्वीकार कर चुके थे। मेवाड़ के प्रशासन में धीरे-धीरे अंग्रेजों का दखल बढता गया और ऐसा लगने लगा था कि जैसे मेवाड़ के शासक महाराणा नही वरन् ब्रिटिश रेजीडेन्ट हैं। ऐसे समय में मेवाड़ में महाराणा फतहसिंह के रूप में एक ऐसे नक्षत्र का उदय हुआ जिसने शिशोदियावंश के शौर्य को एक बार पुनः चमकाया।

महाराणा फतहसिंह 23 दिसम्बर, 1884 को मेवाड़ की गद्दी पर आसीन हुये। उन्होने गद्दी पर बैठते ही राज्य के आन्तरिक मामलों में रेजीडेण्ट और अंग्रेजों के दखल को रोक दिया। उन्होने ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा हेतु सेना तैयार करने से इन्कार कर दिया। सन् 1878 मे अंग्रेजो के दबाव में आकर उदयपुर-चित्तौड़गढ़ रेलवे के निर्माण के लिये भूतपूर्व महाराणा सज्जनसिंह जी द्वारा किये गये समझौते को ठुकरा दिया। उन्होने सभी अंग्रेज अधिकारियो को राज-सेवा से बरखास्त कर दिया। यही नहीं, उन्होने अंग्रेजों के विश्वासपात्र प्रधानमन्त्री राय महता पन्नालाल को अपने पद से बरखास्त कर दिया और सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्यामजीकृष्ण वर्मा को अपना मुख्य सलाहकार नियुक्त कर दिया। महाराणा की इस कार्यवाही से खिन्न होकर मेवाड़ के पोलीटीकल एजेण्ट माइल्स ने भारत सरकार को एक पत्र लिखा जिसमे उसने चेतावनी दी की भविष्य में यदि भारतवासी अंग्रेजों के विरुद्ध संगठित हुये तो इस बार उनके संगठन की धुरी उदयपुर होगी न कि दिल्ली।[1]

सन् 1903 में महाराजा ने दिल्ली पहुँच कर भी लॉर्ड कर्जन के दरबार का बहिष्कार किया। सन् 1911 मे वे दिल्ली मे जार्ज पंचम के दरबार मे भी सम्मिलित नही हुये। महाराणा की ब्रिटिश-विरोधी भावना का इस बात से अन्दाजा लगाया जा सकता है कि जब भारत के वायसराय लॉर्ड रीडिंग की एक्जीक्युटिव-कौन्सिल के सदस्य नरसिमा शर्मा उदयपुर मे महाराणा से मिले तो महाराणा ने उनसे पूछा 'इन दुष्टो से देश को कब छुटकारा मिलेगा ?"[2] महाराणा का इशारा अंग्रेजों की ओर था।

---

1. डी. आर. मकीकर—"मेवाड़-सागा" (अंग्रेजी) पृ. 154।
2. दुर्गादास—कर्जन टू नेहरू एण्ड देअर आफ्टर (अंग्रेजी) पृ. सं.

इधर बेगूं और बिजोलिया के तथाकथित "बोलशेविक" आन्दोलनों को सख्ती से नहीं दबाने से ब्रिटिश सरकार की नाराजगी और बढ़ गयी। उसने निर्णय किया कि महाराणा को गद्दी से उतार दिया जाये। पर इस निर्णय की राजाओं और जनता में समानरूप से तीखी प्रतिक्रिया हुई। इस पर ब्रिटिश सरकार ने महाराणा को लिखा कि वे स्वय अपने पुत्र महाराज कुमार भूपाल सिंह के पक्ष में गद्दी छोड़ दें।[1] महाराणा ने उसकी यह सलाह ठुकरा दी। अब अंग्रेजों ने कूटनीति से काम लिया। वे महाराणा और महाराज में फूट डालने में सफल हो गये। फलतः महाराणा को अपने बहुत सारे अधिकार महाराज कुमार को सौंपने के लिये मजबूर होना पड़ा। उस समय एक चारण कवि ने अपने भाव निम्नलिखित संवेदना पूर्ण दोहे में व्यक्त किये।

> "बुढ़ापा री बाट में घाटी कठिण घणी।
> लाठी चोंरा लूटली, धोको जीव घणी॥[2]

अर्थात्-वृद्धावस्था में कठिन घाटियों को पार करते समय चोरों (ब्रिटिश सरकार) ने उनके (महाराणा) सहारे की लाठी (म. कु. भूपालसिंह) लूट ली। इससे स्वामी (महाराणा) के जीवन को बड़ा धोखा हुआ।

इसी घटना को लेकर अजमेर से प्रकाशित "तरुण राजस्थान" ने अपने 10 फरवरी, 1924 के अंक में लिखा है "यदि महाराणा गोरी सरकार के अन्धे भक्त होते तो शायद मेवाड़ के प्राचीन गौरव को नाश करनेवाला यह अत्याचारपूर्ण हस्तक्षेप न हुआ होता।"

महाराजा जयसिंह, अलवर :

अलवर महाराजा जयसिंह के बालिग होते ही सन् 1903 में उन्हें राज्य के शासन सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हुये। उन्होंने न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक कर दिया। बाल-विवाह, अनमेल-विवाह और मृत्यु-भोज पर रोक लगा दी। रियासत की राज्य भाषा हिन्दी घोषित कर दी। राज्य में पचायतों का जाल बिछा दिया। महाराजा ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय एवं सनातन धर्म कालेज लाहौर को उदारता-पूर्वक वित्तीय सहायता दी। ऐसे प्रगतिशील महाराजा से ब्रिटिश सरकार का असन्तुष्ट होना स्वाभाविक था। इसी बीच सन् 1921 में महाराजा ने गोलमेज सम्मेलन लन्दन में घोषणा की कि वे राज्य में जनतान्त्रिक सरकार स्थापित कर स्वयं एक वैधानिक शासक बन जाना चाहते हैं। महाराजा को अपने इन विचारों के लिये भारी कीमत चुकानी पड़ी। सन् 1932-33 में राज्य में साम्प्रदायिक दंगे हुये। अंग्रेजों को महाराजा को पदच्युत करने का बहाना मिल गया। भारत सरकार ने महाराजा को 48 घण्टे के भीतर राज्य से बाहर चले जाने का नोटिस दिया। महाराजा खादी के वस्त्र पहन कर ता. 22 मई को अलवर से विदा हो गये और ता. 16 जून को यूरोप पहुंच गये। ता. 14 मई सन् 1937 को पेरिस मे महाराजा का निधन हो गया।

महाराजा कृष्णसिंह, भरतपुर :

भरतपुर के महाराजा रामसिंह को एक नौकर की हत्या के अपराध में ब्रिटिश सरकार ने सन् 1900 में राजगद्दी से हटा दिया। उनके स्थान पर उनके नाबालिग पुत्र

---

1. शंकरसहाय सक्सेना—बीजोलिया किसान आन्दोलन पृ. 275। देखिये परिशिष्ठ 2 पर ए. जी. जी. हॉलैण्ड के पत्र का हिन्दी अनुवाद।
2. कर्मठ राजस्थान "पाक्षिक" ता. 15 अप्रेल, सन् 1978।

कृष्णसिंह गद्दी पर बैठे। उन्हें बालिग होने पर सन् 1918 में शासन सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हुये। कृष्णसिंह भी उनके समकालीन अलवर के महाराजा जयसिंह की तरह प्रगतिशील शासक थे। उन्होंने राज्य में नगरपालिका और ग्राम पंचायतों की स्थापना की, सहकारी बैंक बनाया और शिक्षा का विस्तार किया। उन्होंने हिन्दी को राजभाषा घोषित किया एवं बेगार प्रथा समाप्त की। उन्होंने राज्य में पोलीटिकल एजेन्ट के दखल को दृढ़तापूर्वक रोका। सन् 1927 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 17वां अधिवेशन भरतपुर में हुआ। इस सम्मेलन में रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मदन मोहन मालवीय और जमनालाल बजाज जैसे राष्ट्रीय नेताओं ने भाग लिया। ये नेता महाराजा के मेहमान रहे। सन् 1928 में महाराजा ने जनता को शासन में भागीदार बनाने के लिये शासन समिति स्थापित करने का निर्णय किया। ब्रिटिश सरकार के लिये यह सब असहनीय था। उसने महाराजा को राज्य में वित्तीय अव्यवस्था का इल्जाम लगाकर गद्दी से हटा दिया और राज्य से निर्वासित कर दिया। महाराजा सन् 1929 में चल बसे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राजस्थान में कम से कम तीन राजाओं को अपनी प्रगतिशील और राष्ट्रीय विचारधारा एवं अंग्रेजों को राज्य के अन्दरूनी मामलों में दखल देने से रोकने के कारण ब्रिटिश सरकार का कोपभाजन बनना पड़ा।

10

राज्यों में राजनैतिक संगठनों की स्थापना

अंग्रेजी राज्य की स्थापना के साथ भारत मोटे रूप में दो भागों में विभाजित हो गया—ब्रिटिश भारत और रियासती भारत। ब्रिटिश भारत में कतिपय केन्द्र-शासित प्रदेशों के अलावा 11 प्रान्त थे। प्रत्येक प्रान्त का शासक गवर्नर अथवा ले. गवर्नर होता था जो भारत के गवर्नर जनरल के प्रति उत्तरदायी होता था। रियासती भारत छोटी-बड़ी 562 रियासतों में बंटा हुआ था। उक्त राज्यों के वंशानुगत शासक अलग-अलग सन्धियों द्वारा ब्रिटिश सरकार को सार्वभौमसत्ता के रूप में स्वीकार कर चुके थे। ब्रिटिश सरकार ने इन रियासतों की सुरक्षा की जिम्मेदारी अपने हाथ में ले ली। साथ ही साथ उसने रियासतों पर यह पाबन्दी लगा दी कि वे बिना उसकी स्वीकृति के किसी दूसरी रियासतों या प्रान्त से किसी तरह के सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकेंगी। इस प्रकार ब्रिटिश कूटनीति भारतीय जनता को दो विभिन्न कम्पार्टमेण्ट्स् में बाँटने में सफल हो गयी। इस घातक नीति का यह परिणाम हुआ कि सन् 1817 से 1941 के बीच की 125 वर्ष की लम्बी अवधि में 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम को छोड़कर ब्रिटिश भारत और रियासती भारत की जनता ने एकजुट होकर कभी भी ब्रिटिश सत्ता का मुकाबला नहीं किया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना सन् 1885 में हुई। शीघ्र ही समूचे ब्रिटिश भारत में उसकी शाखाओं का जाल बिछ गया। पर रियासतों में एक लम्बे समय तक कांग्रेस या उसके समानान्तर संगठन नहीं बन पाये। इसका मूल कारण यह था कि रियासतों की जनता मूल राष्ट्रीय धारा से अलग-थलग पड़ गयी थी। वह दोहरी गुलामी से इस कदर जकड़ी हुई थी कि उसमें राजनैतिक जाग्रति आने में समय लगा। फिर राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी एक लम्बे समय तक रियासतों के प्रति तटस्थता की नीति बरती। वह नहीं चाहती थी कि अंग्रेजों के साथ-साथ राजाओं से भी उलझ जाये।

महात्मा गांधी के भारत के राजनैतिक क्षितिज पर अवतीर्ण होने के बाद ब्रिटिश भारत में होने वाले आन्दोलनों की हवा रियासतों को भी लगने लगी। राजस्थान की रियासतें भी इस हवा से न बच सकीं। वहाँ मालगुजारी, लागबाग, बैठ-बेगार, चुंगी-कर आदि स्थानीय और क्षेत्रीय समस्याओं को लेकर आन्दोलन होने लगे। किसी-किसी राज्य में राजनैतिक संगठन बनाने के प्रयत्न भी हुये। पर इस प्रकार के संगठन बनाने का सही वातावरण सन् 1938 में बना जबकि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने हरिपुरा अधिवेशन में रियासती जनता को अपने-अपने राज्य में राजनैतिक संगठन स्थापित करने और राजनैतिक अधिकारों के लिये आन्दोलन करने की छूट दे दी। राजस्थान की जनता को

इस प्रकार के संगठन स्थापित करने में जो संघर्ष करना पड़ा, उसने राजस्थान के गौरवपूर्ण इतिहास मे एक और अध्याय जोड़ दिया है।

मेवाड़ (उदयपुर)

यो तो मेवाड़ में मालगुजारी, लागवाग एवं बेगार आदि समस्याओं को लेकर ऐसे शक्तिशाली आन्दोलन हो चुके थे, जिन्होंने न केवल मेवाड़ प्रशासन वरन् ब्रिटिश सरकार को भी झकझोर दिया था, परन्तु वहाँ पर संगठित राजनैतिक आन्दोलन की शुरूआत सन् 1938 में हुई। अनेक जन-आन्दोलनों के सूत्रधार और क्रान्तिकारी श्री माणिक्यलाल वर्मा उस समय डूंगरपुर के भीलों में रचनात्मक कार्य कर रहे थे। श्री वर्मा ने अपने अनुभवों से यह भली-भांति समझ लिया था कि बिना राजनैतिक परिवर्तनों के समाज में बदलाव नहीं लाया जा सकता। अब हरिपुरा कांग्रेस ने रियासतों में राजनैतिक संगठन बनाने का द्वार खोल दिया। अतः श्री वर्मा भील-सेवा का कार्य स्थानीय कार्यकर्ता श्री भोगी लाल पंड्या को सौंप कर डूंगरपुर से अपनी जन्मभूमि मेवाड़ की ओर चल दिये। एक साईकिल पर सवार होकर वर्मा जी ने सारे मेवाड़ का दौरा किया और राज्य में प्रजामण्डल की स्थापना हेतु वातावरण तैयार किया। उन्होंने उदयपुर पहुँच कर साथियों के साथ विचार-विनिमय किया और प्रजामण्डल की स्थापना हेतु 24 अप्रेल, 1938 को श्री बलवन्त सिंह मेहता के निवास स्थान "साहित्य कुटीर" में कार्यकर्ताओं और सहयोगियों की बैठक बुलाई। इस बैठक में वर्माजी और श्री मेहता के अलावा सर्वश्री भूरेलाल बया, भवानीशंकर वैद्य, यमुनालाल वैद्य, दयाशंकर श्रोत्रिय, हीरालाल कोठारी और रमेशचन्द्र व्यास शरीक हुये। बैठक ने प्रजामण्डल का विधान स्वीकार कर मेवाड़ प्रजामण्डल की विधिवत स्थापना की। श्री बलवन्तसिंह मेहता प्रजामण्डल के अध्यक्ष, श्री भूरेलाल बया उपाध्यक्ष और श्री वर्मा महामन्त्री निर्वाचित हुये।

प्रजामण्डल की स्थापना से मेवाड़ में एक अभूतपूर्व लहर फैल गई। केवल उदयपुर शहर में तीन दिन के अन्दर प्रजामण्डल के लगभग दो हजार सदस्य बन गये। मेवाड़ के प्रधान मन्त्री श्री धर्मनारायण काक ने वर्मा जी को बुलाकर कहा कि वे प्रजामण्डल की स्थापना के लिये राज्य की स्वीकृति प्राप्त करें। वर्मा जी ने उत्तर दिया कि राज्य में ऐसा कोई कानून नहीं है कि जिसके आधार पर प्रजामण्डल कायम करने के लिये सरकार की स्वीकृति की आवश्यकता हो। इस पर सरकार ने ता. 11 मई, 38 को प्रजामण्डल को गैरकानूनी घोषित कर दिया। राज्य मे समाचार-पत्रों के प्रकाशन का तो सवाल ही नही था। बाहर से आने वाले समाचार-पत्रों पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया। जुलूस निकालने और सभा सम्मेलन करने की मुमानियत कर दी गयी। प्रजामण्डल की कार्यकारिणी ने अपने समस्त अधिकार वर्मा जी को देकर उन्हें प्रजामण्डल का डिक्टेटर घोषित कर दिया। सरकार ने वर्मा जी को मेवाड़ से निष्कासित कर दिया। प्रजामण्डल के लिये यह एक चुनौती थी। वर्मा जी वर्धा पहुंचे और महात्मा गांधी का आशीर्वाद प्राप्त कर अजमेर लौट आये। वहीं उन्होंने मेवाड़ प्रजामण्डल का अस्थायी कार्यालय स्थापित किया।

वर्मा जी ने अजमेर से "मेवाड़ का वर्तमान शासन" नामक पुस्तिका प्रकाशित की जिसमे उन्होंने मेवाड़ के शासन की कटु आलोचना की और साथ ही मेवाड़ प्रजामण्डल पर लगायी गई पाबन्दी हटाने की मांग की। सेठ जमनालाल बजाज ने भी मेवाड़ के प्रधान मन्त्री को प्रजामण्डल पर लगी पाबन्दी हटाने के लिये लिखा। पर इन प्रयत्नों का

कोई नतीजा नहीं निकला। यही नहीं कुरावड़ निवासी सुप्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री प्रो. प्रेम नारायण माथुर को दिनांक 28-9-1938 को मेवाड़ से निष्कासित कर दिया। अब प्रजामण्डल के सामने आन्दोलन चलाने के सिवाय कोई मार्ग नहीं रह गया था।

अक्टूबर, 1938 में विजय दशमी के दिन प्रजामण्डल ने सत्याग्रह का शुभारम्भ किया। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री रमेश चन्द्र व्यास ने उदयपुर में घंटाघर के निकट जनता को सत्याग्रह में शामिल होने के लिये आह्वान करते हुये "मेवाड़ प्रजामण्डल जिन्दाबाद" के नारे लगाये। श्री व्यास गिरफ्तार कर लिये गये। इसके बाद प्रजामण्डल के प्रमुख नेता और कार्यकर्ता सर्वश्री बलवन्तसिंह मेहता, भूरेलाल बया, दयाशंकर श्रोत्रिय, भवानी शंकर वैद्य, मथुरा प्रसाद वैद्य, अमृतलाल यादव, प्रभाचन्द्र भंवरलाल स्वर्णकार, रामचन्द्र वैद्य, जयचन्द रेगर, श्रीमती नारायणी देवी वर्मा, श्रीमती रमादेवी ओझा, श्रीमती भगवती देवी, श्रीमती स्नेहलता वर्मा एवं सर्वश्री परसराम अग्रवाल, नन्दलाल जोशी, रामसिंह भाटी, भंवरलाल आचार्य, नरेन्द्रपाल चौधरी, उमाशंकर द्विवेदी, अर्जुनसिंह राठौड़, कन्हैयालाल धाकड़, गोकुल धाकड़, रूपलाल सोमानी, प्यारचन्द विश्नोई आदि एक के बाद एक गिरफ्तार कर लिये गये।

इस सत्याग्रह में लगभग 250 व्यक्तियों ने भाग लिया जो या तो दण्डित हुये या मेवाड़ से निर्वासित कर दिये गये। वर्मा जी सत्याग्रह का संचालन अजमेर से करते रहे। यह सत्याग्रह अक्टूबर, 1938 से जनवरी 1939 तक चलता रहा। इसी बीच तारीख 2 फरवरी, 1939 को मेवाड़ सरकार के जासूस वर्मा जी को अजमेर राज्य के देवली नामक स्थान से मेवाड़ की सीमा में घसीट लाये और उन्हें गिरफ्तार कर लिया। पुलिस ने वर्मा जी को नंगा कर एक खम्भे से बांध दिया और उन्हें बुरी तरह पीटा। महात्मा गांधी को जब इस घटना की जानकारी हुई तो उन्होंने 'हरिजन' में वर्मा जी के साथ किये गये पाशविक व्यवहार की कड़ी भर्त्सना की। उन्होंने वर्मा जी की गिरफ्तारी को गैर कानूनी बताते हुये कहा "सविनय अवज्ञा करने वालों को याद रखना चाहिये कि वास्तविक संग्राम तो अब आने वाला है। ऐसा प्रतीत होता है कि देशी राज्य अंग्रेजों द्वारा ब्रिटिश भारत में सत्याग्रह आन्दोलन के विरुद्ध व्यवहार में लाये गये तरीकों की नकल कर रहें हैं। इस बात की सम्भावना है कि वे उनकी भयानकता में और अधिक सुधार करें। उन्हें जनमत का कोई भय नहीं है, परन्तु सविनय अवज्ञा करने वाले कैसे भी भयानक तरीके हों उनसे डरेंगे नहीं।"[1]

वर्मा जी पर देशद्रोह का मुकदमा चलाया गया। उन्हें दो वर्ष की सजा दी गई। वे कुम्भलगढ़ के किले में बन्द कर दिये गये। इसी वर्ष मेवाड़ में भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा। मेवाड़ प्रजामण्डल के जो कार्यकर्ता बाहर थे उन्होंने अकाल सेवा समिति की स्थापना की। इस समिति ने जिस निष्ठा और लगन से अकाल सहायता कार्य किया उसकी सर्वत्र प्रशंसा हुई। इसी बीच कुम्भलगढ़ जेल में वर्मा जी का स्वास्थ्य चिन्ताजनक हो गया। राज्य सरकार ने उन्हें इलाज के लिये अजमेर भेजा और वहां 8 जनवरी, 1940 को उन्हें रिहा कर दिया। वर्मा जी ने महात्मा गांधी के आदेशानुसार मेवाड़ प्रजा मण्डल द्वारा संचालित सत्याग्रह स्थगित कर दिया।

---

1. 'हरिजन' ता. 18-2-39

इन्हीं दिनों मेवाड़ के प्रधान मन्त्री धर्मनारायण काक महाराज कुमार भगवत सिंह की शादी के प्रश्न को लेकर राजमहल के षडयन्त्रों के शिकार हो गये। उनके स्थान पर महाराणा द्वारा अपने नये सम्बन्धी बीकानेर के महाराजा गंगासिंह की सलाह पर सर टी. विजयराघवाचार्य, प्रधान मन्त्री बनाये गये। इस परिवर्तन से मेवाड़ के राजनैतिक वातावरण में थोड़ा परिवर्तन आया। वर्मा जी के नेतृत्व में प्रजामण्डल का एक प्रतिनिधि मंडल नए प्रधानमंत्री से मिला और उनसे प्रजामण्डल पर लगी पाबन्दी हटाने की मांग की। मेवाड़ सरकार ने महाराणा के जन्म दिन के अवसर पर दिनांक 22 फरवरी, 1941 को प्रजामण्डल से पाबन्दी हटाने की घोषणा की। धीरे-धीरे राज्य के प्रजामण्डल की साख जमने लगी। प्रजामन्डल के कार्यकर्ताओं द्वारा की गई शिकायतों के आधार पर जिला हकिम श्री चन्द्रनाथ और लाला प्यारे लाल, स्वास्थ्य विभाग के निदेशक डॉ. छगनलाल और पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट मदनसिंह आदि उच्चाधिकारियों को नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया। महाराणा की मूंछ के बाल समझे जाने वाले भ्रष्ट अधिकारियों की बर्खास्तगी से राज्य की जनता ने राहत की सांस ली। अप्रत्यक्ष रूप से इससे प्रजामण्डल की लोकप्रियता बढ़ गई। राज्य भर में प्रजामन्डल की शाखाऐं स्थापित हो गईं और कुछ ही महीनों में प्रजामण्डल एक शक्तिशाली संगठन के रूप में उभर कर सामने आया। नवम्बर, 1941 में वर्माजी की अध्यक्षता मे मेवाड़ प्रजामण्डल का प्रथम अधिवेशन उदयपुर ने हुआ जिसमें आचार्य कृपलानी और श्रीमती विजय लक्ष्मी पण्डित जैसे देश के चोटी के नेताओं ने भाग लिया। इस अवसर पर मेवाड़ के राजनैतिक क्षितिज पर श्री मोहनलाल सुखाड़िया के रूप में एक नया नक्षत्र उभर कर आया, जिसने कालान्तर में लगातार 17 वर्षों तक राजस्थान के मुख्य मत्री के पद पर रह कर अनूठा कीर्तिमान स्थापित किया।[1] प्रजामण्डल के इस अधिवेशन में मेवाड़ में अविलम्ब उत्तरदायी शासन की स्थापना और जनता द्वारा चुनी हुई विधान सभा स्थापित करने की मांग की गयी।

मारवाड़ (जोधपुर)

जोधपुर मे राजनैतिक आन्दोलनों की शुरूआत दिसम्बर, 1928 में हुई, जबकि मारवाड़ हितकारिणी सभा ने 'मारवाड़ लोक राज्य परिषद' का अधिवेशन बुलाने का निर्णय किया। जोधपुर-प्रशासन ने परिषद् का अधिवेशन बुलाने पर पाबन्दी लगा दी। इस समय श्री जयनारायण व्यास ब्यावर से 'तरुण राजस्थान' का प्रकाशन कर रहे थे। व्यास जी ने जोधपुर सरकार के इस कदम की अपने पत्र में तीव्र भर्त्सना की। राज्य ने सर्वश्री जयनारायण व्यास, आनन्दराज सुराना और भंवरलाल सर्राफ को गिरफ्तार कर लिया। इन पर नागौर के किले में एक विशेष अदालत में मुकदमा चलाया गया। अदालत ने श्री व्यास को 6 वर्ष और दूसरे साथियों को 5-5 वर्ष की सजा दी। परन्तु तीनों कार्यकर्ता मार्च सन् 1931 में रिहा कर दिये गये। व्यासजी पुनः ब्यावर चले गये। वहाँ वे सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेने के कारण गिरफ्तार कर लिये गये। वे जनवरी, 1933 में जेल से रिहा हुए। इसके बाद वे बीकानेर षडयन्त्र अभियोग में गिरफ्तार कार्यकर्ताओं की

1. श्री सुखाड़िया पहली बार सन् 1938 मे प्रकाश में आये जब उन्होंने श्रीमती इन्दुबाला के साथ अन्तर्जातीय विवाह कर मेवाड़ जैसे रूढ़ीवादी प्रदेशों में तहलका मचा दिया था। तब से वे आगे बढ़ते ही गये। मेवाड, भूतपूर्व राजस्थान और वृहद राज. मे मन्त्री रहने के बाद सन् 1954 में वे राज. के मुख्य मन्त्री बन गये। इस पद पर वे सन् 1971 तक रहे। इसके बाद वे कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडू के गवर्नर रहे। वे सन् 1980 में उदयपुर से लोक सेभा के सदस्य बने वे सन् 1981 में चल बसे। वे राजस्थान के आधुनिक निर्माता माने जाते हैं।

पैरवी में लग गये। इन्हीं दिनों सीकर, भावलपुर और लुहारू में जन आन्दोलन चल रहे थे। व्यासजी ने इन आन्दोलनों का भी समय-समय पर मार्ग दर्शन किया।

सन् 1936 में अखिल भारतीय देशी राज्य परिषद् का अधिवेशन करांची में हुआ। व्यासजी परिषद् के महामंत्री चुने गये। व्यासजी परिषद् के अधिवेशन में भाग लेकर करांची से बम्बई चले गये थे। वहाँ से वे 'अखण्ड भारत' नामक पत्र का सम्पादन कर रहे थे। धीरे-धीरे पत्र की आर्थिक स्थिति खराब हो गयी। बीकानेर के महाराज गंगासिंह को जब इस स्थिति का पता चला तो उन्होंने गुमनाम से रायसाहब सांवीदास द्वारा व्यासजी को आर्थिक सहायता का पैगाम भेजा, परन्तु व्यासजी ने अज्ञात व्यक्ति की यह खातिर मन्जूर करने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। महाराजा बीकानेर इस घटना से व्यासजी से बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने इस सम्बन्ध में तारीख 21 फरवरी, 1937 को जो पत्र जोधपुर के प्रधानमंत्री डोनाल्ड फील्ड को लिखा वह इतिहास की एक महत्वपूर्ण सामग्री बन गया है। इस पत्र में महाराजा ने कहा है कि 'निःसन्देह श्री जयनारायण व्यास राजशाही की आलोचना करने में सबसे तीखे रहे हैं। लेकिन वे पक्के ईमानदार हैं। उनको कोई भ्रष्ट नहीं कर सकता। वे अपनी राजनैतिक मान्यताओं के प्रति सत्यनिष्ठ हैं। देशी रजवाड़ों में मुश्किल से ही किसी को व्यासजी जैसा पवित्र पायेंगे, जो राजाओं के प्रति जन्मजात घृणा रखते हुए भी ईमानदार हो और देशी राज्यों का शासन ठीक प्रकार से चला कर भलाई करने की क्षमता रखता हो। रियासतों की वे हकूमतें जिनकी आज हम निगरानी करते हैं, अन्त में हमारे इन्हीं दुश्मनों के हाथों में जायेंगी। ऐसी स्थिति में हमारा कर्तव्य है कि हम यह ध्यान रखें कि विरोधी खेमे में से भले आदमी आगे आयें और जब हम हटें तो ऐसे ही लोग शासन की बागडोर सम्भालें।[1]

आर्थिक कठिनाइयों के कारण व्यासजी को 'अखण्ड भारत' बन्द कर देना पड़ा। व्यासजी ने फिल्मों में काम करने का निर्णय किया। परन्तु कुछ मित्रों के आग्रह से उन्होंने यह विचार त्याग दिया। वे पुनः ब्यावर चले गये। वहाँ से वे तारीख 22 जुलाई, 1937 को जोधपुर के लिये रवाना हुए। परन्तु पुलिस द्वारा उन्हें मारवाड़ जंकशन पर ही रोक दिया गया। उनसे कहा गया कि उनके मारवाड़ प्रवेश पर प्रतिबन्ध है। पुलिस उन्हें ट्रक में बैठाकर ब्यावर ले गई और उन्हें वहीं छोड़ आयी। उधर जोधपुर नगर में सरकार का दमन-चक्र तेज हुआ। 'मारवाड़ की अवस्था' नामक पर्चा निकालने के सम्बन्ध में तीन व्यक्तियों को दो-दो माह की सजा दी गई। इसी प्रकार श्री अचलेश्वर प्रसाद शर्मा को राजद्रोह के अभियोग में ढाई वर्ष की सजा दी गयी।

हरिपुरा कांग्रेस में स्वीकृत प्रस्ताव के अनुसार 16 मई, 1948 को जोधपुर के सार्वजनिक कार्यकर्ताओं ने मारवाड़ लोक परिषद् की नींव डाली। संस्था का उद्देश्य था 'महाराजा की छत्र-छाया में उत्तरदायी शासन की स्थापना करना।' मारवाड़ में राजनैतिक जागृति के जनक श्री जयनारायण व्यास निर्वासित अवस्था में ब्यावर में रह रहे थे। लोक परिषद् की स्थापना के कुछ महीनों बाद जोधपुर सरकार ने व्यास जी को अपने पिता की बीमारी के सिलसिले में कतिपय शर्तों के साथ जोधपुर राज्य में प्रवेश करने की इजाजत देदी। फरवरी, 1939 में सरकार ने व्यास जी के ऊपर लगाये गये सभी प्रतिबन्ध हटा

1. डा. करणीसिंह—दी रिलेशन्स आफ दी हाउस आफ बीकानेर विद दी सेंट्रल पावर्स, पृ. 378.

लिये। उन्हीं दिनों सरकार ने एक सलाहकार मण्डल की स्थापना की। व्यास जी इस सलाहकार मण्डल के सदस्य नियुक्त किये गये। इसी वर्ष मारवाड़ में भयंकर अकाल पड़ा। व्यास जी की देख-रेख में लोक परिषद् के कार्यकर्त्ता अकाल राहत कार्य में जुट गये। सहज ही लोकपरिषद् की लोकप्रियता बढ़ गई और राज्य में परिषद् की शाखाओं का जाल बिछ गया। फरवरी, 1940 में लोक परिषद् की जोधपुर शाखा ने राजपूताना स्टेट्स पीपुलस कान्फ्रेन्स का एक जलसा बुलाने का निर्णय किया। इस सम्बन्ध में लोक-परिषद् के अध्यक्ष श्री रणछोड़दास गट्टानी तारीख 29 मार्च, 1940 को महात्मा गांधी से मिले। परिषद् की बढ़ती हुई लोकप्रियता से जोधपुर सरकार सहम गई। उसने अचानक ही मारवाड़ लोक परिषद् को गैर-कानूनी घोषित कर दिया और व्यास जी सहित 7 कार्यकर्त्ताओं को गिरफ्तार कर लिया। यह आन्दोलन कई दिनों तक चलता रहा। इस आन्दोलन में सैकड़ों कार्यकर्त्ता गिरफ्तार हुए। महात्मा गांधी ने "हरिजन" में जोधपुर सरकार की दमनकारी नीति की भर्त्सना की। अन्त में लोक परिषद् और सरकार के बीच समझौता हो गया। व्यास जी ने लोक परिषद् को मारवाड़ पब्लिक सोसाईटीज एक्ट के अन्तर्गत रजिस्टर करवाना स्वीकार कर लिया। उन्होंने सरकार को विश्वास दिलाया कि परिषद् द्वितीय महायुद्ध के दौरान ऐसी कोई कार्यवाही नहीं करेगी, जिससे कि युद्ध कार्यों में बाधा पड़े। दूसरी ओर सरकार ने लोक परिषद् के महाराज के तत्वावधान मे उत्तरदायी सरकार की स्थापना करने के उद्देश्य को स्वीकार कर लिया। सरकार ने सभी राजनैतिक बन्दियों को रिहा कर दिया।

जयपुर :

जयपुर के राजा-महाराजाओं ने एक ओर जहाँ राजस्थान की कला और संस्कृति को समृद्ध बनाया, वहीं दूसरी ओर वहीं के एक नागरिक श्री अर्जुनलाल सेठी ने राजस्थान मे क्रान्ति और जन जाग्रति का अलख जगाया। जयपुर के एक सभ्रान्त परिवार में तारीख 9 सितम्बर, 1880 मे पैदा हुए श्री सेठी ने महाराजा कॉलेज से जब बी. ए. पास किया तो उन्हें राज्य की ओर से एक उच्चपद देने का प्रस्ताव किया गया। पर विद्यार्थी काल में ही देश भक्ति के रंग में रंगे हुए इस युवक ने प्रस्ताव को ठुकराते हुए कहा "यदि अर्जुनलाल राज्य सेवा करेगा तो अंग्रेजों को देश के बाहर निकाल फेंकने का काम कौन करेगा ?"

सेठी जी ने जयपुर में सन् 1905 में जैन-शिक्षा-प्रचारक-समिति की स्थापना की और उसके तत्वावधान में वर्द्धमान विद्यालय, वर्द्धमान छात्रावास और वर्द्धमान पुस्तकालय चलाए। सेठीजी स्वयं जैन-दर्शन-शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान थे, पर सेठी जी ने अपनी विद्वता और संस्थाओं का उपयोग जैन धर्म के प्रसार के लिए नहीं वरन् देश में भावी क्रान्ति के लिये युवकों को तैयार करने में किया।

उन दिनों सेठी जी का महाविप्लवी नायक श्री रासबिहारी बोस और उनके साथी शचीन्द्र सान्याल तथा मास्टर अमीर चन्द से गहरा सम्पर्क हो गया था। इन क्रान्तिकारियों ने अंग्रेजी सत्ता को उखाड़ फैंकने के लिये भारत भर में हिंसक-क्रान्ति की योजना बनाई। राजस्थान में इस क्रान्ति के आयोजन का भार शाहपुरा के श्री केसरी सिंह बारहट, खरवा ठाकुर गोपाल सिंह, ब्यावर के सेठ दामोदरदास राठी एवं जयपुर के सेठी जी पर डाला। सेठी जी की जिम्मेदारी मूलतः नवयुवकों को वर्द्धमान विद्यालय में समुचित प्रशिक्षण देकर भावी क्रान्ति के लिये तैयार करना था।

कई वर्षों के बाद सन् 1931 में स्व. श्री कपूर चन्द पाटनी ने प्रजामण्डल की स्थापना की, पर उन्हें आवश्यक जनसहयोग नहीं मिला। अतः काफी समय तक संस्था निर्जीव ही रही। उन दिनो वनस्थली में श्री हीरालाल शास्त्री ने अपनी संस्था "जीवन कुटीर" में कार्यकर्त्ताओं की अच्छी मण्डली तैयार कर ली थी। सन् 1936-37 में सेठ जमनालाल बजाज की प्रेरणा से जयपुर राज्य प्रजामण्डल का पुनर्गठन किया गया। श्री शास्त्री अपनी जीवन कुटीर मण्डली के साथ प्रजामण्डल के काम में जुट गये। जयपुर के एडवोकेट श्री चिरंजीलाल मिश्रा प्रजामण्डल के अध्यक्ष, श्री शास्त्री महामन्त्री और श्री पाटनी संयुक्त मन्त्री बनाये गये। प्रजामण्डल के अन्य प्रमुख सदस्य थे बाबा हरिश्चन्द्र, सर्वश्री हंस डी. राय, लादूराम जोशी, टीकाराम पालीवाल और पूर्ण चन्द्र जैन।

सन् 1938 में प्रजामण्डल का प्रथम अधिवेशन जयपुर में करने एवं अध्यक्ष सेठ जमनालाल बजाज को बनाने का निर्णय लिया गया। सेठजी मूलतः सीकर के निवासी थे। उस समय वे वर्धा में रहते थे और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कोषाध्यक्ष थे। जयपुर सरकार ने आपत्ति की कि मनोनीत अध्यक्ष का जुलूस जयपुर के मुख्य बाजारों में न निकाला जाये। प्रजामण्डल ने सरकार की शर्त को मानना उचित समझा। सभापति का जुलूस बड़ा शानदार निकला, जिसमे हजारों लोगों ने भाग लिया। राज्य में प्रजामण्डल की शाख जम गयी।

सन् 1938–39 में राजस्थान के अन्य भागों की तरह जयपुर राज्य में भी अकाल पड़ा। प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री बजाज ने ता. 1 नवम्बर, 1938 को एक विज्ञप्ति जारी कर प्रजामण्डल के कार्यकर्ताओं से अपील की कि उन्हें अपनी सभी प्रवृत्तियाँ स्थगित कर राज्य मे अकाल राहत कार्य में लग जाना चाहिये। उन्होंने इस समाचार का खण्डन किया कि प्रजामण्डल निकट भविष्य में कोई आन्दोलन छेड़ने वाला है। बजाजजी ने राज्य में प्रजामण्डल द्वारा शुरू किये गये राहत कार्यों का जायजा लेने के लिये जयपुर राज्य का दौरा करने का निर्णय किया। ता. 16 दिसम्बर को राज्य ने बजाजजी के जयपुर प्रवेश पर पाबन्दी लगा दी। बजाजजी जयपुर राज्य मे प्रवेश करने के लिये ता. 29 दिसम्बर को सवाई माधोपुर स्टेशन पहुंचे। वहाँ आईजी. पुलिस एफ. एस. यंग की उपस्थिति में उन्हे वह आज्ञा बतायी गयी जिसके द्वारा उनके राज्य प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। बजाजजी गांधीजी व अन्य कांग्रेस नेताओं से सलाह लेने के लिये दिल्ली लौट गये। जब यह खबर जयपुर पहुंची तो वहाँ से प्रजामण्डल का एक प्रतिनिधि मण्डल श्री हीरालाल शास्त्री के नेतृत्व मे बारदोली गया, जहाँ गांधी जी गये हुये थे। गांधीजी ने सलाह दी कि प्रजामण्डल को राज्य से बोलने, लिखने और संगठन बनाने के मूलभूत नागरिक अधिकारों की मांग करनी चाहिये। राज्य को भेजे जाने वाले पत्र का प्रारूप भी स्वयं गांधी जी ने ही तैयार किया।

श्री बजाज द्वारा राज्य के प्रधान मन्त्री को भेजे गये ता. 9 जनवरी, 1939 के पत्र मे कहा गया कि वे राज्य द्वारा जारी को गयी निषेधाज्ञा को तोड़कर ता. 1 फरवरी, 1939 को राज्य में प्रवेश करेंगे। पत्र मे आगे कहा गया कि यदि राज्य सभाये करने, जुलूस निकालने तथा संगठन बनाने की स्वतन्त्रता नही देता है तो प्रजामण्डल सिविल नाफरमानी करने को मजबूर होगा।[1]

---

1. श्री हीरालाल शास्त्री, 'प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र', पृ. 442-444

सरकार ने मांगें स्वीकार करने की जगह प्रजामण्डल को एक गैर कानूनी संस्था करार दिया। यहीं से संघर्ष की शुरूआत हो गयी। पूर्व सूचना के अनुसार श्री बजाज ने ता. 1 फरवरी को राज्य द्वारा लगायी गयी पाबन्दी को तोड़ कर राज्य में प्रवेश करने का प्रयत्न किया, पर उन्हें रोक लिया गया। इस प्रकार उन्होंने दो तीन प्रयत्न किये। पर राज्य की पुलिस ने हर बार उन्हें राज्य की सीमा से बाहर धकेल दिया। अन्त में वे 11 फरवरी, 1939 को जयपुर राज्य में प्रवेश करते हुए बैराठ के निकट गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हें मोरा सागर में नजरबन्द कर दिया गया। उसी रात्रि को 7 बजे जयपुर में शास्त्री सदन में चल रही प्रजामण्डल की कार्य समिति के बैठक में भाग ले रहे सर्वश्री हीरालाल शास्त्री, चिरंजीलाल अग्रवाल, हरिशचन्द्र शर्मा, कपूर चन्द पाटनी और श्री हंस डी. राय को पुलिस ने गिरफ्तार कर मोहनपुरा गांव के एक मकान में नजरबन्द कर दिया।

दूसरे ही दिन श्री चिरंजीलाल मिश्रा भी पकड़े गये। उन्हें भी मोहनपुरा कैम्प में रख दिया। अब सत्याग्रह के संचालन की जिम्मेदारी श्री गुलाब चन्द कासलीवाल और श्री दौलतमल भण्डारी ने उठायी। दोनों ने सत्याग्रह का संचालन बड़ी खूबी से किया। कुछ ही दिनों में आन्दोलन ने जोर पकड़ा। जयपुर शहर में जबरदस्त हड़ताल हुई। हर रोज हजारों लोग सत्याग्रहियों को विदा देने इकट्ठे हो जाते। राज्य के अन्य जिलों में भी आन्दोलन फैल गया। सर्वश्री टीकाराम पालीवाल, रामकरण जोशी, मुक्तिलाल मोदी, रूपचन्द सोगानी, सरदारमल गोलेछा, केवलचन्द मेहता और छगनलाल चौधरी आदि प्रमुख कार्यकर्ता पकड़ लिये गये। लगभग 600 गिरफ्तारियां हुई। सत्याग्रहियों को 6–6 माह की सजा दी गयी। इस प्रकार सत्याग्रह चल ही रहा था कि महात्मा गांधी ने मार्च, 1939 के तीसरे सप्ताह में सत्याग्रह स्थगित करने के आदेश दे दिये।

कुछ ही सप्ताह बाद जेल में बन्द प्रजामण्डल के नेताओं और सरकार के बीच अनौपचारिक रूप से समझौता वार्ता शुरू हुई। 5 अगस्त को प्रजामण्डल की कार्यकारिणी के सदस्य रिहा कर दिये गये। ता. 8 अगस्त को श्री बजाज भी छोड़ दिये गये। उस दिन जयपुर में श्री बजाज एवं प्रजामण्डल के नेताओं का जबरदस्त जलूस निकाला गया। कुछ दिनों बाद प्रजामण्डल ने संस्था को सोसाइटीज् रजिस्ट्रेशन एक्ट के अन्तर्गत पंजियन कराना स्वीकार कर लिया। दूसरी ओर सरकार ने प्रजामण्डल की मूलभूत अधिकारों की मांग स्वीकार कर ली। 1940 में श्री शास्त्री प्रजामण्डल के अध्यक्ष बने। प्रजामण्डल के कार्यकर्ताओं में मतभेद हो गये। श्री बजाज ने प्रजामण्डल में दिलचस्पी लेना बन्द कर दिया। फरवरी, 1942 में श्री बजाज का देहान्त हो गया। राजस्थान की रियासतों के जनआन्दोलन का एक रहनुमा सदा के लिये चल बसा।

बीकानेर :

बीकानेर में राजनैतिक संगठन स्थापित करने का प्रथम प्रयास बीकानेर के एक साधारण परिवार में उत्पन्न श्री मघाराम वैद्य ने किया। वैद्य ने ता. 4 अक्टूबर 1936 को "बीकानेर प्रजामण्डल" की स्थापना की। वैद्य स्वयं प्रजामण्डल के अध्यक्ष और लक्ष्मण दास स्वामी मन्त्री चुने गये। उनके अन्य सहयोगी थे श्री भिक्षालाल बोहरा, श्री सुरेन्द्र कुमार शर्मा, शेराराम आदि। उस समय बीकानेर में महाराजा गंगासिंह का शासन था।

उन्होंने तत्काल ही वैद्य जी को 6 वर्ष के लिये राज्य से निर्वासित कर प्रजामण्डल की भ्रूण हत्या कर दी। इस दिशा में दूसरा प्रयत्न सुप्रसिद्ध एडवोकेट श्री रघुवरदयाल ने किया। उन्होंने 22 जुलाई, 1942 को "बीकानेर राज्य प्रजा परिषद्" की स्थापना की। राजस्थान के लगभग सभी राज्यों में इस प्रकार की राजनैतिक संस्थायें सन् 1938–39 में स्थापित हो चुकी थीं। पर महाराजा गंगासिंह को सन् 1942 में भी यह मन्जूर नहीं था। महाराजा ने एक सप्ताह के बाद ही श्री गोयल को राज्य से निर्वासित कर दिया।

कोटा :

कोटा राज्य में जन जाग्रति के जनक थे पं. नयनूराम शर्मा। उन्होंने थानेदार के पद से स्तीफा देकर सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया था। वे श्री विजयसिंह 'पथिक' द्वारा स्थापित राजस्थान सेवा संघ के सक्रिय सदस्य बन गये। उन्होंने कोटा राज्य में बेगार विरोधी आन्दोलन चलाया। जिसके फलस्वरूप बेगार की सख्तियों में कमी आई। श्री शर्मा ने सन् 1934 में 'हाड़ौती प्रजामण्डल" की स्थापना की, पर कुछ समय बाद यह संस्था बेजान हो गयी। सन् 1939 में पं. नयनूराम शर्मा और पं. अभिन्न हरि ने राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने के उद्देश्य को लेकर कोटा राज्य प्रजामण्डल की स्थापना की। प्रजामण्डल का पहला अधिवेशन पं. नयनूराम शर्मा की अध्यक्षता में मंगरोल में हुआ। 14 अक्टूबर, 1941 को रामगंज मण्डी से अपने गांव निमाणा जाते हुए पं. शर्मा किसी गिरोह द्वारा बेरहमी से कत्ल कर दिये गये। उनके बाद पं. अभिन्न हरि ने प्रजामण्डल की बागडोर सम्भाली।

भरतपुर :

भरतपुर राज्य में राजनैतिक जाग्रति का ठोस प्रयास हरिपुरा कांग्रेस के बाद सन् 1938 में हुआ। श्री किशनलाल जोशी ने इसमें पहल की। श्री जोशी सन् 1930 के देशव्यापी नमक सत्याग्रह में भाग लेने के कारण अजमेर में चार माह की एवं शेखावाटी आन्दोलन के सम्बन्ध में 13 माह की सजा भुगत चुके थे। श्री जोशी ठाकुर देशराज के साथ रेवाड़ी आये और वहां जुबली ब्रेन अहीर हाई स्कूल में अध्यापन कार्य में रत भरतपुर के राष्ट्रीय विचारों के कार्यकर्ता सर्वश्री गोपीलाल यादव, मास्टर आदित्येन्द्र और युगलकिशोर चतुर्वेदी से मिले और तत्काल ही भरतपुर में प्रजामण्डल की स्थापना का निर्णय लिया। श्री यादव प्रजामण्डल के अध्यक्ष, ठा. देशराज और पं. रेवती शरण शर्मा उपाध्यक्ष, श्री किशन लाल जोशी महामन्त्री, श्री युगलकिशोर चतुर्वेदी सहमन्त्री और मा. आदित्येन्द्र कोषाध्यक्ष चुने गये।

इसी वर्ष भरतपुर प्रजामण्डल ने फतेहपुर सीकरी में पूर्वी राजस्थान की जनता का राजनैतिक सम्मेलन किया, जिसकी अध्यक्षता सुप्रसिद्ध साम्यवादी नेता एम. एन. राय ने की। इस बीच प्रजामण्डल के पदाधिकारी राज्य से प्रजामण्डल को मान्यता देने के सम्बन्ध में प्रयत्न करते रहे। पर जब राज्य ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया तो मार्च, 1939 में ठाकुर देशराज की धर्मपत्नी श्रीमती देवी के नेतृत्व में प्रजामण्डल के प्रतिनिधि मण्डल ने राज्य सरकार के समक्ष अल्टीमेटम प्रस्तुत कर मांग की कि या तो वे एक माह के भीतर प्रजामण्डल को मान्यता दे दें अथवा सत्याग्रह का सामना करें। अल्टीमेटम का सरकार पर कोई असर नहीं पड़ा। फलतः अप्रेल, 1939 में प्रजामण्डल ने राज्य के विभिन्न नगरों में आम सभाओं का आयोजन कर सत्याग्रह का श्रीगणेश किया। ठा. देशराज,

सर्वश्री किशन लाल जोशी, जगन्नाथ कक्कड़, गौरीशंकर मित्तल, मा. फकीरचन्द, दौलतराम शर्मा, घनश्याम शर्मा, ठाकुर पूरण सिंह, सांवलप्रसाद चतुर्वेदी, कलवाराम वैश्य, रमेश स्वामी, पं. हुक्मचन्द, श्री गोकुल वर्मा और श्रीमती सत्यवती शर्मा आदि प्रमुख कार्यकर्ता सत्याग्रह करते हुये गिरफ्तार कर लिये गये। मा. आदित्येन्द्र और युगल किशोर चतुर्वेदी पर सत्याग्रह के संचालन की जिम्मेदारी डाल दी गई। उन्होंने सर्वश्री-रेवती शरण शर्मा, जगपत सिंह, दौलतराम शर्मा आदि साथियों के साथ अचनेरा (उत्तरप्रदेश) में शिविर लगाया। तत्पश्चात् उन्होंने मथुरा से सत्याग्रह का संचालन किया। यह आन्दोलन लगभग 8 माह चला, जिसमें 600 से अधिक सत्याग्रही गिरफ्तार हुये। इनमें 32 महिलायें भी थीं। तारीख 25 अक्टूबर, 1939 को राज्य सरकार और प्रजामण्डल के बीच समझौता हो गया। इस समझौते के फलस्वरूप प्रजामण्डल का नाम बदल कर प्रजापरिषद् रख दिया गया। सरकार ने प्रजा परिषद् को मान्यता प्रदान कर दी। लगभग सभी राजनैतिक वन्दी रिहा कर दिये गये।

अलवर :

पं. हरिनारायण शर्मा और श्री कुंज विहारी लाल मोदी के प्रयत्नों से सन् 1938 में अलवर राज्य प्रजामण्डल की स्थापना हुई। राज्य ने उसी वर्ष सरकारी पाठशालाओं में फीस-वृद्धि कर दी। प्रजामण्डल ने इस वृद्धि का विरोध किया और आन्दोलन छेड़ दिया। फलस्वरूप सर्वश्री हरिनारायण शर्मा, लक्ष्मणस्वरूप त्रिपाठी, इन्द्रसिंह आजाद, नत्थूराम मोदी, और राधास्वरूप आदि कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हें राजद्रोह के अभियोग में सजायें हुई। इस आन्दोलन के दौरान सरकारी स्कूल के एक अध्यापक श्री भोलानाथ को राजद्रोहात्मक प्रवृत्तियों के कारण राज्य सेवा से पृथक कर दिया। वे प्रजामण्डल में शामिल हो गये। उन्हीं दिनों पुलिस ने एक बचकाना हरकत की। उसने प्रजामण्डल के अलवर स्थित कार्यालय पर कब्जा कर ताला लगा दिया। प्रजामण्डल के कार्यकर्ताओं ने कार्यालय पर पुनः कब्जा कर उस पर तिरंगा झण्डा फहरा दिया। सरकार ने कार्यकर्ताओं पर मुकदमा चलाया, जिसमें मास्टर भोला नाथ और श्री द्वारिकादास गुप्ता को सजायें हुई।

सन् 1940 में राज्य द्वारा द्वितीय विश्व युद्ध के लिये अलवर की जनता से जबरदस्ती चन्दा वसूल किया जाने लगा तो प्रजामण्डल ने इसका विरोध किया। पं. हरिनारायण शर्मा और मास्टर भोलानाथ को भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें कुछ समय बाद रिहा कर दिया। राज्य में राजनैतिक आन्दोलन का एक चरण समाप्त हुआ।

करौली :

करौली में राजनैतिक जाग्रति की शुरुआत करौली राज्य सेवक संघ के माध्यम से हुई। संघ के अध्यक्ष मुंशी त्रिलोकचन्द माथुर ने सितम्बर, 1938 में प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी अजमेर की एक शाखा करौली में स्थापित की। जब देश की अन्य रियासतों में प्रजामण्डल बने तो श्री माथुर ने अप्रेल, 1939 में करौली में भी प्रजामण्डल की स्थापना की। प्रजामण्डल समय-समय पर प्रस्ताव स्वीकार कर राज्य में शासन सुधार करने की मांग करता रहा। पर प्रजामण्डल और राज्य के बीच कोई टकराव नहीं हुआ। श्री माथुर की मृत्यु के बाद सन् 1946 में चर्खा संघ के एक कार्यकर्ता श्री चिरंजीलाल शर्मा ने प्रजामण्डल की बागडोर सम्भाली।

धौलपुर :

श्री ज्वाला प्रसाद जिज्ञासु और श्री जौहरीलाल इन्दु ने सन् 1934 में धौलपुर में नागरी प्रचारणी सभा की स्थापना की । जिज्ञासु ने हरिजन उत्थान का भी कार्य शुरू किया । जिज्ञासु की इन प्रवृत्तियों से धौलपुर मे वड़ी जाग्रति हुई । इसका एक लाभ यह हुआ कि जव सन् 1938 में दोनों कार्यकर्ताओं ने प्रजामण्डल की स्थापना की तो उन्हें जनता का वड़ा सहयोग मिला । प्रजामण्डल ने राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने की मांग की । राज्य ने दमनचक्र चलाया । श्री जिज्ञासु के पुत्र ओम प्रकाश शर्मा तथा रामदयाल, रामप्रसाद, वांकेलाल, केशवदेव, केदारनाथ आदि कई कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिये गये । ये कार्यकर्ता कई महिनों बाद जेल से रिहा किये गये । श्री जिज्ञासु ने राज्य से वाहर रह कर आन्दोलन का संचालन किया । श्री इन्दु को राज्य से निर्वासित कर दिया गया । पर जव वे सन् 1940 में पावन्दी तोड़ कर राज्य में घुसे तो उन्हें पकड़ लिया गया और लगभग 5 साल बाद रिहा किया गया ।

सिरोही :

सिरोही के कुछ उत्साही युवकों ने बम्बई मे सन् 1934 में प्रजामण्डल की स्थापना की थी जिसका उद्देश्य महाराव की छत्रछाया में एक उत्तरदायी सरकार की स्थापना करना था । इसी प्रकार का एक प्रयत्न सन् 1936 में सिरोही में भी किया गया । पर इन गतिविधियों का कोई विशेष परिणाम नही निकला । इन वर्षों में सिरोही के हाथल गांव में पैदा हुये श्री गोकुलभाई भट्ट बम्बई के विलेपारले क्षेत्र में कांग्रेस को संगठित कर रहे थे । सन् 1938 में हरिपुरा कांग्रेस मे लिये गये निर्णय के अनुसार श्री भट्ट ने सिरोही पहुंच कर दिनांक 23 जनवरी, 1939 को प्रजामण्डल की स्थापना की । 8 सितम्बर, 1939 को गोकुलभाई ने सिरोही प्रजामण्डल के तत्वावधान मे एक सार्वजनिक सभा की । पुलिस ने लाठी चार्ज किया । कई लोगों के चोटें आई, जिसमें स्वयं श्री भट्ट भी सम्मिलित थे । गांधी जी ने अपने पत्र "हरिजन सेवक" में इस घटना को अपनी टिप्पणी के साथ प्रकाशित किया । उसी वर्ष श्री रामेश्वरदयाल अग्रवाल को प्रजामण्डल की गतिविधियों मे भाग लेने के आरोप में 8 माह जेल में रखा गया । इसी प्रकार श्री धर्मचन्द सुराना को 6 माह की सजा दी गयी । प्रजामण्डल के संस्थापकों में श्री गोकुलभाई भट्ट के अलावा सर्वश्री धर्मचन्द सुराणा, घीसालाल चौधरी, रामेश्वर दयाल अग्रवाल, वेलराज और पूनमचन्द आदि कार्यकर्ता थे ।

शाहपुरा :

सुप्रसिद्ध बीजोलिया आन्दोलन के कर्मठ नेता श्री माणिक्य लाल वर्मा मार्च 1938 में मेवाड़ मे प्रजामण्डल की स्थापना हेतु साईकल पर सवार होकर निकल पड़े थे । वे जव शाहपुरा से होकर गुजरे तो वहां उन्हें सर्वश्री रमेशचन्द्र ओझा और लादूराम व्यास जैसे उत्साही नवयुवक मिल गये । वर्माजी की प्रेरणा से इन नवयुवको ने सन् 1938 मे शाहपुरा राज्य मे प्रजामण्डल की स्थापना की । राज्य ने प्रजामण्डल की गतिविधियों में कोई दखल नही किया ।

किशनगढ़ :

किशनगढ़ राज्य में श्री कान्तिचन्द्र चौथाणी के प्रयत्नो से सन् 1939 में प्रजामण्डल की स्थापना हुई । श्री जमाल शाह प्रजामण्डल के अध्यक्ष और श्री महमूद मन्त्री बनाये गये । राज्य की ओर से प्रजामण्डल की स्थापना का कोई विरोध नही किया गया ।

जैसा कि उपरोक्त विवरण से प्रकट होता है हरिपुरा कांग्रेस के निर्णय के फलस्वरूप राजस्थान की उदयपुर, जोधपुर, जयपुर, अलवर, बीकानेर, भरतपुर, धौलपुर, कोटा, सिरोही, किशनगढ़, शाहपुरा आदि रियासतों में उत्तरदायी शासन स्थापित करने के उद्देश्य को लेकर प्रजामण्डल, प्रजा-परिषद् अथवा लोकपरिषद् के नाम से राजनैतिक संगठन स्थापित हो चुके थे। शेष राज्यों में भी थोड़ी बहुत राजनैतिक गतिविधियाँ चल रही थीं, पर वहाँ पर बाकायदा राजनैतिक संगठन बनने में काफी समय लगा। कहीं-कहीं तो पं. नेहरू द्वारा केन्द्र में अन्तरिम सरकार बना लेने के बावजूद भी ऐसे संगठन नहीं बन पाये।

11

भारत छोड़ो आन्दोलन और राजस्थान

तारीख 7 और 8 अगस्त, 1942 को बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति का अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन में महासमिति ने फैसला किया कि भारत की स्वतन्त्रता के लिये महात्मा गांधी के नेतृत्व में जन-संघर्ष शुरू किया जाय। महासमिति ने एक ओर महात्मा गांधी से इस नाजुक घड़ी में राष्ट्र का मार्ग-दर्शन करने की प्रार्थना की और दूसरी ओर भारत की जनता से अपील की कि संघर्ष के दौरान वे एक अनुशासित सिपाही की भांति महात्मा गांधी के आदेशों का पालन करें।[1]

उक्त अवसर पर रियासतों के प्रजामण्डल के नेताओं के सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए महात्मा गांधी ने कहा कि ब्रिटिश भारत में भावी संघर्ष का नारा होगा 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' और रियासतों में नारा होगा 'राजाओं अंग्रेजों का साथ छोड़ो।[2] उन्होंने कहा कि प्रजामण्डलों को अपने-अपने राजा-महाराजाओं को यह चुनौती देनी चाहिये कि वे ब्रिटिश सरकार से तुरन्त अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लें। यदि वे इस मांग को स्वीकार न करें तो प्रजामण्डलों को चाहिये कि वे जन-संघर्ष शुरू कर दें। इस प्रकार 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के बाद यह पहला अवसर था कि जब ब्रिटिश भारत के साथ ही साथ रियासती भारत को भी अंग्रेजों के विरुद्ध जन संघर्ष छेड़ने का आह्वान किया गया।

दूसरे ही दिन अर्थात् 9 अगस्त, 1942 को प्रातः 5.00 बजे से पूर्व ही महात्मा गांधी और कांग्रेस के चोटी के नेता गिरफ्तार कर लिये गये। महात्मा गांधी ने गिरफ्तारी के पूर्व देशवासियों को अपने संदेश में स्वतन्त्रता के इस अन्तिम संग्राम में 'करो या मरो' (डू ओर डाई) का आह्वान किया। गांधी जी और कांग्रेस के अन्य नेताओं की गिरफ्तारी की देश में तीव्रतम प्रतिक्रिया हुई। जगह-जगह जुलूस, सभाओं और हड़तालों का आयोजन हुआ। विद्यार्थी विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों और पाठशालाओं से बाहर आगये और आन्दोलन में कूद पड़े। कल कारखाने बन्द हो गये। स्थान-स्थान पर रेल की पटरियां उखाड़ दी गयी। तार और टेलीफोन के तार काट दिये गये। देश के कई भागों में स्थानीय जनता ने समानान्तर सरकारें स्थापित कर दीं। उधर जवाब में ब्रिटिश सरकार ने भारी दमनचक्र चलाया। समाचार-पत्रों पर सेन्सर लगा दिया। जगह-जगह पुलिस ने गोलियां चलाई। हजारों आदमी मारे गये। लाखों गिरफ्तार कर लिये गये। देश की आजादी की यह सबसे बड़ी लड़ाई थी। राजस्थान की जनता भी इस लड़ाई में पीछे नहीं रही।

---

1. "हरिजन", ता, 9 अगस्त, 1942 पृ. 263
2. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना–"जो देश के लिये जिये" पृ. 139

जोधपुर :

जोधपुर राज्य में घटना चक्र ने इस तरह का रूप धारण कर लिया कि जिससे देश में भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू होने के पहले ही मारवाड़ लोक परिषद् और राज्य के बीच संघर्ष शुरू हो गया। सन् 1941 में जोधपुर नगर पालिका के चुनाव हुए। इन चुनावों में मारवाड़ लोक परिषद् को विजय हुई। श्री जयनारायण व्यास स्वयं नगर पालिका के अध्यक्ष चुने गये। नगर पालिका में रोज-मर्रा के कार्यों में सरकार की ओर से दखल दिया जाने लगा। व्यासजी ने सरकार के इस रवैये की आलोचना की तो जोधपुर के प्रधान मंत्री सर डोनाल्ड फील्ड ने अपने एक पत्र में व्यास जी पर यह दोषारोपण किया कि उनका जनतंत्र में कोई विश्वास नहीं है और उनके विचारों का नाजी एवं फासिस्ट सिद्धान्तों से अधिक मेल खाता है।[1] इस सब कारणों से राज्य में एक बार फिर राजनैतिक वातावरण खराब हो गया।

सितम्बर, 1941 में राज्य सलाहकार-परिषद् के चुनावों की घोषणा की गयी। लोक परिषद् ने चुनावों के बहिष्कार करने का निर्णय किया। इसी बीच लाटाकून्ता और लाग बागों की समस्या को लेकर चन्दावल और नीमाज के जागीर इलाकों में गम्भीर स्थिति पैदा हो गयी। परिषद् के कार्यकर्ताओं और जागीरदारों के बीच तनाव पैदा हो गया और आपस में झड़पें हो गयीं। परिषद् के कार्यकर्ताओं के घर जला दिये गये, पर राज्य सरकार ने जागीरदारों के विरुद्ध कार्यवाही नहीं की। महात्मा गांधी ने हरिजन के ता. 10 मई, 1942 के अङ्क में इन घटनाओं की निन्दा की।

लोक परिषद् ने सर डोनाल्ड को अपने पद से हटाने और राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने के लिये आन्दोलन करने का निर्णय किया। ता. 25 मई, 1942 को श्री जयनारायण व्यास और परिषद् के अन्य सदस्यों ने जोधपुर नगरपालिका की सदस्यता से इस्तीफा दे दिया। व्यास जी ने लोक परिषद् का विधान स्थगित कर अपने आपको पहला "डिक्टेटर" घोषित कर दिया। व्यास जी परिषद् के एक कार्यकर्ता फतेह राज जोशी के के साथ तारीख 26 मई, 1942 को गिरफ्तार कर लिये गये।

राज्य में सत्याग्रह का दौर चल पड़ा[1] इस आन्दोलन में जेल जाने वालों में प्रमुख थे सर्वश्री मथुरादास माथुर, स्वामी चेतनदास, अचलेश्वर प्रसाद शर्मा, राधाकृष्ण तात, देवनारायण व्यास,[2] छगनराज चौपासनीवाला, पुरुषोत्तमदास नैयर, गणेशीलाल व्यास स्वामी कृष्णानन्द, अभयमल जैन, भँवरलाल सर्राफ, वंशीधर पुरोहित, रणछोड़दास गट्टानी, संत लाडाराम, सुमनेश जोशी, डा. श्रीचन्द जैसलमेरिया, केवलचन्द मोदी, श्री गोपाल मराठा, गोपालकृष्ण जोशी, मूलराज पुरोहित, युगराज बोड़ा, और राधाकृष्ण पुरोहित (सभी जोधपुर से), सर्वश्री बालकृष्ण व्यास, बालकृष्ण थानवी, अम्बालाल शर्मा, देवकरण थानवी, बालकृष्ण जोशी और मनसुखलाल दर्जी (सभी फलोदी से), सर्वश्री मांगीलाल त्रिवेदी (चण्डावल), शिवदयाल दवे (नागौर), श्री कृष्णदत्त शर्मा (पीपाड़) चुन्नीलाल शर्मा (लाडनू), पुखराज (बिलाड़ा), माधोलाल सुथार (नीमाज) और वासुदेव भटनागर (सोजत)। इनके अलावा सत्याग्रह में जो महिलाएं गिरफ्तार हुई उनमें श्रीमती गोरजा देवी जोशी, श्रीमती सावत्री देवी भाटी, श्रीमती सिरेकंवर व्यास और श्रीमती राजकोर व्यास प्रमुख थीं।

---

1. सर डोनाल्ड का व्यास जी को ता. 14 जुलाई, 1941 का पत्र।
2. स्व. श्री देवनारायण व्यास श्री जयनारायण व्यास के सुपुत्र थे।

जेल में सत्याग्रहियो के साथ साधारण कैदियों की तरह व्यवहार किया गया। उन्हे खराब खाना दिया गया। उन्हें न तो समाचार-पत्र ही दिये गये, और न खुले में सोने की इजाजत ही दी गयी। इस पर व्यास जी सहित 41 सत्याग्रहियों ने जेल में भूख हड़ताल कर दी। अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् के अध्यक्ष पं० जवाहरलाल नेहरू ने श्री द्वारका नाथ काचरू और महात्मा गांधी ने श्री श्री प्रकाश को स्थिति का अध्ययन करने जोधपुर भेजा। दोनों की रिपोर्ट प्राप्त होने पर महात्मा गांधी ने जोधपुर की स्थिति पर '21 जून 1942 के 'हरिजन' अङ्क मे पूरा सम्पादकीय लेख लिखा जिसमे उन्होने चेतावनी दी कि यदि श्री जयनारायण व्यास जेल मे भूख हड़ताल के दौरान मर गये तो उसकी जिम्मेदारी उन लोगों पर होगी, जिनके द्वारा शिकायत दूर न करने के कारण उन्हें और उनके साथियो को भूख हड़ताल करनी पड़ी। इसी बीच भूख हड़ताल करने वाले एक कार्यकर्ता श्री बाल मुकन्द बिस्सा का स्वास्थ्य खराब हो गया। उन्हें कारागृह से अस्पताल मे ले जाया गया, जहाँ वे ता. 19 जून, 1942 को शहीद हो गये। अन्त मे श्री प्रकाश ने बीच में पड़ कर राजनैतिक बन्दियो के साथ जेल में उचित व्यवहार करने की व्यवस्था करवाई।

8 अगस्त, 1942 को महात्मा गांधी की गिरफ्तारी के साथ ही देश में "भारत छोड़ो" आन्दोलन छिड़ गया। इससे मारवाड़ मे भी आन्दोलन में तेजी आयी। अब तक परिषद् के जो कार्यकर्त्ता संगठन की दृष्टि से बाहर थे, वे भी आन्दोलन मे कूद पड़े। इनमें प्रमुख थे सर्व श्री द्वारका प्रसाद पुरोहित, हरेन्द्र कुमार चौधरी, तुलसी दास राठी, छगन लाल पुरोहित, बछराज जोशी, (सभी जोधपुर से), सर्व श्री गोपाल लाल पुरोहित, शिवकरण थानवी, शंकर लाल स्वर्णकार और सम्पत लाल कूंकड (सभी फलौदी से) और श्री गणेशराम चौधरी (लाडनू) आदि। इनके अलावा जोधपुर से श्री गंगादास भी अपनी 17 वर्षीय राज्य सेवा को ठोकर मार कर सत्याग्रह मे शामिल हुये। वे अपने पुत्र श्री तारक प्रसाद व्यास एवं परिवार के 7 सदस्यो सहित जेल मे गये।

देश के अन्य भागो की तरह मारवाड़ का विद्यार्थी समाज भी भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान क्रान्तिकारी गतिविधियों मे लग गया था। जोधपुर मे अक्टूबर, 1942 में पहला बम केस हुआ, जिसमें सर्व श्री लालचन्द जैन, हरवल सिंह, सोहनमल लोढा, देवराज जैन, उगमराज मुणोत, प्रेमराज बोड़ा, मनोहर लाल और बाल किशन आदि युवा विद्यार्थी शामिल थे। उनका इरादा पुलिस लाइन्स के रेकार्ड रूम आदि को उड़ाने का था। पर वे लोग पकड़े गये और जेल मे डाल दिए गए, जहाँ उन्हे अमानुषिक यातनाये दी गयी।

दूसरे बम केस मे अप्रेल, 1943 में गिरफ्तार किये गये युवको मे थे सर्व श्री जोरावर मल बोड़ा, रामचन्द्र बोड़ा, सूरज प्रकाश पापा, पारसमल सिंघवी, सीताराम सोलंकी, श्याम पाडे, श्याम सुन्दर व्यास, विजय किशन, किस्तूरचन्द पुरोहित और हरिश बनावर। इनमे से सर्व श्री जोरावर मल बोड़ा, रामचन्द्र बोड़ा और सूरज प्रकाश पापा को 8-8 वर्ष कारावास के अलावा जुर्माने की सजायें दी गयी। शेष को 2 वर्ष से 4 वर्ष के कारावास की सजाये दी गयी। इन युवकों ने बम बनाने का कारखाना स्थापित किया और जोधपुर में स्टेडियम, म्यूनिसिपल ऑफिस, रेजीडेन्सी और चर्च मे बम विस्फोट किये थे जिसने सरकार मे खलबली मच गयी।

राजस्थान मे सन् 1942 के आन्दोलन मे जोधपुर राज्य का महत्वपूर्ण योग रहा। इस आन्दोलन मे लगभग 400 व्यक्ति जेल मे गए।

8 नवम्बर, 1942 को जयपुर प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री हीरालाल शास्त्री ने जयपुर के प्रधान मंत्री सर मिर्जा को लिखा है कि समय आ गया है जबकि जयपुर की तरह जोधपुर में चल रहे आन्दोलन का भी समाधान निकाला जाये। उन्होंने लिखा कि वे इस सम्बन्ध में जोधपुर के प्रधान मंत्री सर डोनाल्ड फील्ड के विचार जान लें और यदि वे तैयार हों तो "मैं इस सम्बन्ध में लोक परिषद् के नेताओं से बात कर समस्या का समाधान निकालने का प्रयत्न कर सकता हूं।" सर मिर्जा ने सर डोनाल्ड को इस सम्बन्ध में पत्र भी लिखा। पर जोधपुर में उस समय जैसी स्थिति थी, उसमें न तो सर डोनाल्ड ही और न श्री जयनारायण व्यास ही श्री शास्त्री की पहल का स्वागत कर सकते थे। फलतः शास्त्री जी के इस प्रयत्न का कोई फल नहीं निकला। श्री शास्त्री ने इस सम्बन्ध में एक और प्रयत्न मई, 1943 में किया, पर उसका भी कोई नतीजा नहीं निकला।

21 नवम्बर, 1942 की रात्रि को केन्द्रीय कारागृह जोधपुर में राजनैतिक बन्दियों को पीटा गया। सर्व श्री व्यास, सुमनेश जोशी, छगन लाल चौपासनीवाला, मोती लाल आदि राजनैतिक बन्दियों को गम्भीर चोटें आईं। इस दुर्घटना के तुरन्त बाद व्यास जी को कतिपय सत्याग्रहियों के साथ सिवाना किले में भेज दिया। सर्व श्री मथुरादास माथुर, फतेहराज, गणेशराज व्यास और राधाकृष्ण तात आदि को जालौर किले में और अन्य सत्याग्रहियों को दौलतपुरा किले में बन्द कर दिया गया।

मेवाड़ :

7 अगस्त, 1942 को बम्बई में कांग्रेस महासमिति के ऐतिहासिक अधिवेशन के अवसर पर महात्मा गांधी के सानिध्य में हुई रियासती नेताओं की बैठक में भाग लेकर श्री माणिक्य लाल वर्मा बाहर आये तो इन्दौर के एक मित्र ने उनसे पूछा कि कांग्रेस द्वारा छेड़े जाने वाले भारत छोड़ो आन्दोलन के संदर्भ में मेवाड़ प्रजा मण्डल की क्या स्थिति रहेगी तो उन्होंने तत्क्षण उत्तर दिया "भाई हम तो मेवाड़ी हैं, हर बार हर-हर महादेव बोलते आये हैं, इस बार भी बोलेंगे।[1] स्पष्ट था किसी भी अखिल भारतीय आन्दोलन से मेवाड़ या किसी भी रियासत की जनता कैसे अलग रह सकती थी ?

वर्मा जी जानते थे कि मेवाड़ में घुसते ही उन्हे गिरफ्तार कर लिया जायेगा। अतः उन्होंने बम्बई से लौटते हुये रतलाम व नीमच आदि स्थानों से ही मेवाड़ प्रजा मण्डल के कार्य-कर्त्ताओं को भावी आन्दोलन सम्बन्धी आवश्यक निर्देश जारी कर दिये। वर्मा जी ने उदयपुर पहुंच कर प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ताओं से विचार-विनिमय किया। उन्होंने 20 अगस्त, 1942 को बम्बई में लिये गये निर्णय के अनुसार महाराणा को अल्टीमेटम दिया कि वे 24 घण्टे के भीतर ब्रिटिश सरकार से सम्बन्ध विच्छेद कर दें, अन्यथा आन्दोलन का सामना करें। दूसरे ही दिन 21 अगस्त को 12 बजे वर्मा जी गिरफ्तार कर लिये गये। राजधानी में पूर्ण हड़ताल हो गयी। तांगे, खूमचे वाले एवं सब्जी वालों तक ने अपना-अपना धन्धा बन्द कर दिया। सारे नगर में काम काज ठप्प हो गया। मेवाड़ के कौने-कौने में आन्दोलन फैल गया। इसके साथ ही साथ प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ता और सहयोगियों की गिरफ्तारियों का सिलसिला शुरु हो गया।

---

1. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना—"जो देश के लिए जिए" पृ. 140—141

उदयपुर से सर्व श्री भूरे लाल बया, बलवन्त सिंह मेहता, परसराम अग्रवाल, दयाशंकर श्रोत्रिय, मोहन लाल सुखाड़िया, मोती लाल तेजावत, मोहन लाल तेजावत, अम्बालाल जोशी, वीरभद्र जोशी, हीरालाल कोठारी (बैंक वाले), प्यार चन्द विश्नोई, रंगलाल मारवाड़ी और रोशन लाल बोर्दिया आदि प्रमुख व्यक्ति गिरफ्तार हुये। उदयपुर में महिलायें भी पीछे नहीं रहीं। वर्मा जी की सहधर्मिणी श्रीमती नारायणी देवी वर्मा अपने 6 माह के इकलौते पुत्र श्री दीनबन्धु[1] को गोद में लिये जेल गयीं। उनकी पुत्री सुशीला[2] ने भी अपने माता-पिता के पद चिन्हों का अनुसरण किया। श्री विश्नोई की धर्म पत्नि श्रीमती भगवती देवी भी जेल गयीं। सलूंबर से पेन्टर श्री घनश्याम राव गिरफ्तार हुये।

आन्दोलन के दौरान उदयपुर में महाराणा कॉलेज और अन्य शिक्षण संस्थाएँ कई दिनों तक बन्द रहीं। छात्रों ने नगर में आन्दोलन को तीव्रतम बना दिया। लगभग 600 छात्र गिरफ्तार कर लिये गये, जिन्हें कुछ दिनों बाद रिहा कर दिया गया। कुछ छात्रों ने तोड़-फोड़ के कार्यों में भी भाग लिया। राजस्थान के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री शिव-चरण माथुर[3] ने उन दिनों अपने साथियों के साथ गुना-कोटा के बीच रेल्वे के एक पुल को डाइनेमाइट से ध्वस्त कर दिया।

मेवाड़ में संघर्ष का दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र था नाथद्वारा। उदयपुर में वर्माजी और सुखाड़िया जी की गिरफ्तारी के साथ ही साथ नाथद्वारा में हड़तालों और जुलूसों की धूम मच गयी। सर्वश्री नरेन्द्रपाल सिंह चौधरी, राजेन्द्र सिंह चौधरी, नानालाल कावरा, कज्जू लाल पोरवाल, किशनलाल गुर्जर, पुरुषोत्तम हिटलर, श्रीमती गंगाबाई, नवनीत चौधरी, मदन मोहन सोमटिया और रतन लाल करणावट आदि कार्यकर्त्ता और सभ्रान्त नागरिक गिरफ्तार कर लिये गये। राजसमन्द से श्री भंवर लाल आचार्य गिरफ्तार हुये।

भीलवाडा जिले में जिन लोगों को गिरफ्तार किया गया था, उनमें थे सर्व श्री रूपलाल सोमाणी और रामचन्द वैद्य (भीलवाडा), उमराव सिंह ढाबरिया और माणिक राम नुवाल (बनेटा) श्री मथुरा प्रसाद वैद्य (जहाजपुर) एवं श्री प्रभु दास वैरागी (हमीरगढ़)।

चित्तौड़ जिले से श्री गोकुल लाल धाकड़, हेमराज धाकड़ और बिरदी चन्द धाकड़ (तहसील बेगूं), गुलाब चन्द मेवाड़ी, फूलचन्द बया, शोभा लाल सुनार, शंकर देव भारतीय (कपासन) और जयचन्द मोहिल (छोटी सादडी) जेल गये।

बनेड़ा के श्री कनक "मधुकर" सम्पादक "नवजीवन" अजमेर में गिरफ्तार कर लिये गये। इसी तरह सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी योद्धा श्री रमेश चन्द्र व्यास ब्रिटिश सरकार द्वारा आन्दोलन छिड़ते ही गिरफ्तार किये जाकर अजमेर सेन्ट्रल जेल में नजरबन्द कर दिये गये।

---

1. श्री दीनबन्धु सन् 1981 में उदयपुर से लोकसभा के सदस्य चुने गये।
2. श्रीमती सुशीला राजस्थान के पूर्व मुख्य मंत्री श्री शिव चरण माथुर की धर्म पत्नि हैं।
3. श्री माथुर सन् 1968 69 में भीलवाड़ा से लोकसभा के सदस्य रहे। सन् 67 में वे राजस्थान के शिक्षा मंत्री बने। इसके बाद 77-80 की अवधि को छोड़कर वे बराबर राज्य मंत्री मण्डल में रहे। जून, 81 में वे राजस्थान के मुख्य मंत्री बने। 23 फरवरी, 85 को उन्होंने विधान सभा के चुनावों के दौरान डीग में हुये 'मानसिंह' हत्या काण्ड, को लेकर अपने पद से इस्तीफा दे दिया।

मेवाड़ में सन् 1942 के आन्दोल में छात्रों के अलावा प्रजा मण्डल के लगभग 500 कार्यकर्ताओं और सहयोगियों ने कृष्ण मन्दिर की यात्रा की।

मेवाड़ के प्रधान मंत्री सर टी. विजयराघवाचार्य को यह अफसोस था कि जयपुर और ग्वालियर की तरह से मेवाड़ में आन्दोलन को रोका नही जा सका। आन्दोलन के दौरान मेवाड़ सरकार के इशारे पर ग्वालियर के कतिपय कार्यकर्त्ताओं ने जेल में श्री वर्मा जी से मुलाकात की और सलाह दी कि वे आन्दोलन को वापिस लेने को तैयार हो तो मेवाड़ सरकार राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने की दिशा में आवश्यक कदम उठाने को तैयार हो जायेगी। वर्मा जी ने उन्हें उत्तर दिया कि यह संघर्ष राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने के लिये नहीं वरन् सारे देश की स्वतन्त्रता के लिये छेड़ा गया है, जिसे देश के नेता ही वापिस ले सकते है। ग्वालियर प्रजामण्डल के नेता लज्जित होकर अपने राज्य को लौट गये।

जयपुर :

अगस्त सन् 1942 के आन्दोलन में जयपुर राज्य प्रजामण्डल की भूमिका विवादास्पद रही। उस समय प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री हीरा लाल शास्त्री और महामंत्री श्री कपूरचन्द पाटनी थे। कांग्रेस महासमिति के बम्बई अधिवेशन के अवसर पर हुये रियासती सम्मेलन में जयपुर प्रजामण्डल की ओर से श्री शास्त्री ने भाग लिया था। इस सम्बन्ध में शास्त्री जी ने अपनी आत्म कथा में निम्न विवरण दिया है :

"आने वाले संघर्ष की तैयारी के तौर पर कांग्रेस महासमिति की बैठक के समय देशी राज्यों के कार्यकर्त्ताओं की बैठक भी 8 अगस्त को बम्बई में हुई थी। किसी ने राजाओं को लिखे जाने के लिये एक मसविदा तैयार किया था, उसमें राजाओं को लिखने के लिये खास बात यह थी कि या तो अंग्रेजों से लड़ो या 24 घण्टे के भीतर प्रजामण्डल को राज सम्भला दो। उस मसविदे पर विचार होता उसके पहले ही गांधी जी आदि पकड़े जा चुके थे और देशी राज्यों में क्या हुआ, इस विषय में कुछ भी फैसला नहीं हो सका। महाराजा को यह लिखने की बात मेरे नहीं जंच रही थी कि या तो आप अंग्रेजों से लड़ो या 24 घण्टों के भीतर प्रजामण्डल को राज सम्भला दो।"[1]

शास्त्री जी ने अपनी आत्म कथा में महात्मा गांधी द्वारा सम्मेलन में दिये गये भाषण का कोई उल्लेख नही किया है। 'श्री माणिक्य लाल वर्मा ने मेवाड़ प्रजामण्डल की ओर से उक्त सम्मेलन में भाग लिया था। वर्माजी ने अपने संस्मरणों में लिखा है कि सम्मेलन में गांधी जी से विचार विनिमय करने के बाद वे बाहर आये तो शास्त्री जी और हरिभाऊ जी से मुलाकात हो गयी। उन्होने शास्त्री जी से पूछा "कहिये गांधी जी की सलाह के सम्बन्ध में आपका क्या विचार है ?" शास्त्री जी उत्तर दिया कि उनकी समझ मे नहीं आता कि आखिर राजा लोग अंग्रेजों का साथ कैसे छोड़ेंगे।[2]

जब सर मिर्जा इस्माइल जयपुर के प्रधान मंत्री होकर आये तो उन्होने श्री शास्त्री से अच्छे सम्बन्ध स्थापित कर लिये थे। इसमे श्री जी. डी. बिड़ला ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी, जैसा कि सर मिर्जा और श्री बिड़ला के बीच जुलाई, सन् 1942 मे हुए पत्र-व्यवहार से प्रकट है।[3] जब शास्त्री जी बम्बई से लौटे तो उन्होंने प्रजामण्डल

1. श्री हीरालाल शास्त्री—"प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र", पृ. 70-71
2. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना—जो देश के लिये जिये, पृ.-140
3. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना—,, ,, ,, पृ. 144-146

की कार्य समिति और साधारण समिति की बैठक बुलाई। इन बैठकों में प्रजामण्डल ने देश की आजादी की मांग की और नेताओं की गिरफ्तारी की निन्दा की। इसके साथ ही इन बैठको में जल्दी से जल्दी उत्तरदायी शासन स्थापित करने के लिये कहा गया। महाराजा की ओर से प्रजामण्डल को उत्तर मिला कि "महाराजा की नीति राज-काज में जनता को शामिल करने की है।"[1] प्रजामण्डल को उत्तर से संतोष हो गया। उसके सामने आन्दोलन छेड़ने का कोई प्रश्न ही नहीं था। सर मिर्जा निश्चिन्त हो गये कि देश के अन्य भागों की तरह जयपुर को जन-संघर्ष का सामना नहीं करना पड़ेगा। उन्होंने 14 अगस्त के अपने पत्र में डींग मारते हुए जयपुर के पोलीटिकल एजेन्ट मेजर पाउल्टन को सूचित किया कि यह विश्वास करने के लिये अच्छे कारण हैं कि जयपुर प्रजामण्डल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की सहानुभूति में कोई कार्यवाही नहीं करेगा।[2]

जयपुर प्रजामण्डल में एक ऐसा वर्ग था जो किसी भी कीमत पर जयपुर को कांग्रेस के अखिल भारतीय आन्दोलन से अलग रखने को तैयार नहीं था। इस वर्ग के नेता थे बाबा हरिशचन्द्र, श्री रामकरण जोशी, श्री दौलतमल भण्डारी और श्री हंस डी. राय। इस गुट की तरफ से श्री भण्डारी ने 16 अगस्त, 1942 को शास्त्री जी से भेंट की और उनके सामने अपने साथियों का दृष्टिकोण रखा। शास्त्री जी ने श्री भण्डारी का तर्क स्वीकार कर लिया। उन्होंने 17 अगस्त की शाम को जयपुर में एक सार्वजनिक सभा में आन्दोलन का श्री गणेश करने का वादा किया। पूर्व निश्चित कार्यक्रम के अनुसार जयपुर में सार्वजनिक सभा हुई, परन्तु शास्त्री जी ने अपने भाषण में आन्दोलन की घोषणा करने की बजाय राज्य सरकार के साथ हुई समझौता वार्ता के बारे में प्रकाश डाला।[3] इस प्रकार जहाँ तक प्रजामण्डल का प्रश्न था, स्थिति यथावत रह गयी। इन हालात पर प्रसन्नता प्रकट करते हुए श्री जी. डी. बिड़ला ने अपने 11 सितम्बर, 1942 के पत्र में सर मिर्जा को लिखा—"आप जयपुर राज्य में शान्ति कायम रखने में सफल हुए हैं। निश्चय ही शास्त्री जी इसमें आपकी सहायता कर रहे हैं। मैं उनके निरन्तर सम्पर्क में हूँ।[4]

शास्त्री जी के रवैये की जयपुर में और जयपुर से बाहर भारी आलोचना हुई। इधर प्रजामण्डल के बाबा हरिशचन्द्र वाले गुट ने शास्त्री जी द्वारा अपनायी गयी समझौता नीति के विरुद्ध आजाद मोर्चा स्थापित कर आन्दोलन छेड़ दिया। शास्त्री जी दुविधा में पड़ गये। इस बार उन्होंने साहस बटोर कर अपने 16 सितम्बर, 1942 के पत्र द्वारा प्रधान मंत्री सर मिर्जा को अल्टीमेटम दे दिया कि वे (शास्त्रीजी) प्रजामण्डल के विधान को स्थगित कर जयपुर की जनता का आह्वान कर रहे हैं कि वह महात्मा गांधी के निर्देशानुसार भारतीय आजादी के संग्राम में पूरी शक्ति के साथ जुट जाएं। शास्त्री जी द्वारा अंग्रेजी में लिखे गये उस पत्र के मुख्य-मुख्य अंश यहाँ हिन्दी में दिये जाते हैं—

---

1. श्री हीरालाल शास्त्री—"प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र" पृ. 71
2. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना—"जो देश के लिये जिये", पृ. 147
3. श्री बी. एल. पानगड़िया—"राजस्थान का इतिहास", पृ. 199-200
4. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना—"जो देश के लिये जिये", पृ. 148

"मैं यह महसूस करता हूँ कि मैं अपना यह पत्र आपको अपने खून से लिखूँ। क्योंकि मैं आपको अपने एक ऐसे निर्णय से सूचित करना चाहूँगा कि जिसकी अचानक ही आप मेरे से अपेक्षा नहीं कर सकते थे।

"मैं जानता हूँ कि महाराजा जयपुर बिना अपना अस्तित्व समाप्त किये न तो ब्रिटिश सरकार से सम्बन्ध विच्छेद कर सकते हैं और न राज्य में उत्तरदायी शासन की घोषणा ही कर सकते हैं। इस विचार ने मुझे यथार्थवादी होने के लिये मजबूर कर दिया था और इसी कारण मैं महाराजा सा. और उनकी सरकार से सीधी लड़ाई टालने के लिये सहमत हुआ था।

"मेरा महाराजा से व्यक्तिगत सम्पर्क नहीं है। इसलिये उनके बारे में मैं अधिक कुछ नहीं कह सकता। पर मैं व्यक्तिगत अनुभव से आपको जानता हूं कि आप जयपुर की जनता की तहेदिल से सेवा करना चाहते हैं और मेरा ख्याल है कि महाराजा साहब भी दिल से जनता की भलाई चाहते हैं। पर जब मैं देखता हूं कि जयपुर की जनता का शीत वर्ग देश में चल रहे कठिन और महान संग्राम में भाग लेने को आतुर है, तो ये सब बातें गौण हो जाती हैं।

"जब से मैंने यह पत्र लिखना शुरू किया मैं बराबर सोच रहा हूं कि क्या अब भी किसी तरह इस संकट को टाला जा सकता है। मुझे मालूम है कि आप या महाराजा इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कर सकते। मुझे यह भी मालूम है कि संघर्ष को टालने की मेरी दिली ख्वाहिश होते हुये भी मैं कुछ नहीं कर सकता। भारत की जनता जिसमें जयपुर भी शामिल है, ब्रिटिश जूए को उतार फैंकने के लिये कटिबद्ध है, जबकि महाराजा जयपुर चाहे वे स्वयं भी जूए से थक गये हों, उसे फैंक कर भारत की जनता, द्वारा छेड़े गये संग्राम में शामिल होने का साहस नहीं कर सकते। इन परिस्थितियों में यह अनिवार्य हो गया है कि महाराजा के विरुद्ध, जो ब्रिटिश सम्राट के एक मातेहत है, सीधा संघर्ष शुरू किया जाये।"[1]

शास्त्री जी का यह पत्र बम्बई में हुये रियासती नेताओं के सम्मेलन में दी गयी गांधी जी की सलाह के सर्वथा अनुरूप था। अन्य रियासतों के नेताओं ने भी आन्दोलन शुरू करने के पूर्व लगभग इसी प्रकार के पत्र अपनी-अपनी रियासतों के शासकों को लिखे थे। शास्त्री जी ने अपने इस पत्र में समझौते की किसी प्रकार की गुन्जायश नहीं छोड़ी थी।

राज्य सरकार को दिये गये अल्टीमेटम की सार्वजनिक घोषणा शास्त्री जी अगले ही दिन अर्थात् ता. 18 सितम्बर को करने वाले थे, पर वह शुभ दिन आया ही नहीं। शास्त्री जी का अल्टीमेटम पाते ही सर मिर्जा ने उनको अपने पत्र में लिखा कि आपके पत्रों से मुझे गहरा धक्का लगा है और पीड़ा हुई है। मैं तहे दिल से चाहता हूं कि आप अब भी राज्य में आन्दोलन का विचार छोड़ दें।[2] सर मिर्जा ने शास्त्री जी को वार्ता के लिये आमन्त्रित किया। शास्त्री जी उनसे मिले। तुरन्त ही शास्त्री जी और सरकार के बीच

---

1. श्री हीरालाल शास्त्री "प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र" पृ. 357-359 मूल पत्र अंग्रेजी में। मूलपत्र की प्रति परिशिष्ठ (3) पर देखिये।
2. मूल पत्र की प्रति परिशिष्ठ (4) पर।

एक "जेन्टलमेन्स एग्रीमेन्ट" हो गया। इस समझौते के फलस्वरूप शास्त्री जी ने महाराजा के विरुद्ध संघर्ष छेड़ने का विचार त्याग दिया।

शास्त्री जी के अनुसार "जेन्टलमेन्स एग्रीमेन्ट" द्वारा सरकार ने प्रजामण्डल की मुख्यतः निम्न मांगें स्वीकार कर लीं।[1]

1. युद्ध के लिये अंग्रेजों को राज्य आगे जन धन की सहायता नही देगा।
2. प्रजामण्डल को राज्य में शान्तिपूर्वक युद्ध विरोधी अभियान चलाने की स्वतन्त्रता होगी।
3. राज्य द्वारा जनता को उत्तरदायी शासन देने की दृष्टि से कार्यवाही जल्दी से जल्दी शुरू की जायेगी।

इस समझौते के सम्बन्ध में शास्त्री जी ने दावा किया कि "जयपुर महाराजा और जयपुर प्रजामण्डल ब्रिटिश सरकार के मुकाबले में तत्वतः बहुत कुछ एक हो गये थे।[2] शास्त्री जी का यह दावा किसी भी तटस्थ व्यक्ति के गले मे उतरने लायक नहीं था। शास्त्री जी द्वारा सर मिर्जा को दिये गये अल्टीमेटम में केवल एक मांग थी और वह थी कि महाराजा ब्रिटिश सरकार से सम्बन्ध विच्छेद कर दें। राज्य सरकार द्वारा जिन मांगों को स्वीकार करना बताया गया वे "अल्टीमेटम" का अंग थी ही नही। फिर इस "जेन्टलमेन्स एग्रीमेन्ट" को न तो हम सम्मानजनक कह सकते हैं और न समझौता ही। सर मिर्जा एक सफल सौदागर सिद्ध हुये। वे बिना कुछ दिये लिये ही प्रजामण्डल को निष्क्रय बनाने मे कामयाब हो गये। शास्त्री जी के इस कदम की राजनैतिक क्षेत्रों में बड़ी आलोचना हुई। उनके एक अनन्य साथी श्री टीकाराम पालीवाल (भूतपूर्व मुख्य मन्त्री) आज भी महसूस करते है कि हम लोगों ने भारत छोड़ो आन्दोलन में भाग न लेकर एक राजनैतिक भूल की थी।

इधर आजाद मोर्चे ने अपना आन्दोलन जारी रखा। इस आन्दोलन में सर्वश्री हरिशचन्द्र शास्त्री (बाबा), दौलतमल भण्डारी, गुलाबचन्द्र कासलीवाल, चन्द्रशेखर शर्मा, राधेश्याम शर्मा, ओमदत्त शास्त्री, चिरंजीलाल मिश्रा, मदनलाल खेतान, मुक्तिलाल मोदी, रामकरण जोशी, विजयचन्द जैन, अलाबक्ष चौहान, मास्टर आनन्दीलाल नाई, भंवरलाल सामोदिया, मोहन लाल आजाद, गोपालदत्त वैद्य आदि कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिये गये। उक्त कार्यकर्ताओ के अलावा राजस्थान चर्खा सघ के कर्मचारी और सैकड़ो अन्य नागरिको ने आन्दोलन मे भाग लेकर जयपुर की बात रख ली। 'जेन्टलमेन्स एग्रीमेन्ट" के अनुसार राज्य सरकार को इन कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार नही करना चाहिये था, पर उन्हे गिरफ्तार कर राज्य सरकार ने शास्त्री जी के साथ हुए समझौते का उल्लंघन किया।

"भारत छोड़ो" आन्दोलन के दौरान अजमेर जेल तोड़ कर आये हुये श्री रघुराजसिंह ने श्री रत्नाकर भारतीय और श्री राधेश्याम टीकीवाल को क्रान्तिकारी कार्यो की शिक्षा दी। उन्होने उनको बम बनाना सिखाया। दोनो युवकों ने 2—3 स्थान पर बम विस्फोट करने का असफल प्रयत्न भी किया। आन्दोलन मे जयपुर के कॉलेज और स्कूल के विद्यार्थियो ने भी भाग लिया। उन्होने कई दिनो तक शिक्षण संस्थाओ मे हड़ताल रखी।

सर्व सेवा संघ के अ. भा. अध्यक्ष और सर्वोदयी नेता श्री सिद्धराज ढड्ढा जयपुर के

---

1. श्री हीरालाल शास्त्री—"प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र" पृ. 71
2. श्री हीरालाल शास्त्री—"प्रत्यक्ष जी शास्त्र", पृ. स. 73

निवासी थे। सन् 1942 में उन्होंने कलकत्ता में चेम्बर ऑफ कामर्स के सचिव पद से इस्तीफा दे दिया। वे भारत छोड़ो आन्दोलन के सिलसिले में पकड़े गये और 2 वर्ष तक वाराणसी जेल में रहे।

कोटा :

कोटा राज्य मण्डल के नेता श्री अभिन्न हरि ने कोटा के प्रतिनिधि के रूप में ता. 7 व 8 अगस्त, 1942 को कांग्रेस महासमिति व रियासती कार्यकताओं की बैठकों में भाग लिया। उनके बम्बई से लौटते ही वे ता. 13 अगस्त को ही गिरफ्तार कर लिये गये। प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री मोतीलाल जैन ने बम्बई में लिये गये निर्णय के अनुसार ता. 17 अगस्त को महाराजा को अल्टीमेटम दिया कि वे शीघ्र ही अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद कर दें। फलस्वरूप सरकार ने प्रजामण्डल के कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया। इनमें प्रमुख थे सर्वश्री शम्भुदयाल सक्सेना, बेणीमाधव शर्मा, मोतीलाल जैन और हीरालाल जैन। उक्त कार्यकताओं की गिरफ्तारी के बाद श्री नाथूलाल जैन ने आन्दोलन की बागडोर सम्भाली। उनके नेतृत्व में कोटा के युवकों ने पुलिस को बेरकों में बन्द कर शहर कोतवाली पर अधिकार कर लिया और उस पर तिरंगा झण्डा फहरा दिया। जनता ने नगर का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया। लगभग दो सप्ताह बाद जनता ने, महारावल के इस आश्वासन पर कि सरकार दमन का सहारा नहीं लेगी, शासन पुनः महारावल को सौंपा। गिरफ्तार कार्यकर्ता रिहा कर दिये गये।

भरतपुर :

महात्मा गांधी और कांग्रेस के अन्य शीर्षस्थ नेताओं के बम्बई में गिरफ्तार होते ही भरतपुर राज्य प्रजा परिषद् ने ता. 10 अगस्त, 1942 को राज्य में आन्दोलन छेड़ दिया। परिषद् के कार्यकर्ता मास्टर आदित्येन्द्र, सर्वश्री जुगल किशोर चतुर्वेदी, जगपति सिंह, जीवाराम, पूर्ण सिंह, रेवती शरण, हुक्मचन्द, घनश्याम शर्मा, गौरीशंकर मित्तल और रमेश शर्मा गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हीं दिनों दो युवक श्री गिरधारी सिंह पैंथना और रोशन आर्य ने डाकखानों और रेल्वे स्टेशनों के तोड़-फोड़ की योजना बनाई। दोनों ही पकड़े गये। उन्हें 6-6 माह की जेल और जुर्माने की सजा हुई। आन्दोलन चल ही रहा था कि राज्य में भयङ्कर बाढ़ आ गयी, जिसमें जन-धन की भारी हानि हुई। अतः प्रजा परिषद् ने आन्दोलन स्थगित कर राहत कार्यों में लगने का निर्णय किया। राज्य के प्रधानमंत्री श्री के. पी. एस. मेनन ने परिषद् के इस निर्णय का स्वागत किया। दोनों पक्षों में वार्ता शुरू हुई। सरकार ने निर्वाचित सदस्यों के बहुमत वाली विधान सभा बनाना स्वीकार कर लिया। सरकार ने ता. 16 अक्टूबर, 1942 को प्रजा मण्डल के सभी कार्यकर्ताओं को रिहा कर दिया।

शाहपुरा :

भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू होने के साथ ही साथ शाहपुरा राज्य प्रजामण्डल ने राजाधिराज को अल्टीमेटम दिया कि वे अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद कर दें। फलस्वरूप प्रजामण्डल के कार्यकर्ता सर्वश्री रमेशचन्द्र ओझा, लादूराम व्यास और लक्ष्मीनारायण कांटिया गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हें शाहपुरा से दूर डिकोला के किले में बन्द कर दिया और बाद में अजमेर जेल में भेज दिया। शाहपुरा के प्रो. अलावा पहले ही अजमेर में गिरफ्तार कर लिये गये थे। उनका कार्य क्षेत्र उन दिनों अजमेर में ही था।

बीकानेर :

जैसा कि पूर्व के अध्याय में बताया गया है, बीकानेर में जुलाई, 1942 में सुप्रसिद्ध एडवोकेट श्री रघुवरदयाल गोयल ने बीकानेर राज्य परिषद् की स्थापना की। महाराजा गंगासिंह ने एक सप्ताह के भीतर ही श्री गोयल को राज्य से निर्वासित कर दिया। उन्होंने ता. 29 सितम्बर को राज्य द्वारा लगायी गयी पाबन्दी को तोड़ कर राज्य में प्रवेश किया। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और 1 वर्ष की सजा दे दी गयी। कुछ समय बाद श्री गोयल के दो साथी सर्वश्री गंगादास कौशिक और दाउदयाल आचार्य भी गिरफ्तार कर लिये गये। इन्हीं दिनों श्री नेमीचन्द आंचलिया ने अजमेर से प्रकाशित एक साप्ताहिक में लेख लिखा जिसमें बीकानेर राज्य मे चल रहे दमन कार्य की निन्दा की गई। राज्य सरकार ने श्री आंचलिया पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया। उन्हें 7 वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दिया गया। उस समय बीकानेर राज्य में तिरंगा झण्डा फहराना अपराध माना जाता था। अतः राज्य के कार्यकर्ताओं ने दिसम्बर, 1942 में झण्डा सत्याग्रह शुरू कर भारत छोड़ो आन्दोलन में अपना योगदान दिया। इसमें सर्वश्री किसन गोपाल गट्टड़, रामनारायण शर्मा और मघाराम वैद्य आदि ने भाग लिया। ये सब पुलिस के कोप के भाजन हुए। महाराजा गंगासिंह के निरंकुश शासन काल में असंगठित कार्यकर्ता सन् 1942 में इससे अधिक कुछ न कर पाये। वस्तुतः उन दिनों बीकानेर राज्य राष्ट्रीय आन्दोलन से सुरक्षित माना जाता था। इसलिये मरहठा लाइट इन्फेन्टरी की इकाइयां यदाकदा मध्य एशिया और यूरोप को जाती हुई बीकानेर में मुकाम करती थी। डूंगर कॉलेज, बीकानेर के एक आचार्य डॉ. वी. एल. तालेकर इन्फेन्टरी के युवक अफसरों से सम्बन्ध स्थापित करते और उनसे छोटे बड़े हथियार प्राप्त कर क्रान्तिकारियों को उत्तर प्रदेश भेजते। डॉ. तालेकर क्रान्तिकारी-आन्दोलन की शिक्षा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में ले चुके थे। आश्चर्य की बात थी कि यह सब सर गंगासिंह की सरकार के नाक के नीचे हुआ। 'गन-रंगिन' का यह भेद देश के आजाद होने के बाद खुला। तब तक न अंग्रेज रहे और न महाराजा ही।

अलवर :

भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू होने के साथ अलवर और राज्य के अन्य कस्बों में हड़तालों और जुलूसों का दौर शुरू हुआ। श्री कुंजबिहारी लाल मोदी को राज्य ने नजरबन्द कर दिया। पर राज्य ने दमन से काम नहीं लिया। अतः आन्दोलन ने विशेष जोर नही पकड़ा। आन्दोलन के दौरान सर्व श्री शोभाराम, रामचन्द्र उपाध्याय और कृपा दयाल माथुर आदि वकीलों ने वकालत छोड़ दी। लाला काशीराम गुप्ता ने राजा महेन्द्र प्रताप, एवं पं. श्रीराम शर्मा जैसे भूमिगत क्रान्तिकारियों को अपने कारखाने में छिपाये रखा।

जैसलमेर :

जैसलमेर अभी भी अन्धेरे युग से गुजर रहा था। राज्य में सन् 1937–38 में सर्वश्री शिवशंकर गोपा, जीतमल जगाणी, मदनलाल पुरोहित, मगनलाल जमाणी और लालचन्द आदि नवयुवकों ने लोक परिषद् की स्थापना करने का प्रयत्न किया। पर महारावल ने कठोरता के साथ युवकों की गतिविधियों का दमन किया। अधिकतर युवकों को जैसलमेर छोड़ना पड़ा। श्री लालचन्द जोशी तो 6 माह तक जेल में रहे। जैसलमेर के

निरंकुश शासन में सन् 1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन में भाग लेने का प्रश्न ही नहीं था। उस समय तो वहाँ अमर शहीद श्री सागरमल गोपा 'जैसलमेर में गुण्डाराज' नामक पुस्तिका लिखने के अपराध में नारकीय यातना भुगत रहे थे।

बूंदी :

बूंदी में अभी तक प्रजामण्डल नहीं बना था, परन्तु बूंदी के सुप्रसिद्ध नागर परिवार के श्री नित्यानन्द और उनके सुपुत्र श्री ऋषिदत्त मेहता ने भारत छोड़ो आन्दोलन में गिरफ्तार होकर देश के प्रति अपना कर्तव्य अदा किया। श्री नित्यानन्द के पिता श्री मेघवाहन बूंदी राज्य के दीवान और स्वयं श्री नित्यानन्द राज्य के सेनापति थे। पर श्री मेघवाहन अंग्रेज अधिकारियों के कोप भाजन हो गये। फलतः उन्हें न केवल राज्य सेवा से हटा दिया, वरन् राज्य से निर्वासित भी कर दिया। श्रीनित्यानन्द ने भी तत्काल राज्य सेवा से इस्तीफा दे दिया। कुछ वर्षों बाद राज्य ने श्री नित्यानन्द को राज्य से निर्वासित कर दिया और उनकी जायदाद जब्त कर ली। श्री नित्यानन्द सन् 1930 में नमक सत्याग्रह, 1932 में असहयोग आन्दोलन और सन् 1940 में गांधीजी द्वारा चलाये गये व्यक्तिगत सत्याग्रह में जेल गये। सन् 1942 में श्री नित्यानन्द 4 वर्ष तक बूंदी के किले में नजरबन्द रहे। श्री ऋषिदत्त को अजमेर जेल में भेज दिया, जहाँ वे 1944 में रिहा हुये।

अन्य राज्य :

डूंगरपुर में श्री भोगीलाल पंड्या ने 5 दिसम्बर, 1942 को एक सार्वजनिक सभा कर देश में अंग्रेजी-शासन का विरोध किया। अगले दिन राजधानी में ब्रिटिश सरकार के दमन के विरोध में जुलूस निकाला गया। स्कूल तथा बाजारों में हड़ताल रही। बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, सिरोही और झालावाड़ में भी महात्मा गांधी तथा अन्य कांग्रेस नेताओं की गिरफ्तारी के विरोध में हड़तालें हुई और जुलूस निकाले गये, पर कोई गिरफ्तारी नहीं हुई। करौली प्रजामण्डल के एक कार्यकर्ता श्री कल्याण प्रसाद गुप्ता को नजरबन्द कर दिया गया। वे तीन माह बाद जेल से छोड़े गये। इन राज्यों में अभी तक राजनैतिक संगठन नहीं बन पाये थे। अतः वहाँ पर संगठित तरीके पर "भारत छोड़ो" आन्दोलन नहीं चला।

12

स्वाधीनता संग्राम का अन्तिम चरण

अप्रैल, 1944 में महात्मा गांधी का स्वास्थ्य .खराब हो गया। वे आगा खां पैलेस, पूना में नजरबन्द थे। उनकी गम्भीर बीमारी और देश में हुई प्रतिक्रिया को ध्यान में रखते हुये ब्रिटिश सरकार ने उन्हें तारीख 6 मई, 1944 को रिहा कर दिया। उस समय भारत के वायसराय लॉर्ड वेवल थे, जो लॉर्ड लिनलिथगो के स्थान पर आये थे।

अक्टूम्बर, 1944 में वेवल ने ब्रिटिश प्रधान मन्त्री विन्सटन चर्चिल को लिखा "भारत की वर्तमान सरकार लम्बे समय तक चलने वाली नहीं हैं। यह सही है कि गांधी जी अधिक जिन्दा नहीं रहेंगे। पर उनकी मृत्यु के बाद उनसे अधिक समझदार नेता आयेंगे, इसमें संदेह है..............फिर युद्ध के समाप्त होने के बाद ब्रिटिश सैनिक भी बड़ी संख्या में भारत पर अधिकार बनाये रखने लिये ठहरने वाले नहीं हैं।....... ....अगर हमें युद्ध के बाद भारत को "डोमिनियन" बनाना है तो हमें अभी से उसे एक डोमिनियन की तरह मानने की शुरुआत करनी चाहिये।" वेवल ने अपने पत्र के अन्त में कहा "ये विचार मेरे नही वरन् भारत के प्रधान सेनापति और ब्रिटिश भारत के सभी गवर्नरों के भी हैं।"[1]

चर्चिल ने उत्तर दिया कि युद्ध-मन्त्री-मण्डल भारतीय समस्या को प्राथमिकता नही दे सकता।[2] कुछ महिनों बाद वेवल स्वय लन्दन गये। वहाँ वे चर्चिल से मिले, और भारतीय समस्या का ज़िक्र किया तो चर्चिल ने उत्तर दिया "खुदा के लिये हमें बख्शिये।"[3] पर वेवल अपने मिशन पर डटे रहे। उन्होंने ब्रिटिश सरकार को स्पष्ट कह दिया कि समस्या अधिक दिन तक नही टाली जा सकती। दस सप्ताह के परिश्रम के बाद ब्रिटिश सरकार ने वेवल को भारत में गतिरोध दूर करने की दिशा में पहल करने की स्वीकृति दे दी। उस समय यूरोप मे विश्व युद्ध समाप्त हो चुका था। जर्मनी ने आत्म सर्पण कर दिया था। इग्लैण्ट में लोकसभा चुनाव होने वाले थे।

जून, 1945 में ब्रिटिश सरकार की अनुमति से वायसराय ने केन्द्र में "अधिक" उत्तरदायी कार्यकारी परिषद् (अन्तरिम सरकार) बनाने की घोषणा की। साथ ही कांग्रेस कार्य समिति के सदस्यो को जेल से रिहा कर दिया गया। वायसराय ने अन्तरिम सरकार के निर्माण के सम्बन्ध में वार्ता हेतु कांग्रेस, लीग एवं अन्य दलो के प्रतिनिधियों को शिमला मे आमन्त्रित किया। कई दिनो के विचार विनिमय के बाद वार्ता असफल हो गयी।

---

1. वेवल्स जरनल, पृ. 98
2. वेवल्स जरनल, पृ. 98, 128
3. वेवल्स जरनल, पृ. 98, 128

अगस्त, 1945 में जापान के आत्म समर्पण के साथ द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हो गया। इंग्लैण्ड में आम चुनाव हुये। मजदूर दल विजयी हुआ। एटली चर्चिल के स्थान पर प्रधान मन्त्री बने। एटली ने वेवल को कहा कि वे शीघ्र ही केन्द्रीय धारा सभा और प्रान्तीय विधान सभाओं के चुनाव करावें और चुनावों के बाद केन्द्र में नयी कार्यकारी परिषद् का निर्माण करें।

सन् 1946 के शुरु में केन्द्रीय धारा सभा और प्रान्तीय विधान सभाओं के चुनाव हुये। सिन्ध और बंगाल में मुस्लिम लीग ने अन्य दलों के साथ मिलकर मन्त्रिमण्डल बनाये। पंजाब में कांग्रेस, यूनियनिस्ट और अकाली दल ने मिला जुला मन्त्रिमण्डल बनाया। शेष 8 प्रान्तों में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल बने। केन्द्रीय धारा सभा में सभी मुस्लिम-स्थान (30) लीग ने जीते। शेष स्थानों में से प्रायः सभी (56) कांग्रेस ने जीते।

19 फरवरी, 1946 को एटली ने भारत का विधान बनाने की प्रक्रिया तय करने और केन्द्र में अस्थायी जन-प्रतिनिधि-सरकार स्थापित करने की दृष्टि से भारत सचिव लॉर्ड पैथिक लॉरेन्स के नेतृत्व में तीन मन्त्रियों का एक उच्च स्तरीय "प्रतिनिधि मण्डल" (केबीनेट मिशन) भेजने की घोषणा की। कैबिनेट मिशन दिनांक 24 मार्च को भारत पहुंचा। मिशन ने भारत के विभिन्न राजनैतिक दलों से विचार-विनिमय करने के बाद तारीख 16 मई को अपनी योजना की घोषणा की। कांग्रेस और लीग दोनों ने इस योजना को स्वीकार कर लिया। पर बाद में लीग अपने फैसले से मुकर गयी। अतः कांग्रेस के अध्यक्ष पं. जवाहर लाल नेहरु ने तारीख 2 सितम्बर, 1946 को लीग के बिना ही केन्द्र में अपना मन्त्रिमण्डल बनाया। कुछ समय बाद वेवल के समझाने पर लीग ने भी मिशन योजना स्वीकार कर ली और वह भी मन्त्रिमण्डल में शामिल हो गयी। पर यह मन्त्रिमण्डल काम न कर सका। वह कांग्रेस और लीग के अलग-अलग गुटों में बंट गया। सरकार में एक जबरदस्त गतिरोध पैदा हो गया।

ता. 20 फरवरी, 1947 को एटली ने घोषणा की कि ब्रिटिश सरकार जून, 1948 के पूर्व सत्ता जिम्मेदार भारतीय हाथों में सौंप देगी। रियासतों के बारे में उन्होंने कहा कि सत्ता के हस्तान्तरण के साथ ही साथ रियासतों पर ब्रिटिश सार्वभौम सत्ता समाप्त हो जायेगी। उन्होंने यह भी घोषणा की कि भारत में राजनैतिक गतिरोध को समाप्त करने के लिए वेवल के स्थान पर लॉर्ड माउण्टबेटन भारत के वायसराय होंगे।

माउण्टबेटन ने ता. 24 मार्च, 1947 को अपने पद का कार्यभार सम्भाला। भारतीय नेताओं से लम्बे विचार-विमर्श के बाद उन्होंने अपने प्रस्ताव तैयार कर ब्रिटिश सरकार को भेजे। ब्रिटिश सरकार ने ता. 3 जून को उक्त प्रस्तावों को स्वीकार कर लिया। इन प्रस्तावों का सारांश निम्न था :—

1. ब्रिटिश सरकार ता. 15 अगस्त, 1947 को सत्ता हस्तान्तरित कर देगी।
2. ब्रिटिश भारत का विभाजन होगा। पंजाब और बंगाल के मुस्लिम बहुल क्षेत्र और सिन्ध को मिलाकर पाकिस्तान का निर्माण किया जायेगा।
3. सीमा प्रान्त और आसाम के सिलहट जिले की जनता "जनमत" द्वारा यह निर्णय करेगी कि वह नये राष्ट्र पाकिस्तान में शामिल होना चाहती है अथवा भारत में रहना चाहती है।
4. रियासतों को अधिकार होगा कि वे भारतीय संघ में शामिल हों अथवा पाकिस्तान में अथवा अपने आपको स्वतन्त्र घोषित कर दें।

उसी दिन अर्थात् 3 जून, 1947 की संध्या को भारत के राजनैतिक दलों ने उक्त योजना को स्वीकार कर लिया। 15 अगस्त, 1947 को भारत का विभाजन हो गया। नव निर्मित पाकिस्तान की राजधानी करांची में श्री जिन्ना ने गवर्नर जनरल के पद की और उनके दांये हाथ नवाबजादा लियाकत अली खान ने प्रधान मन्त्री के पद की शपथ ली। उसी दिन दिल्ली में पं नेहरू और उनके मन्त्री मण्डल ने शपथ ली। कांग्रेस दल की प्रार्थना पर लॉर्ड माउन्ट बेटन भारत के गवर्नर जनरल बने रहे। इस प्रकार भारतीय जनता द्वारा अंग्रेजों के विरुद्ध सन् 1857 में शुरू किये गये संग्राम की परिणति 90 वर्ष बाद भारत की स्वतन्त्रता में हुई। दूसरी ओर भारत के विभाजन द्वारा श्री मोहम्मद अली जिन्ना की पाकिस्तान बनाने की महत्वाकांक्षा पूरी हुई।

"भारत छोड़ो" आन्दोलन के बाद ब्रिटिश भारत में तेजी से हुए राजनैतिक परिवर्तनों का असर राजस्थान की विभिन्न रियासतों के शासकों पर किस प्रकार और किस सीमा तक पड़ा, यह एक दिलस्चप कहानी है। कुछ राजाओं ने ब्रिटिश सत्ता की समाप्ति में अपनी-अपनी रियासतों की स्वतन्त्रता के स्वप्न देखना शुरू किया। कुछ ने इन परिवर्तनों को समझा और समय के अनुसार प्रशासन में आवश्यक सुधार किये। कुछ ऐसे भी थे जो कि कर्तव्य विमूढ़ हो गये और समझ ही नहीं पाये कि यह क्या का क्या हो गया। तो आइये इस संक्रामक काल में राजस्थान की विभिन्न रियासतों में ब्रिटिश भारत में हुए परिवर्तनों की क्या-क्या प्रतिक्रियाएँ हुईं, इसका जायजा लें।

मेवाड़ :

सन् 194? में मेवाड़ के प्रधान मन्त्री सर टी. विजवराघवाचार्य के निमन्त्रण पर श्री सी. आर. राजगोपालाचार्य (राजाजी) उदयपुर आये। उनके आने के कुछ दिन पूर्व प्रधान मन्त्री ने प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री माणिक्य लाल वर्मा को जेल से रिहा कर दिया। प्रधान मन्त्री की सलाह से राजाजी वर्मा जी से मिले और उन्हें बताया कि रियासत में भारत छोड़ो आन्दोलन को वापस ले लें तो मेवाड़ सरकार राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने की ओर आवश्यक कदम उठायेगी। राजाजी पाकिस्तान के मुद्दों को लेकर कांग्रेस से अलग हो चुके थे। वे भारत छोड़ो आन्दोलन के भी विरुद्ध थे। बर्मा जी ने उत्तर दिया कि हमारे नेता महात्मा गांधी हैं। उन्ही के आदेश पर हमने आन्दोलन छेड़ा है। हम एक सच्चे सिपाही की भांति सेनापति की आज्ञा के बिना आन्दोलन वापस नही ले सकते। राजाजी रण बांकुरे वर्माजी का उत्तर सुन कर हतप्रभ हो गये। राजाजी प्रजामण्डल के अन्य नेताओं से भी मिले, पर उनसे भी उन्हें निराशा हुई।[1] कुछ समय बाद सरकार ने शनैः-शनैः प्रजामण्डल के अन्य कार्यकर्ताओ को को भी रिहा कर दिया।

सन् 1945 मे वर्मा जी ने अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् का षष्टम अधिवेशन उदयपुर मे बुलाया। यह अधिवेशन पं. जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता मे ता. 31 दिसम्बर सन् 1945 और 1 जनवरी, 1946 को नगर के सलैटिया मैदान मे हुआ। इस अधिवेशन में देश भर की रियासतो के नेता सम्मिलित हुये जिनमे शेरे काश्मीर शेख अब्दुल्ला का नाम उल्लेखनीय है।

अखिल भारतीय दे. रा. लोक परिषद् ने एक प्रस्ताव द्वारा रियासतों के शासकों

---

1. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना—"जो देश के लिये जिये", पृष्ठ 151-152.

से अपील की कि वे देश में तेजी से बदलती हुई राजनैतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये अपनी-अपनी रियासतों में अविलम्ब उत्तरदायी शासन स्थापित करें। अधिवेशन से राजस्थान की रियासतों में अभूतपूर्व जागृति आई।

राजस्थान की इस यात्रा के दौरान पं. नेहरू को दो अन अपेक्षित स्रोतों से धन-राशि भेंट हुई। जब पं. नेहरू कार द्वारा अजमेर से उदयपुर आ रहे थे तो राह में डाकुओं ने बन्दूक की नोक पर कार को रोक लिया। डाकू दल के नेता लक्ष्मण सिंह खरवा ने पं. नेहरू को 10 हजार रु की थैली भेंट करना चाहा तो पं. नेहरू ने थैली लेने से यह कह कर इन्कार कर दिया कि कांग्रेस समाज विरोधी तत्वों से चन्दा स्वीकार नहीं करती। लक्ष्मण सिंह ने कहा कि कांग्रेस सेठों से चन्दा लेती है और वे भी उन्हीं तत्वों में से हैं। उसने कहा कि हर भारतीय को, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, देश की आजादी में योग देने का अधिकार है। पं. नेहरू के साथ यात्रा कर रहे अजमेर कांग्रेस के नेता और सुप्रसिद्ध वकील श्री मुकुट बिहारी लाल भार्गव ने पं. नेहरू को बताया कि लक्ष्मण सिंह और कोई नहीं सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी स्व. ठाकुर गोपालसिंह खरवा के परिवार में से है, एवं परिस्थितियों वश उसे यह पेशा अख्तियार करना पड़ा है। श्री भार्गव के उक्त स्पष्टीकरण के बाद पं नेहरू ने थैली स्वीकार कर ली। डाकू दल गद्गद् होकर पं. नेहरू को "जय हिन्द" कहता हुआ पुनः बीहड़ों में गायब हो गया।

पं. नेहरू को दूसरी थैली मेवाड़ के महाराणा भूपाल सिंह ने भेंट की। अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् के अधिवेशन के अवसर पर महाराणा उदयपुर से समन्द चले गये थे। उन्होंने वहीं पं नेहरू को आमन्त्रित किया और 25 हजार रुपये की थैली भेंट की जिसे पं. नेहरू ने सादर स्वीकार कर लिया।

अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् के अधिवेशन से उत्पन्न जागृति की नयी लहर तथा भारत में तेजी से हो रहे परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए मेवाड़ सरकार ने विधान निर्मात्री-समिति का निर्माण किया। इस समिति में प्रजामण्डल द्वारा नामजद सदस्य भी शामिल किये गये। समिति ने तारीख 29 सितम्बर, 1946 को अपनी रिपोर्ट दी। सरकार ने समिति की रिपोर्ट को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि समिति ने मन्त्रिमण्डल को विधान सभा के प्रति उत्तरदायी बनाने की सिफारिश की थी।

ता. 16 फरवरी, 1947 को अपने जन्म दिवस पर महाराणा ने घोषणा की कि वे शीघ्र ही राज्य में विधान सभा की स्थापना करेंगे और जनता के प्रतिनिधियों को सरकार में शामिल करेंगे। इस घोषणा को मूर्तरूप देने के लिये महाराणा ने ता. 2 मार्च, 1947 को मेवाड़ के भावी विधान की रूपरेखा की घोषणा की। घोषणा के अनुसार 46 सदस्यों की धारा सभा में 18 स्थान जागीरदार, उपजागीरदार, माफीदार, श्रमिक, उद्योगपति, व्यापारी और वन जातियों के लिये सुरक्षित रखे गये और शेष 28 स्थान वयस्क मताधिकार के आधार पर भरे जाने के लिये छोड़ दिये गये। महाराणा ने अपनी घोषणा में विश्वास दिलाया कि विधान सभा के चुनाव होने के बाद धीरे-धीरे जन प्रतिनिधियों को मन्त्रिमण्डल में शामिल किया जायेगा। उस समय तक देश बहुत आगे बढ़ चुका था। केन्द्र में पंडित नेहरू अन्तरिम सरकार बना चुके थे। अतः प्रजामण्डल ने इन सुधारों को समय के अनुकूल नहीं मान कर ठुकरा दिया। इसी बीच प्रधान मन्त्री सर टी. विजयराघवाचार्य राजदरबार के षड्यन्त्रों के शिकार हो गये। वे अपने पद से इस्तीफा देकर चले गये।

महाराणा ने विख्यात विधि वेता श्री के. एम. मुंशी को अपना वैधानिक सलाहकार नियुक्त किया। श्री मुंशी वम्बई-प्रान्त के प्रमुख कांग्रेस नेता रह चुके थे। कुछ समय पूर्व नीति सम्वन्धी मतभेदों के कारण उन्होंने कांग्रेस से इस्तीफा दे दिया था। श्री मुंशी ने मेवाड़ राज्य का सविधान तैयार किया। महाराणा ने उसे ज्यों का त्यों स्वीकार कर ता. 23 मई को प्रताप जयन्ती के अवसर पर लागू कर दिया। मुंशी ने संविधान में देवस्थान-निधि एवं प्रताप विश्वविद्यालय की स्थापना, मूलभूत नागरिक अधिकार और स्वतन्त्र न्याय-पालिका के लिये प्रावधान कर संविधान को आदर्शवादी रूप देने का प्रयत्न किया। पर जहां तक विधान सभा और मन्त्रिमण्डल के गठन और दायित्व का प्रश्न था, विधान अस्पष्ट था। प्रजामण्डल ने इसे अप्रगतिशील और अस्पष्ट वताया तो क्षत्रिय परिषद् ने इसे सरकार द्वारा प्रजामण्डल के सम्मुख समर्पण की संज्ञा दी। महाराणा ने संविधान लागू करने साथ ही साथ विधान-सभा के चुनाव होने तक अन्तरिम काल के लिये प्रजामण्डल के 2 प्रतिनिधियों और क्षत्रिय परिषद् के एक प्रतिनिधि को मन्त्रिमण्डल में लेने की घोषणा की थी। दोनों दलों ने सरकार की दावत मन्जूर कर ली। फलस्वरूप महाराणा ने ता. 28 मई, 1947 को प्रजामन्डल की ओर से श्री मोहन लाल सुखाड़िया और श्री हीरालाल कोठारी एवं क्षत्रिय परिषद् की ओर से श्री रघुवीर सिंह ओछड़ी को मन्त्री पद की शपथ दिलाई।

इस समय रियासतों की ओर से भारतीय संविधान परिषद् में प्रतिनिधि भेजने का सवाल बड़ा अहम बना हुआ था। नरेन्द्र मण्डल के चांसलर भूपाल के नवाब की रहनुमाई में कतिपय रियासतें अपनी स्वतन्त्रता का स्वप्न देख रही थीं और संविधान परिषद् में अपने प्रतिनिधि भेजने में टालमटोम कर रही थीं। ऐसी परिस्थितियों में उदयपुर उन रियासतों में से एक था जिसने बिना हिचकिचाहट के अपने प्रतिनिधि संविधान परिषद् में भेजने का निर्णय किया। उदयपुर से भेजे जाने वाले दो प्रतिनिधियों में एक वहाँ के प्रधान मन्त्री और दूसरे श्री माणिक्य लाल वर्मा थे।

प्रजामण्डल और क्षत्रिय परिषद् ने मेवाड़ के संविधान के कतिपय प्रावधानों को लेकर तो अपना विरोध जाहिर कर ही दिया था। अब राज समिति के निर्माण और उनके अधिकारों सम्वन्धी अनुच्छेद–3 की कतिपय धाराओं को लेकर राजमहलों में हड़कम्प आ गया। संविधान में राज समिति को यह अधिकार दिया गया था कि वह किसी भी महाराणा को मानसिक दृष्टि से राज्य की गद्दी के लिये अयोग्य घोषित कर उनके स्थान पर उनके उत्तराधिकारी को गद्दी पर बैठा सकती है। उन दिनों महाराणा और उनके दत्तक पुत्र महाराज कुमार भगवत सिंह जी के बीच सम्वन्ध विगड़ गये थे। अतः दोनों ओर चुगलखोरों की बन आई। महाराणा के कान भर दिये गये कि सामन्त वर्ग महाराज कुमार और श्री मुन्शी से मिलकर संविधान के उक्त प्रावधानों के अन्तर्गत उनके स्थान पर महाराज कुमार को गद्दी पर बैठाने का षड्यन्त्र कर रहा है। उन दिनों सामन्त वर्ग महाराज कुमार के इर्द-गिर्द चक्कर लगाने लग गया था। फिर राज समिति में सामन्त वर्ग का बहुमत था। अतः महाराणा अफवाहों से चिन्तित हो गये। उन्होंने अपने एक पुराने विश्वासपात्र सहायक को सुप्रसिद्ध विधि वेत्ता और भारतीय संविधान परिषद् की ड्राफ्टिंग समिति के एक सदस्य सर अल्लादी कृष्णा स्वामी ऐयर के पास सलाह के लिये भेजा। सर अल्लादी ने कहा कि मेवाड़ के संविधान में संशोधन केवल मेवाड़ की विधान सभा की सहमति से

ही हो सकता है। फिर भी महाराणा चाहें तो अपने विशेषाधिकारों को काम में लेकर संविधान के अनुच्छेद–3 की धारा–11 के अन्त में यह वाक्य जोड़ दें कि "इस धारा का प्रभाव वर्तमान महाराणा भूपाल सिंह के जीवन-काल में नहीं होगा।" सर सर अल्लादी ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि यदि इस संशोधन को अदालत में चुनौती दी गयी तो यह संशोधन अवैधानिक ठहराया जा सकता है। परन्तु भयभीत महाराणा ने सर अल्लादी की सलाह मिलते ही ता. 5 जून, 1947 की रात्रि को अपने विशेषाधिकारों को काम में लेते हुए संविधान में उक्त संशोधन कर ही डाला। जब अगले दिन श्री मुन्शी ने सरकारी गजट "सज्जन की कीर्ति सुधाकर" में उक्त संशोधन को देखा तो वे तत्काल ही अपने पद से इस्तीफा दे कर चले गये।[1]

मेवाड़ प्रशासन में श्री मुंशी के इस्तीफे से हुई रिक्तता की पूर्ति के लिये महाराणा ने रियासती विभाग के मन्त्री गोपालास्वामी आयंगर की सलाह पर एक सेवा निवृत्त आई. सी. एस. अधिकारी सर राममूर्ति को मेवाड़ का प्रधान मन्त्री नियुक्त किया। नये प्रधान मन्त्री की नियुक्ति के साथ ही साथ मेवाड़ में पुनः राजनैतिक हलचल शुरू हो गयी।

ब्रिटिश सरकार घोषणा कर चुकी थी कि वह ता. 15 अगस्त, 1947 को भारत में कांग्रेस को और पाकिस्तान में मुस्लिम लीग को सत्ता हस्तान्तरित कर देगी। अतः रियासतों को उक्त तारीख के पूर्व यह निर्णय करना था कि वे पाकिस्तान में शामिल होंगी या भारत में अथवा स्वतन्त्र रहेंगी। महाराजा जोधपुर ने महाराणा से पेशकश की कि मेवाड़ जोधपुर और कतिपय अन्य रियासतों के साथ पाकिस्तान में शामिल हो जाये तो जिन्ना उनकी मनचाही शर्तें मानने को तैयार है। पर महाराणा ने उत्तर दिया "भारतीय उप महाद्वीप में मेवाड़ का स्थान कहां होगा, इसका निर्णय तो मेरे पूर्वज शताब्दियों पूर्व ही कर चुके। यदि वे देश के प्रति गद्दारी करते तो मुझे भी आज हैदराबाद जैसी बड़ी रियासत विरासत में मिलती। पर न तो मेरे पूर्वजों ने ऐसा किया और न मैं ऐसा करूंगा। मेवाड़ भारत के साथ था और अब भी वहीं रहेगा।"[2] महाराणा के इस उत्तर के साथ ही साथ जिन्ना, भूपाल के नवाब, महाराजा जोधपुर और कतिपय अन्य राजाओं द्वारा भारत के टुकड़े-टुकड़े करने का षड्यन्त्र विफल हो गया। भारत में सर्वत्र महाराणा के देशानुराग की प्रशंसा की गयी।

अब सर राममूर्ति को मेवाड़ में राजनैतिक सुधारों की ओर ध्यान देना पड़ा। प्रजा मण्डल ने मेवाड़ के संविधान में देवस्थान निधि, विधान सभा के स्थानों के लिये अप्रत्यक्ष चुनाव प्रणाली एवं मन्त्रिमण्डल के विधान सभा के प्रति दायित्व आदि प्रावधानों को लेकर जोरदार विरोध किया। सरकार ने एक बार फिर महाराणा के विशेषाधिकारों को काम में लेते हुये ता. 11 अक्टूबर, 1947 को एक घोषणा द्वारा संविधान में अनेक संशोधन कर डाले। राज सम्पत्ति सम्बन्धी सभी धाराएं लोपकर वर्तमान और भावी महाराणाओं को निश्चिन्त कर दिया गया। देवस्थान निधि की स्थापना को समाप्त कर

---

1. लेखक की महाराणा भूपाल सिंह के निजी सचिव और इनके मन्त्री स्व. श्री मनमोहनलाल त्रिवेदी के साथ सितम्बर, 1976 में उदयपुर में उदयपुर वि. वि. के प्रो. पी. एस. देवाडी की उपस्थिति में हुई मुलाकात।
2. डी. आर. मनकेकर—"एक्सेशन टू एक्सटिंक्शन", पृष्ठ 57

उसे महाराणा के अन्तर्गत कर दिया गया। प्रताप विश्वविद्यालय के स्वरूप को बदल कर उसे महत्वहीन बना दिया गया। साथ ही विधान सभा में ग्राम स्थानों की संख्या में वृद्धि एव ग्रामीण क्षेत्रों में बालिग मताधिकार द्वारा प्रत्यक्ष चुनाव का प्रावधान कर प्रजा मण्डल की भी तुष्टि करने का प्रयत्न किया गया।

संविधान में उक्त संशोधन करने के बाद मेवाड़ सरकार ने विधान सभा के चुनाव कराने का निर्णय किया। यद्यपि प्रजा मण्डल की मुख्य मांग कि मन्त्रिमण्डल विधान सभा के प्रति उत्तरदायी हो पूरी नही हुई, तथापि प्रजामण्डल ने चुनाव लड़ने का फैसला किया।

फरवरी, 1948 में विधान सभा के चुनावों की प्रक्रिया शुरू हुई। प्रजा मण्डल के 8 उम्मीदवार निर्विरोध निर्वाचित घोषित कर दिये गये। इसी बीच ता. 6 मार्च को महाराणा ने अपने जन्म दिवस पर सुधारों की एक और किश्त घोषित की जिसमें महाराणा ने दीवान के पद को छोड़कर शेष मन्त्रिमण्डल विधान सभा के प्रति उत्तरदायी बनाना स्वीकार कर लिया। महाराणा ने अन्तरिम-काल के लिये अपने मन्त्रिमण्डल का पुर्नगठन करना भी स्वीकार कर किया। स्मरण रहे मई, 1947 से अब तक मन्त्रिमण्डल में प्रजामण्डल के केवल 2 ही प्रतिनिधि थे।

जोधपुर :

जोधपुर में सन् 1942 का आन्दोलन काफी लम्बा चला। इस कारण सम्भवत् कुछ कार्यकर्ता थक गये और सरकार से किसी तरह सम्मानपूर्वक समझौता कर जेल से बाहर आने के पक्ष में थे। उन्होंने श्री जयनारायण व्यास पर आन्दोलन समाप्त करने के लिये दबाव डाला। दूसरी ओर परिषद् के साम्यवादी गुट ने द्वितीय महायुद्ध को जन युद्ध की संज्ञा दी। जोधपुर के प्रमुख साम्यवादी कार्यकर्ता श्री एच.के. व्यास ने व्यास जी को सरकार से समझौता करने का आग्रह किया। पर व्यास जी ने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। जालोर के किले में बन्द लोक परिषद् के कुछ कार्यकर्ताओं का भी यही मत था कि रूस के लड़ाई में शामिल हो जाने से स्थिति बदल गई है और अंग्रेजों द्वारा जर्मनी के विरुद्ध लड़ी जाने वाली लड़ाई जनयुद्ध में परिणित हो गई है अतः लोक परिषद् को अपना आन्दोलन उठा लेना चाहिए। पर व्यास जी टस से मस नहीं हुये। सरकार ने अब श्री गंगादास के माध्यम से व्यास जी को कहलाया कि यदि लोक परिषद् युद्ध सम्बन्धी कार्यों में बाधा नही पहुंचाने का आश्वासन दे तो वे परिषद् के कार्यकर्ताओं को रिहा करने को तैयार हैं। राज्य के आई. जी. पुलिस भी इस सम्बन्ध में व्यास जी से मिले। व्यास जी को स्पष्ट हो गया था कि एक लम्बे समय तक जेल में रहने के कारण परिषद् के कतिपय कार्यकर्ताओं का मनोबल गिर गया है। देश में गांधी जी की रिहाई से वातावरण मे बदलाव आ रहा था। इसके अलावा लोक परिषद् ने सन् 941 में अपना आन्दोलन राज्य द्वारा युद्ध कार्यों के लिये दी जाने वाली सहायता को लेकर नहीं छेड़ा था। इन सब परिस्थितियों को ध्यान रखते हुये व्यास जी ने राज्य सरकार को यह आश्वासन दे दिया कि लोक परिषद् की नीति युद्ध सम्बन्धी कार्यों मे बाधा पहुचाने की नही है। प्रधान मन्त्री सर डोनाल्ड फील्ड ने व्यास जी के उक्त स्पष्टीकरण के आधार पर व्यास जी की अविलम्ब रिहाई के आदेश देते हुए ता. 24 मई, 1944 के सरकारी गजट मे निम्न विज्ञप्ति जारी की :—

"श्री जयनारायण व्यास ने स्वयं की ओर से एवं सन् 1942-43 के आन्दोलन

पर गये। उन्होंने उस संध्या को अपने महल में नेहरू जी के सम्मान में भोज दिया एवं कांग्रेस के लिये रु. 25000/– की थैली भेंट की। इस अवसर पर उनकी सुपुत्री "प्रियदर्शिनी" इन्दिरा जी भी उपस्थित थीं। पं. नेहरू जी जब जोधपुर से रवाना हुये तो महाराजा उन्हें विदा देने के लिये उनके निवास स्थान पर गये और आधा घण्टे तक राज्य की राजनैतिक स्थिति पर विचार किया। महाराजा ने नेहरू जी की सलाह पर सर डोनाल्ड फील्ड के स्थान पर इलाहाबाद डिविजन के कमिश्नर श्री सी. एस. वेंकटाचारी को प्रधान मन्त्री के पद पर नियुक्त कर दिया। इससे लोक परिषद् और राज्य के बीच सम्बन्ध सुधर गये। पर यह स्थिति अधिक दिनों तक नहीं चली।

अगस्त, 1945 में अमेरिका द्वारा जापान के हीरोशिमा और नागासाकी नगरों पर अणुबम डालने के साथ विश्व युद्ध का अन्त हो गया। तुरन्त ही इंगलैण्ड में आम चुनाव हुये। युद्धकालीन नेता सर विन्सटन चर्चिल का अनुदार दल हार गया। मजदूर दल की विजय हुई। एटली प्रधान मंत्री बन गये। ब्रिटिश सरकार ने सत्ता हस्तान्तरित करने की दृष्टि से तीन मंत्रियों का उच्च स्तरीय मिशन भारत भेजा। सितम्बर, 1946 में केन्द्र में कांग्रेस अध्यक्ष पं. जवाहरलाल नेहरू अस्थायी सरकार के प्रधान मंत्री बन गये। पर सन् 1947 के शुरू में ही जोधपुर के प्रगतिशील महाराजा उम्मेदसिंह का देहान्त हो गया। उनके स्थान पर उनके युवा पुत्र हनुवन्त सिंह गद्दी पर बैठे। उन्होंने लोक परिषद् के विरुद्ध खुले आम सामन्त वर्ग का समर्थन करना शुरू कर दिया।

राज्य की शह पाकर जागीरदार किसानों को बेदखल करने लगे और उन पर मनमाना अत्याचार करने लगे। आये दिन किसानों की हत्याओं के समाचार आने लगे। लोक परिषद् अपने स्वयं के अस्तित्व की कीमत पर ही इन घटनाओं की अनदेखी कर सकती थी। उसने किसानों को संगठित करने के लिये जगह-जगह किसान सम्मेलन आयोजित किये। परिषद् ने एक ऐसा सम्मेलन श्री मथुरादास माथुर की अध्यक्षता में 13 मार्च, 1947 को नागौर जिले के डाबड़ा गांव में करने का निश्चय किया। डाबड़ा और आस-पास के जागीरदारों ने सम्मेलन को भंग करने का संकल्प किया। वे नियत तिथि पर अस्त्रों-शस्त्रों से सुसज्जित होकर सदल-बदल डाबड़ा में एकत्रित हो गये। उधर लोक परिषद् के कार्यकर्ता सर्व श्री मथुरादास माथुर, द्वारकादास पुरोहित, नरसिंह कछवाहा, हरिन्द्र कुमार चौधरी, किशनलाल शाह, राधाकृष्ण तात, बंशीधर पुरोहित "ज्वाला", और छगनराज चौपासनीवाला आदि भी डाबड़ा पहुंच गये। गांव-गांव से किसान लोग एकत्रित होने लगे। स्थिति बड़ी तनावपूर्ण थी। राज्य सरकार इस स्थिति से भली-भांति परिचित थी। पर उसने मूक दर्शक बने रहना ही उचित समझा। सच तो यह है कि वह परिषद् को जागीरदारों के कन्धे पर बन्दूक रख कर सबक सिखाना चाहती थी। अस्तु जागीरदारों और सामन्ती तत्वों ने सभा स्थल को घेर लिया। उन्होंने नंगी तलवारों, कुल्हाड़ों और लाठियों से परिषद् के कार्यकर्ताओं पर हमले किये, जिससे परिषद् के लगभग सभी कार्यकर्ता गम्भीर रूप से घायल हो गये। हमलावरों ने कार्यकर्ताओं से निपट कर सम्मेलन में एकत्रित किसान समूह पर गोली चलाई। फलस्वरूप लाडनू तहसील के नींबी-जोधा गांव के परिषद् के कार्यकर्ता श्री चुन्नीलाल शर्मा एवं इस क्षेत्र के 4 किसान कार्यकर्ता सर्व श्री रामूराम, रुघाराम, अलकाराम और पन्नाराम घटना स्थल पर ही शहीद हो गये। श्री शर्मा और अन्य शहीदों की याद में डाबड़ा में आज भी हर वर्ष 13 मार्च को मेला भरता है।

राज्य सरकार द्वारा हमलावरों पर कार्यवाही करना तो दूर उल्टा श्री मथुरादास माथुर आदि कार्यकर्ताओं पर मुकदमें चलाये जो देश के आजाद होने के बाद सन् 1948 में भारत सरकार के आदेश से उठाये गये। ऐसी स्थिति में बिना भारत सरकार के दखल के राज्य में किसी भी प्रकार के संवैधानिक सुधारों की अपेक्षा नहीं की जा सकती थी और अब तो जोधपुर में युवक महाराजा हनुवन्त सिंह गद्दी पर आसीन हो चुके थे, जो पाकिस्तान से मिलकर स्वतन्त्र मारवाड़ के स्वप्न देखने लगे थे।

ब्रिटिश सरकार की सत्ता हस्तान्तरण की योजना के अनुसार रियासतें भारत या पाकिस्तान में शामिल हो सकती थीं अथवा अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रख सकती थीं। रियासतों को इस सम्बन्ध में अपना निर्णय 15 अगस्त से पूर्व करना था। भोपाल के नवाब हमिदुल्ला खां ने जून, 1947 में नरेन्द्र मण्डल के अध्यक्ष पद से इस्तीफा देते हुये वायसराय को सूचित कर दिया कि रियासतों पर ब्रिटिश सरकार की सार्वभौम सत्ता समाप्त होने के साथ ही साथ भोपाल की रियासत स्वतन्त्र हो जायेगी।[1] यही नही वे जिन्ना के दाये हाथ बने हुये थे और पाकिस्तान के दलाल की तरह काम कर रहे थे।[2] महाराजा इन्दौर यशवन्तराय होल्कर नवाब के पिछलग्गू थे।[3] हैदराबाद[4] और त्रावणकोर[5] भी अपने आपको स्वतन्त्र घोषित करने की तैयारी कर रहे थे। जूनागढ़ पाकिस्तान में मिलने जा रहा था।[6] महाराजा जोधपुर भोपाल के नवाब के द्वारा जिन्ना से मिल चुके थे।[7] इन परिस्थितियों में भोपाल के नवाब ने जिन्ना की सहमति से यह योजना बनाई कि बड़ौदा, इन्दौर, भोपाल, उदयपुर, जोधपुर और जैसलमेर रियासतों द्वारा शासित प्रदेश पाकिस्तान का अंग बन जाय। उनकी इस योजना में सबसे बड़ी बाधा उदयपुर और बड़ौदा की ओर से उपस्थित हो सकती थी। महाराजा जोधपुर ने उक्त रियासतों से सहमति प्राप्त करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली।[8] इस प्रकार भारत के टुकड़े-टुकड़े करने का एक मानचित्र तैयार हो गया।

ये सब षड़यन्त्र चल ही रहे थे कि 5 जुलाई, 1947 को रियासती विभाग के प्रभारी मंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने अपने बयान में राजाओं को भारतीय संघ में शामिल होने की दावत देते हुये कहा कि भारत में रियासतों का एक्सेशन (accession) सुरक्षा, विदेशी मामलात और संचार व्यवस्था आदि विषयों तक ही सीमित रहेगा। अन्य

---

1. वी. पी. मेनन—दी स्टोरी ऑफ इन्टिग्रेशन ऑफ इंडियन स्टेट्स, पृ. 84
2. सरदार पटेल्स कॉरसपोन्डेन्स, जिल्द 5, रियासती मंत्रालय के सं. सचिव श्री ए. एस. पाइ का सरदार पटेल को नोट पृ. 342
3. " " " पृ. 342
4. वी. पी. मेनन—दी स्टोरी ऑफ इन्टिग्रेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स पृ. 317
5. " " " पृ. 90
6. " " " पृ. 126
7. सरदार पटेल्स कॉरस्पोन्डेन्स, जिल्द 5 अपे. 1 पृ. 157-159
8. के. एम. मुन्शी "पिलग्रीमेज टू फ्रीडम" पृ. 161-162

विषयों में रियासतें खुद मुख्तार होंगी।[1] 25 जुलाई को नरेन्द्र मण्डल के सम्मेलन में भाषण देते हुये वायसराय माउंट बेटन ने राजाओं को कहा कि यद्यपि वे संवैधानिक दृष्टि से भारत या पाकिस्तान में शामिल होने को स्वतन्त्र हैं तथापि उन्हें विश्वास है कि वे अपनी-अपनी रियासतों की भौगोलिक स्थिति और अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखकर ही निर्णय करेंगे।[2] सरदार पटेल और माउंटबेटन की अपीलों का राजाओं पर आमतौर से अच्छा प्रभाव पड़ा। पर अब भी कुछ राजा ऐसे थे जो दूसरे ही स्वप्न देख रहे थे।

महाराजा धौलपुर और एक दो अन्य राजाओं ने 6 अगस्त को भोपाल के नवाब को सूचित किया कि महाराजा जोधपुर उनसे मिलना चाहते हैं। नवाब ने जोधपुर महाराजा को दिल्ली स्थित अपने निवास स्थान पर आमन्त्रित किया। जोधपुर महाराजा ने नवाब से कहा कि वे पाकिस्तान में शामिल होने की शर्तें जानने के लिए तुरन्त ही श्री जिन्ना से मिलना चाहते हैं। नवाब ने उसी दिन तीसरे पहर जिन्ना से जोधपुर महाराजा की मुलाकात तय करवा दी। जोधपुर और जैसलमेर के महाराजा को लेकर नवाब नियत समय पर जिन्ना से मिले। जोधपुर ने जिन्ना से पूछा कि जो रियासतें पाकिस्तान से संबंध स्थापित करना चाहती हैं, उन्हे आप क्या शर्तें या रियायतें देंगे ? जिन्ना ने उत्तर दिया "मैंने मेरी स्थिति बहुत स्पष्ट कर दी है। हम रियासतों से सन्धि करने को तैयार हैं। हम उन्हें बहुत अच्छी शर्तें देंगे, और हम उनके साथ स्वतन्त्र राज्यों की तरह व्यवहार करेंगे।"[3] जिन्ना ने अपने मेज की दराज से एक खाली कागज निकाल कर महाराज को दिया और कहा कि आप जो चाहें वे शर्तें इस कागज पर लिख दें और मैं उस पर दस्तखत कर दूंगा।[4] दोनों महाराजा जिन्ना से आश्वस्त होकर अपने होटल में आ गये।

भारत सरकार कतिपय राजाओं द्वारा जिन्ना से की जा रही सांठ-गांठ सम्बन्धी गतिविधियों के प्रति पूर्णतया सतर्क थी। उन्होंने राजाओं के इस षड्यन्त्र को विफल करने के लिये सबसे पहले महाराज बड़ौदा को टटोला। मेनन बड़ौदा को भारतीय संघ में शामिल होने के लिये सहमत कराने मे सफल हो गये। 7 अगस्त को बड़ौदा ने इन्स्ट्रूमेन्ट ऑफ एक्सेसन पर हस्ताक्षर कर दिये पर लड़खड़ाते हुये मेनन की गोद में लुढक पड़े।[5] उसी दिन बीकानेर भी भारतीय संघ में शामिल हो गया। राजस्थान की छोटी सी रियासत धौलपुर के शासक महाराज राणा उदयभान सिंह, जो महाराजा जोधपुर को पाकिस्तान में शामिल करने के षड्यन्त्र में सक्रिय थे, माउंट बेटन के सम्मुख इन्स्ट्रूमेन्ट ऑफ एक्सेसन पर हस्ताक्षर करते हुये रो पड़े और कहने लगे "इन हस्ताक्षरों के साथ ही साथ आपके और हमारे पूर्वजों के बीच सन् 1765 मे हुई सन्धि का खात्मा हो गया है।"[6] जैसलमेर के महारावल सरदार पटेल द्वारा सीमा सुरक्षा सम्बन्धी आश्वासन दिये जाने के बाद महाराजा जोधपुर का साथ छोड़ कर भारतीय संघ में शामिल हो गये।

---

1. व्हाइट पेपर ऑन इण्डियन स्टेट्स, अपे. 5, पृ. 157–159
2. " " 6, पृ. 160-164
3. परिशिष्ट 5 (माउन्टबेटन का भाषण)
4. कॉलिन्स एण्ड लॉपियरे—फ्रीडम एट मिडनाइट (विकास, पेपर बेक संस्करण) पृ. 207
5. " " " पृ. 206
6. " " " पृ. 206

जोधपुर ने उदयपुर को टटोला तो महाराणा भूपाल सिंह ने उत्तर दिया, "भारतीय महाद्वीप में मेवाड़ का स्थान कहां होगा, इसका निर्णय तो मेरे पूर्वज शताब्दियों पूर्व कर चुके हैं "......। मेवाड़ सदा भारत के साथ रहा है, और अब भी वहीं रहेगा।"[1] मेवाड़ औपचारिक रूप से 9 अगस्त को भारतीय संघ में शामिल हुआ। जयपुर और राजस्थान की अन्य रियासतें इसके पूर्व ही भारतीय संघ में शामिल हो चुकी थीं।

उन दिनों जोधपुर में महाराजा के पाकिस्तान में शामिल होने की खबरों को लेकर उत्तेजना फैली हुई थी। राजस्थान के राजाओं में भी वे अलग थलग पड़ गये थे। तब भी वे विचलित नहीं हुये। उन्होंने जोधपुर से धौलपुर के महाराज-राणा को दिल्ली सूचित किया कि वे 9 अगस्त को दिल्ली लौट रहे हैं और भूपाल के नवाब से मिलना चाहेंगे। नवाब उस समय भोपाल में थे। धौलपुर ने जब नवाब से सम्पर्क किया तो उन्होंने बताया कि वे उक्त तारीख को दिल्ली पहुंच जायेंगे। नवाब भोपाल से हवाई जहाज द्वारा दिल्ली पहुंचे तो उनको हवाई अड्डे पर ही जोधपुर का सन्देश मिला कि वे सीधे धौलपुर हाउस पर आ जायें। नवाब धौलपुर हाउस पहुंच गये। वहां वे बड़ी देर तक जोधपुर महाराजा का इन्तजार करते रहे। काफी देर बाद जोधपुर ने टेलीफोन किया कि वे वायसराय भवन में अटक गये हैं। वहां से वे सीधे जोधपुर जायेंगे और संध्या को वापस लौटेंगे। नवाब अपने निवास स्थान को लौट गये। शाम को धौलपुर भूपाल के नवाब की कोठी पर गये और उन्हें सूचित किया कि महाराजा जोधपुर नहीं लौटे हैं। दूसरे दिन 10 अगस्त को महाराजा अपने गुरु माधवानन्द को लेकर दिल्ली पहुंचे। दिन के 2 बजे धौलपुर हाउस में उनकी नवाब से मुलाकात हुई। वहां कुछ और राजा भी उपस्थित थे। लम्बे चौड़े विचार विमर्श के बाद महाराजा ने नवाब को कहा कि वे उन्हें पुनः अगले दिन (ता. 11 अगस्त) को प्रातः 10 बजे मिलेंगे।[2]

धौलपुर हाउस से महाराजा सीधे होटल इम्पीरियल में गये जहां वे ठहरे हुये थे। रियासती मंत्रालय महाराजा की गतिविधियों की जानकारी रखे हुये थे। वी. पी. मेनन होटल इम्पीरियल पहुंच गये और महाराजा से कहा कि माउन्टबेटन उनसे तुरन्त मिलना चाहते हैं। मेनन महाराजा को लेकर वायसराय हाउस पहुंच गये। महाराजा को वेटिंग रूम में बैठाकर मेनन माउन्टबेटन से मिले और उन्हें महाराजा के पाकिस्तान में मिलने सम्बन्धी ताजा घटनाओं से परिचित कराया। माउन्टबेटन ने महाराजा को अपने कमरे में बुलाया और कहा कि विशुद्ध कानूनी दृष्टि से वे पाकिस्तान में शामिल होने को स्वतन्त्र हैं, परन्तु वे पूरी तरह सोच लें कि एक हिन्दू बहुमतवाली रियासत के पाकिस्तान में शामिल होने पर वहां की जनता में क्या प्रतिक्रिया हो सकती है और उसके क्या नतीजे हो सकते हैं? महाराजा ने कहा कि जोधपुर को पाकिस्तान में शामिल करने के लिये जिन्ना मनवांछित शर्तें देने को तैयार हैं। उन्होंने माउन्ट बेटन से पूछा क्या भारत सरकार ऐसा करने को तैयार है? मेनन ने कहा कि यदि वे "वादों" के आधार पर ही भारत या पाकिस्तान में शामिल होना चाहते हैं तब तो वे भी भारत सरकार की ओर से सभी तरह के वादे कर देंगे, पर इस प्रकार के वादे चलने वाले नहीं हैं। बहुत बहस मुबाहसे के बाद

---

1. के. एम. मुन्शी—पिलग्रिमेज टू फ्रीडम, पृ. 162
2. सरदार पटेल्स कारसपोन्डेन्स, जिल्द 5, पृ. 515-517

महाराजा ने भारतीय संघ मे शामिल होना मन्जूर कर लिया और तदनुसार एक पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये ।[1]

माउन्टवेटन महाराजा और मेनन को छोड़ कर कुछ क्षणो के लिये बाहर गये ही थे कि महाराजा ने मेनन पर पिस्तोल तान कर कहा "मै तुम्हारे दबाव मे आकर झुकने वाला नही हूँ ।" मेनन ने पिस्तौल के सामने अपने आपको सम्भालते हुये उत्तर दिया कि इस प्रकार के बचकाना व्यवहार और गीदड धमकियो से कुछ होने वाला नही है । यदि वे यह सोचते हैं कि मुझे मारने अथवा धमकिया देने से जोधपुर का भारतीय सघ मे शामिल होने का निर्णय रद्द हो जायेगा तो वे भ्रम मे है । यह सब कुछ हो ही रहा था कि माउन्टबेटन पुनः कमरे मे आये । उन्होने जब यह सुना तो सारी घटना को हसी मे परिवर्तित कर दिया । उन्होने महाराजा का पिस्तौल लेकर उन्हे अपने यहाँ से प्रेम से विदा कर दिया । यह पिस्तौल महाराजा के स्वयं के वर्कशाप मे बनाया गया था । यह "पेन" का भी काम करता था । महाराजा ने जोधपुर को भारतीय सघ मे शामिल करने के सम्बन्धी पत्र पर इसी "पेन-पिस्टल" से हस्ताक्षर किये थे । कुछ वर्षो बाद माउन्टवेटन इग्लैण्ड की प्रसिद्ध मेजिक क्लब "मेजिक सरकल" के अध्यक्ष बने तो उन्होने इस "मेजिक पिस्टल" को मेजिक सरकल को भेंट कर दिया । आज भी यह पिस्टल उक्त क्लब के म्यूजियम की शोभा बढ़ा रहा है ।[2]

अगले दिन वादे के अनुसार महाराजा नवाब से मिले और उन्हें सूचित कर दिया कि उन्होंने भारतीय संघ मे शामिल होने का निर्णय ले लिया है ।[3] नवाब, जोधपुर के महाराज राणा और एक दो अन्य राजाओ को, जो इस भारत विरोधी षडयन्त्र मे शामिल थें, बड़ी निराशा हुई । तीन दिन बाद मेनन जोधपुर गये और वहाँ महाराजा से औपचारिक रूप से "इन्स्टूमेन्ट ऑफ एक्सेसन" पर हस्ताक्षर करवाये । इसके बाद महाराजा ने पिछली बातों को भुलाते हुये बड़ी खुशियाँ मनाई और शेम्पेन की नदियां बहा दी । शराब के नशे मे धुत्त महाराजा मेनन को अपने जहाज मे छोड़ने दिल्ली आये । मेनन सरदार पटेल के पास पहुचे और "एक और रियासत सरदार की लबालब भरी हुई टोकरी मे डाल दी ।"[4] इस प्रकार जोधपुर के भारतीय सघ मे मिलने के प्रकरण का सुखद अन्त हुआ । इस घटना के बाद जोधपुर महाराजा के सरदार पटेल से मधुर सम्बन्ध हो गये । पटेल की ओर से महाराजा को स्थायी रूप से निमन्त्रण था कि वे जब कभी दिल्ली आये तो उनके पास ही ठहरें । युवक महाराजा सरदार को पिता तुल्य समझने लग गये ।

महाराजा हनुवन्त सिह किसी तरह भारतीय संघ में शामिल तो हो गये और सरदार पटेल से अच्छे सम्बन्ध स्थापित कर लिये पर निरंकुश राजतन्त्र वाद का भूत अभी भी उनके सिर पर सवार था । जोधपुर राज्य पर वे अपना एक छत्र शासन चाहते थे । राज्य सेवाओं के मारवाड़ीकरण के नाम पर उन्होंने अक्टूबर सन् 1947 में उदार विचारधारा के एक आई. ए. एस. अधिकारी श्री वेंकटाचार को प्रधानमन्त्री के पद से हटा कर उनके

---

1. वी. पी. मेनन—"दी स्टोरी ऑफ इन्टिग्रेशन ऑफ इडियन स्टेट्स", पृ. 117
2. कोलिन्स एण्ड लापिरे—"फ्रीडम एट मिडनाइट" पृ. 208
3. सरदार पटेल्स कॉरसपोन्डेन्स, जिल्द 5 पृ. 515-517
4. कोलिन्स एण्ड लापिरे--फ्रीडम एट मिडनाइट पृ 208

स्थान पर अपने चाचा श्री अजीतसिंह को प्रधान मन्त्री नियुक्त कर दिया। एक 18 वर्ष के राजपूत युवक को राज्य का गृह मन्त्री बना दिया। महाराजा ने लगभग सारा मन्त्री मण्डल सामन्तवादी तत्वों से भर दिया। पंडित नेहरू ने ता. 4 नवम्बर, 1947 के पत्र द्वारा उक्त घटना के सम्बन्ध में गृह मन्त्री सरदार पटेल का ध्यान खींचते हुये लिखा :—

"जैसा कि आपको ज्ञात है अलवर, भरतपुर और जोधपुर के शासक अपने-अपने राज्यों में जुल्म ढाह रहे हैं। जोधपुर ने तो एक 18 वर्ष के मूर्ख नौजवान को अपना गृह मन्त्री बनाया है। वैंकटाचार को इन्ही कारणों से जोधपुर छोड़ना पड़ा। ये राजा लोग बड़े ही मूर्ख हैं और अपने आपको हानि पहुंचा रहे हैं।"[1]

महाराजा के इस दमन का जोधपुर की जनता ने जबरदस्त विरोध किया। राज्य की स्थिति से चिन्तित होकर सरदार पटेल ने 28 फरवरी, सन् 1948 को मेनन को महाराजा को समझाने के लिये जोधपुर भेजा। फलस्वरूप श्री जयनारायण व्यास के नेतृत्व में एक मिला जुला मन्त्रिमण्डल बना जिसमें लोक परिषद् और सामन्त वर्ग के प्रतिनिधि शामिल किये गये। इस प्रकार के मन्त्रिमण्डल का सुचारु रूप से चलना सम्भव नहीं था। मन्त्रिमण्डल में कई बार फेर बदल हुये। अन्त में सितम्बर सन् 1948 मे व्यास जी का नया मन्त्रीमण्डल बना जिसमें पहली बार लोक परिषद् का बहुमत हुआ। इस मन्त्रिमण्डल में लोक परिषद् के प्रतिनिधि के रूप में व्यास जी के अलावा सर्वश्री मथुरादास माथुर, द्वारकादास पुरोहित आदि शामिल किये गये।

बीकानेर :

दिनांक 2 फरवरी, 1943 को महाराजा गंगा सिंह चल बसे। उनके स्थान पर उनके पुत्र श्री शार्दुल सिंह गद्दी पर बैठे। देशी राज्यों और भारत सरकार के बीच पत्र-व्यवहार के माध्यम पोलीटिकल एजेन्ट और ए. जी. जी. हुआ करते थे। महाराजा गंगा सिंह ने सन् 1919 में अपने प्रभाव द्वारा पोलीटिकल एजेन्ट की कड़ी को समाप्त करवा दिया था। परन्तु महाराजा गंगा सिंह की मृत्यु के बाद भारत सरकार ने निर्णय लिया कि अब बीकानेर राज्य भी अन्य राज्यों की भांति पोलिटिकल एजेन्ट के मार्फत ही ए. जी. जी. एवं भारत सरकार से पत्र-व्यवहार करेगा। भारत सरकार ने महाराजा शार्दुल सिंह को तब तक बीकानेर राज्य के शासक के रूप में मान्यता नहीं प्रदान की जब तक कि महाराजा ने भारत सरकार के उक्त निर्णय को स्वीकार नहीं कर लिया। इससे महाराजा की प्रतिष्ठा को हल्की सी ठेस पहुंची, पर अंग्रेजी सरकार देशी रियासतों के शासकों के साथ समय-समय पर इस प्रकार की चोट करती रहती थी—शायद राजाओं को यह याद दिलाने के लिये कि सार्वभौम सत्ता वास्तव में ब्रिटिश शासकों में निहित है।

नये महाराजा ने गद्दी पर बैठते ही सर्वश्री रघुवरदयाल गोयल, गंगादास कौशिक, दाऊदयाल आचार्य, भिक्षालाल बोहरा, रामनारायण शर्मा और गट्ठड़ महाराज आदि राजनैतिक बन्दियों को रिहा कर दिया। परन्तु नेमीचन्द आंचलिया को तभी रिहा किया गया जबकि उसने जेल में आमरण अनशन शुरू किया। प्रजा परिषद् के नेताओं ने सरकार से प्रजा परिषद् को मान्यता देने की मांग की। महाराजा और रघुवरदयाल गोयल के बीच तारीख 26-8-1984 को इस सम्बन्ध मे लम्बी वार्ता हुई। परन्तु कोई नतीजा

1. सरदार पटेल्स कोरसपांडेन्स जिल्द 5 पृ. 412

नही निकला। श्री गोयल उसी रात को गिरफ्तार कर लिये गये और लूणकरसर में नजरबन्द कर दिये गये। परिषद् के महामन्त्री गगादास और प्रमुख कार्यकर्ता दाऊदयाल आचार्य भी सुरक्षा कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार किये जाकर जेल मे बन्द कर दिये गये। श्री गोयल ने अपनी नजरबन्दी के खिलाफ हाईकोर्ट मे आवेदन-पत्र दिया, परन्तु हाईकोर्ट की सुनवाई होने के पूर्व ही उन्हे एक बार फिर राज्य से निर्वासित कर दिया गया। सन् 1945 के जून मे दूधवाखारा किसान आन्दोलन ने फिर जोर पकड़ा। सर्वश्री मघाराम वैद्य एव रामनारायण शर्मा पुन: जेल मे डाल दिये गये। इस प्रकार राज्य मे दमन का दौर चलता रहा।

31 दिसम्बर, 1945 को प. जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता मे उदयपुर मे अ.भा. देशी राज्य लोक परिषद् का अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन में बीकानेर की स्थिति का जिक्र करते हुए प नेहरू ने अपने भाषण मे कहा कि जहाँ शादी की कुमकुम-पत्री तक राज्य द्वारा सेन्सर की जाती हो, पर्दे की ओट मे जनता पर भीषण अत्याचार किये जाते हो और उसके प्रतिवाद मे मनगढन्त दलीलें दी जाती हो उस राज्य के शासक इन्सान नहीं हैवान हैं।" बीकानेर राज्य की तत्कालीन राजनैतिक स्थिति का इससे बढिया सुन्दर चित्रण और कौन कर सकता था? इस सम्मेलन मे बीकानेर से सर्वश्री रघुवरदयाल गोयल, मघाराम वैद्य, गंगादास कौशिक और हनुमान सिंह दुधवाखारा आदि कार्यकर्ताओ ने भाग लिया। श्री गोयल उदयपुर से अधिवेशन मे भाग लेकर जयपुर आये। पर वहाँ की सरकार ने भी उनको राज्य से निर्वासित कर दिया। श्री गोयल अलवर पहुचे और वही से उन्होने सर्वश्री गगादास कौशिक, चौ. हसराज, चौ. कुम्भाराम, स्वामी करमानन्द और चम्पालाल राका आदि उत्साही कार्यकर्ताओ के सहयोग से प्रजा परिषद् के कार्य का संचालन किया। श्री राका इन दिनो कलकत्ता से "आज का बीकानेर" नामक पत्र का सम्पादन कर रहे थे।

इधर हनुमान सिंह दुधवाखारा की प्रवृत्तियो पर अकुश लगाने के लिये महाराजा ने सेना की एक टुकड़ी भेज कर उन्हे गिरफ्तार कर लिया। उनकी चल एव अचल सम्पत्ति जब्त कर ली। उनके माता, चार भाई और चार भाभियो को दो-दो वर्ष की सजा दे दी गई। उनकी दोनो पत्नियो को बीकानेर राज्य से निर्वासित कर दिया। स्वय श्री हनुमान सिंह को अनूपगढ के किले मे बन्द कर दिया, जहाँ उन्होने 65 दिन तक अनशन किया। कई दिनो तक तो उन्होने पानी भी नही पीया। अन्त मे उनक बेहोश हो जाने पर उन्हे रिहा कर दिया गया।

ता. 25 जून, 1946 को प्रजा परिषद् के प्राण श्री रघुवरदयाल गोयल पाबन्दी तोडकर बीकानेर मे घुस गये। उन्हे गिरफ्तार कर जेल मे बन्द कर दिया गया। चौ. कुम्भाराम उसके पूर्व ही पकड़ लिये गये थे। ता 30 जून को रायसिंहनगर मे प्रजा परिषद् का सम्मेलन किया गया। सम्मेलन के अध्यक्ष थे बीकानेर षडयन्त्र केस के भूतपूर्व अभियुक्त श्री सत्यनारायण सर्राफ। 1 जुलाई को रायसिंहनगर स्टेशन पर रेल से उतर कर परिषद् के कार्यकर्ता हाथ मे तिरगे झण्डे लिये हुये सम्मेलन मे शरीक होने जा रहे थे। पुलिस इन कार्यकर्ताओ से झण्डे छीन कर उन्हे घसीटने हुये रेस्ट हाउस की ओर ले गई। जनता रेस्ट हाउस की ओर उमड पडी। जनता की इस भीड़ का नेतृत्व तिरगा झण्डा हाथ मे लिये बीरबल सिंह नामक एक हरिजन नौजवान कर रहा था। पुलिस ने भीड पर गोली चला दी। बीरबल सिंह वही शहीद हो गया। कई अन्य व्यक्ति घायल हुये। राजस्थान सरकार ने

हाल ही में शहीद बीरबल सिंह की स्मृति में इन्दिरा गांधी नहर की एक प्रमुख वितरिका का नाम "बीरबल ब्रान्च" रखा है।

एक ओर बीकानेर में महाराजा का दमन चक्र चल रहा था तो दूसरी ओर देश में राजनैतिक परिस्थितियां तेजी से बदल रही थीं। सत्ता हस्तान्तरण के सम्बन्ध में ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल मिशन 23 मई, 1946 को भारत पहुंच चुका था। भारत की आजादी की घड़ियाँ निकट आ रही थीं। महाराजा के सामने अपने रवैये को बदलने के सिवाय कोई रास्ता नही था। 18 जुलाई 1946 को श्री गोयल और चौ. कुम्भाराम जेल से रिहा कर दिये गये। बीकानेर नगर में प्रजा परिषद् का कार्यालय पुनः स्थापित हो गया।

31 अगस्त, 1946 को महाराजा द्वारा राज्य में शासन सुधार करने की दृष्टि से दो समितियां नियुक्त की गईं। पहली समिति राज्य का नया संविधान बनाने के लिये और दूसरी मतदाताओं की योग्यता निर्धारित करने तथा निर्वाचन क्षेत्र तैयार करने के लिये। उक्त समितियों के प्रतिवेदन प्राप्त होने पर महाराजा ने दिसम्बर, 1947 में एक नया संविधान लागू कर दिया। राज्य में अन्तरिम सरकार बनाने एवं संविधान के अन्तर्गत धारा सभा के लिये चुनाव कराने के सम्बन्ध में राज्य के प्रधान मन्त्री और परिषद् के कतिपय कार्यकर्ताओं के बीच 16 मार्च, 1948 को एक और समझौता सम्पन्न हुआ, जिसके अनुसार श्री जसवन्त सिंह दाउदसर के नेतृत्व में 10 सदस्यों का एक मन्त्रीमण्डल बनाया गया, जिसमें प्रजा परिषद् के सर्वश्री कुम्भाराम आर्य,[1] हरदत्त सिंह चौधरी, गौरीशंकर आचार्य और सरदार मस्तान सिंह शामिल किये गये। इस मन्त्री मण्डल ने 18 मार्च, 1948 को पद ग्रहण किया। प्रजा परिषद् ने इस समझौते को ठुकरा दिया। उसका कहना था कि महाराजा ने मन्त्रिमण्डल में प्रजा परिषद् के सदस्यों को शामिल करने के पूर्व प्रजा परिषद् को विश्वास में नही लिया। उसने एक प्रस्ताव द्वारा परिषद् के सदस्यों को मन्त्रिमण्डल से बाहर आने का आदेश दिया और साथ ही 23 सितम्बर को होने वाले धारा सभा के चुनावों के बहिष्कार का भी निर्णय लिया। इस प्रकार परिषद दो गुटों में विभाजित हो गई। परन्तु कुछ समय बाद प्रजा परिषद् से सम्बन्धित मन्त्रियों का भी कतिपय मुद्दों को लेकर महाराजा और अन्य मन्त्रियों से मतभेद हो गया। फलतः वे इस्तीफा देकर बाहर आ गये। इस प्रकार राज्य मे एक बार फिर राजनैतिक गतिरोध उत्पन्न हो गया। अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रान्तीय सभा के अध्यक्ष श्री गोकुल भाई भट्ट और महामन्त्री श्री हीरालाल शास्त्री प्रजा परिषद् के दोनों गुटो में समझौता कराने की दृष्टि से बीकानेर आये। उन्होने लो परिषद् की तत्कालीन कार्यकरणी समिति के स्थान पर एक तदर्थ समिति स्थापित की जिसके अध्यक्ष श्री रामचन्द्र चौधरी एवं महामन्त्री श्री चन्दनमल वैद बने।[2]

2 सितम्बर, 1946 को केन्द्र में पं. जवाहरलाल नेहरु के नेतृत्व में अन्तरिम सरकार बनी। 9 सितम्बर, 1946 को संविधान परिषद् ने अपना कार्य शुरू किया। रियासतों ने मन्त्रिमण्डल मिशन योजना सिद्धान्ततः स्वीकार कर ली थी। अतः संविधान

---

1. श्री कुम्भाराम आर्य कई वर्ष राजस्थान मन्त्रिमण्डल के सदस्य रहे। वे सन् 1977 में जनता पार्टी में शामिल हो गये। वे लोकसभा के सदस्य भी रहे।
2. श्री रामचन्द्र चौधरी और श्री चन्दन मल वैद वर्षों तक राजस्थान मन्त्रिमण्डल के सदस्य रहे।

परिषद् में उनके प्रतिनिधित्व के सवाल पर विचार करने हेतु नरेन्द्र मण्डल ने एक समझौता समिति मनोनीत की। इसी प्रकार की एक समिति संविधान परिषद् ने भी नामजद की।

अप्रेल, 1947 में दोनों समझौता समितियों में रियासतों के प्रतिनिधित्व एवं उनके संविधान परिषद् में शामिल होने के बारे में समझौता हो गया। जब यह समझौता नरेन्द्र मण्डल की स्थायी समिति में अनुमोदनार्थ रखा गया तो स्थाई समिति में मतभेद हो गया। नरेन्द्र मण्डल के चांसलर भूपाल के नवाब के नेतृत्व में राजाओं का एक गुट यह चाहता था कि रियासतें अपने प्रतिनिधि संविधान परिषद् मे तब ही भेजें जबकि संविधान परिषद् संघीय सरकार के सविधान पर चर्चा शुरू करें। राजाओं का दूसरा गुट बीकानेर के महाराजा शार्दुल सिंह के नेतृत्व में यह चाहता था कि वे अविलम्ब ही संविधान परिषद् में शरीक हो जायें। स्थायी समिति ने महाराजा शार्दुल सिंह का सुझाव अस्वीकार कर दिया। इस पर महाराजा ने स्थाई समिति से बहिगमन कर दिया। साथ ही महाराजा ने अपने साथी नरेशों से अविलम्ब ही संविधान-परिषद् मे अपने प्रतिनिधि भेजने की अपील की। महाराजा की इस कार्यवाही से राजाओं मे खलबली मच गई। अन्त में स्थायी समिति ने बीच का रास्ता निकाला। राजाओं को छूट दे दी गई कि वे जब चाहे तब संविधान परिषद् मे अपने प्रतिनिधि भेज दें। महाराजा बीकानेर की इस कार्यवाही को देश के नेताओं ने बड़ा सराहा। बीकानेर राज्य की ओर से सर के. एम. पन्नीकर ने 28 अप्रेल, 1947 को संविधान परिषद् मे अपना स्थान ग्रहण किया।

ब्रिटिश सरकार की 3 जून, 1947 की योजना के अनुसार रियासतों को 15 अगस्त, 1947 के पूर्व भारत या पाकिस्तान में शामिल होने अथवा स्वतन्त्र रहने के प्रश्न पर निर्णय लेना था। इस समय एक ओर भोपाल के नवाब, महाराजा इन्दौर और महाराजा जोधपुर पाकिस्तान में शामिल होने की योजना बना रहे थे तो दूसरी ओर निजाम हैदराबाद और महाराजा त्रावणकोर स्वतन्त्र होने की घोषणा कर रहे थे। इन कठिन परिस्थितियों में बीकानेर के महाराजा शार्दुल सिंह ने पहल कर 7 अगस्त को 'इन्स्ट्रूमेन्ट आफ एक्सेशन' पर हस्ताक्षर कर दिये। इसका नतीजा यह हुआ कि 15 अगस्त के पूर्व ही भारतीय संघ की भौगोलिक सीमा में हैदराबाद और जूनागढ को छोड़कर अन्य सभी रियासतें एक-एक कर भारतीय संघ में शामिल हो गयी। महाराजा के इस साहस पूर्ण कदम की सरदार पटेल ने तारीफ करते हुये अपने एक पत्र में महाराजा शार्दुल सिंह को लिखा कि देश की इस नाजुक घड़ी में उन्होंने राजाओं को समुचित नेतृत्व प्रदान कर देश की बड़ी सेवा की है।

ब्रिटिश सरकार की घोषणा के अनुसार पंजाब का भी साम्प्रदायिक आधार पर बंटवारा होना था। वायसराय ने इसके लिये सुप्रसिद्ध ब्रिटिश न्याय शास्त्री रेडक्लिफ की सदारत में एक आयोग की नियुक्ति की। उस समय यह अफवाह फैल गयी थी कि फिरोजपुर हैड वर्क्स पाकिस्तान में चला जायेगा। इस अफवाह से बीकानेर रियासत में घबराहट पैदा हो गयी। महाराजा के आदेश पर राज्य के प्रधान मंत्री के. एम. पानिक्कर, प्रसिद्ध कानूनवेत्ता जस्टिस टेकचन्द बक्षी और मुख्य अभियन्ता कंवरसेन ने सरदार पटेल, माउन्टबेटन और पंजाब सीमा-आयोग के समक्ष बीकानेर का पक्ष बड़ी खूबी से प्रस्तुत किया। श्री कंवरसेन ने अपनी पुस्तक "एक अभियन्ता के संस्मरण" में पृ० 121 पर इस प्रकरण

का जिक्र करते हुए लिखा है कि वे स्वयं एवं सरदार पन्निकर 11 अगस्त, 1947 को माउन्टबेटन से मिले और उसके सामने निम्न विचार प्रकट किये—

> "हमारे स्वामी (महाराजा बीकानेर) ने हमसे आपको यह संदेश पहुँचाने के लिये कहा है कि यदि फिरोजपुर हैडवर्क्स और गंगनहर पाकिस्तान में जाती है तो महाराजा के सामने पाकिस्तान में शामिल होने के अलावा और कोई चारा नहीं रहेगा ।"

उक्त संदेश का तत्काल असर हुआ । रेडक्लिफ ने 17 अगस्त 1947 को अपने निर्णय की घोषणा की । फिरोजपुर हैडवर्क्स और गंगनहर भारत के अंग बने रह गये । बीकानेर की जनता ने राहत की साँस ली ।

जयपुर :

देश में ज्यों-ज्यों सन् 1942 के आन्दोलन का वेग कम होता गया, जयपुर में आजाद मोर्चे के कार्यकर्ता रिहा कर दिये गये । अक्तूबर सन् 1945 में पी. ई. एन कान्फ्रेन्स में शामिल होने पं. जवाहरलाल नेहरू जब जयपुर आये तो आजाद मोर्चे के नेता बाबा हरिशचन्द्र ने नेहरूजी की प्रेरणा पर मोर्चे को जयपुर प्रजा मण्डल में विलीन कर दिया । इस प्रकार प्रजामण्डल में सन् 1942 के आन्दोलन को लेकर उठा हुआ विवाद समाप्त हुआ ।

सन् 1946 में राज्य में विधान सभा और विधान परिषद् की स्थापना हुई । प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री देवी शंकर तिवाड़ी 15 मई, 1946 को राज्य के मन्त्रिमण्डल में लिये गये । एक वर्ष बाद प्रजामण्डल के एक और प्रतिनिधि श्री दौलत मल भण्डारी मन्त्रिमण्डल में लिये गये । 27 मार्च, 1947 को जयपुर राज्य में शासन सुधारों की एक और महत्वपूर्ण घोषणा की गयी, जिसके अनुसार राज्य में एक नया मन्त्रिमण्डल बना, जिसमें दीवान के अलावा 6 सदस्य थे । श्री हीरालाल शास्त्री, मुख्य सचिव (प्रधान मन्त्री) और सर्व श्री देवी शंकर तिवाड़ी, दौलतमल भण्डारी और टीकाराम पालीवाल प्रजामण्डल से एवं ठाकुर कुशल सिंह, गीजगढ़ और रावल अमर सिंह अजयराजपुरा सामन्त वर्ग की ओर से मन्त्री बने ।

जयपुर राज्य से तीन सदस्य भारतीय संविधान निर्मातृ परिषद् में भेजे गये थे, जिनमें एक श्री हीरालाल शास्त्री थे । जयपुर देश की उन कतिपय रियासतों में थी जो सबसे पहले भारतीय संघ में शामिल हुई । इसका श्रेय महाराजा सवाई मान सिंह और उनके दूरदर्शी दीवान सर वी. टी. कृष्णामाचारी को जाता है ।

जैसलमेर :

श्री सागर मल गोपा 25 मई, 1941 से "राजद्रोह" के अभियोग में जैसलमेर राज्य की जेल में बन्द थे । उन्हें जेल में दी जानी वाली यातनाओं के सम्बन्ध में यदा-कदा समाचार-पत्रों में समाचार छपते रहते थे । मारवाड़ लोक परिषद् के अध्यक्ष श्री जयनारायण व्यास ने 8 मार्च, 1946 को पोलीटिकल एजेन्ट को पत्र लिखकर श्री गोपा के सम्बन्ध में वस्तु स्थिति का पता चलाने का आग्रह किया । पोलीटिकल एजेन्ट ने 6 अप्रेल, को जैसलमेर जाने का कार्यक्रम बनाया । उसके पहले ही 3 अप्रेल के दिन 3 बजे नगर में यह खबर फैला दी गयी कि श्री गोपा ने जेल में अपने शरीर पर तेल छिड़क कर आग लगा ली है । सारा शहर गोपाजी को देखने के लिये उमड़ा पड़ा पर अधिकारियों ने गोपाजी के रिश्तेदारों तक को उनसे मिलने नहीं दिया । रात्रि में उन्हें स्थानीय सर-

कारी अस्पताल में भेजा गया, जहाँ वे रात भर पीड़ा के मारे कहराते रहे। पर न तो किसी को उनसे मिलने दिया गया और न किसी डाक्टर ने इलाज ही किया। दूसरे दिन प्रात: उनकी पत्नी श्रीमती हीरादेवी डाक्टर के पास गयी। तब कही जाकर डाक्टर गोपाजी के पास पहुंचे और उन्होंने उनके इंजेक्शन लगाया। गोपाजी ने तुरन्त ही प्राण त्याग दिए। नगर "सागरमल गोपा जिन्दाबाद" के नारों से गूंज उठा। दीवारों पर "खून के बदले खून" के नारे लिख दिये गये। प. नेहरू ने गोपा की मृत्यु के इस जघन्य काण्ड पर टिप्पणी करते हुये एक बयान में कहा "इसे आत्म हत्या कहना एक दम शरारत है। यह एक ऐसी बात है जो न सिर्फ जैसलमेर के लिये बल्कि दूसरे राजाओं के लिये भी शर्म की बात है।" गोपाजी ने अपना नाम उन अमर शहीदो में लिखा दिया, जिनकी कुरबानियों से देश के विभिन्न भागों में शताब्दियों पुरानी राजशाही का अन्त हुआ।

गोपा-हत्या काण्ड के तुरन्त बाद जोधपुर से व्यास जी एवं उनके साथी श्री अचलेश्वर प्रसाद शर्मा आदि कार्यकर्ता जैसलमेर पहुंचे। उनके आगमन से स्थानीय कार्यकर्ताओं का मनोबल बढ़ा। जैसलमेर प्रजामण्डल तेजी से काम करने लगा।

अगस्त, 1947 मे जैसलमेर के महारावल ने महाराजा जोधपुर के साथ जैसलमेर को पाकिस्तान में शामिल करने के सम्बन्ध मे श्री जिन्ना से मुलाकात की, पर चौकन्नी भारत सरकार ने उनकी देश द्रोही योजना पर पानी फेर दिया। अन्तोगत्वा जैसलमेर भारतीय संघ में शामिल हो गया। कुछ ही समय बाद जैसलमेर की सीमा पर कबाइलियों के हमलो से उत्पन्न परिस्थिति को ध्यान मे रखते हुये भारत सरकार ने वहाँ पर अपना प्रशासक नियुक्त कर दिया।

अलवर :

सन् 1942 के "भारत छोड़ो" आन्दोलन के बाद अलवर राज्य प्रजामण्डल को फरवरी, 1947 में पहली बार राज्य के दमन का शिकार होना पड़ा। प्रजामण्डल ने खेड़ा मंगल सिंह मे जागीरदारों के अत्याचारों के विरूद्ध एक सम्मेलन का आयोजन किया। राज्य ने प्रजामण्डल के नेता सर्व श्री भोलानाथ, शोभाराम, कुंज बिहारी लाल मोदी, लाला काशीराम गुप्ता, रामजीलाल गुप्ता, बद्रीप्रसाद गुप्ता, भवानी सहाय शर्मा, राम चन्द्र उपाध्याय, रामजीलाल अग्रवाल और डा. शान्तिस्वरूप डाटा आदि को गिरफ्तार कर लिया। इन गिरफ्तारियों का जनता ने प्रबल विरोध किया। स्कूल और कालेज बन्द हो गये। राजधानी में एक सप्ताह तक हड़ताल रही। राज्य के अन्य कस्बों में भी प्रदर्शन हुये। श्री हीरालाल शास्त्री ने बीच में पड़ कर राज्य और प्रजामण्डल के बीच समझौता कराया। 10 दिन बाद प्रजामण्डल के नेता रिहा किये गये। महाराजा लोकप्रिय मन्त्री मण्डल बनाने के लिये सहमत हो गये। पर महाराजा प्रजामण्डल के प्रतिनिधियों के अलावा कतिपय साम्प्रदायिक संस्थाओं के सदस्यों को भी मन्त्रिमण्डल में लेना चाहते थे। अतः प्रजामण्डल ने मन्त्रिमण्डल में अपने प्रतिनिधि भेजने से इन्कार कर दिया। इसी बीच 22 अगस्त को राजगढ मे राष्ट्रीय झंडा जलाने की घटना को लेकर राज्य में आन्दोलन भड़क उठा। लगभग 600 व्यक्ति गिरफ्तार हो गये। एक बार फिर शास्त्री आदि नेताओं ने बीच में पड़ कर राज्य और प्रजामण्डल के बीच सुलह कराई। सत्याग्रही रिहा कर दिये गये। अक्टूबर, 47 मे राज्य ने प्रजामण्डल के तीन प्रतिनिधि मन्त्रि मण्डल मे लेना चाहा, पर देश मे बदली हुई परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य से प्रजामण्डल को यह प्रस्ताव स्वीकार नही हुआ। उसने राज्य मन्त्रिमण्डल मे प्रजामण्डल के बहुमत को

मांग की, पर राज्य ने यह मांग नहीं स्वीकार की। अतः राज्य और प्रजामण्डल के बीच गतिरोध बना रहा।

भरतपुर :

सन् 1943 में राज्य ने ब्रज जया प्रतिनिधि समिति (विधान सभा) के चुनाव कराये। प्रजा परिषद् ने समिति के 37 निर्वाचित स्थानों में 22 पर अधिकार कर लिया। पर जब परिषद् ने देखा कि समिति के माध्यम से वह राज्य से अपनी प्रगतिशील नीतियों को सरकार से मनवाने में असफल रही है तो उसने सन् 1945 में समिति का बहिष्कार कर दिया। सरकार दमन पर उतर आई। उसने श्री युगल किशोर चतुर्वेदी, श्री राजबहादुर आदि समिति के प्रमुख सदस्यों को गिरफ्तार कर लिया और देशद्रोह के अपराध में सजाएं सुना दीं। परन्तु कुछ ही दिनों बाद परिषद् और सरकार के बीच समझौता हो गया। गिरफ्तार नेता रिहा कर दिये गये।

जनवरी, 1947 में महाराजा भरतपुर के निमन्त्रण पर भारत के वायसराय लार्ड वेवल और बीकानेर के महाराजा शार्दुलसिंह घाना के विश्व प्रसिद्ध पक्षी-विहार में जल मुर्गियों के शिकार के लिये भरतपुर आये। शिकार की व्यवस्था हेतु जाटव, कोली आदि अनुसूचित जाति के लोगों को बेगार में पकड़ा जाने लगा। प्रजा परिषद् और मुस्लिम कान्फ्रेन्स ने निर्णय किया कि राज्य द्वारा ली जाने वाली बेगार का विरोध किया जाये। दोनों संगठनों ने बेगार-विरोधी आन्दोलन छेड़ दिया। जुलूस हड़ताल और प्रदर्शन हुये। 5 जनवरी को लार्ड वेवल और महाराजा शार्दुल सिंह भरतपुर आये तो जनता का विशाल जुलूस काले झण्डे हाथ में लिये "वेवल वापिस जाओ" के नारे लगाता हुआ हवाई अड्डे तक गया। प्रजा परिषद् ने सरकारी किले के सामने धरना देना प्रारम्भ किया। 15 जनवरी को महाराजा के भाई राजा बच्चू सिंह के नेतृत्व में सेना के घुड़सवारों और पुलिस ने सत्याग्रहियों को रौंद दिया। सर्वश्री सांवल प्रसाद चतुर्वेदी, राजबहादुर, आले मोहम्मद एवं श्रीमती जमना देवी चतुर्वेदी आदि कार्यकर्ताओं को गम्भीर चोटें आयीं। सरकार ने राजधानी में धारा–144 लगा दी। शहर में हड़ताल हो गयी, जो 22 दिन तक चली। सर्वश्री सांवल प्रसाद चतुर्वेदी, आले मोहम्मद, राजबहादुर,[1] गौरीशंकर मित्तल, घनश्याम शर्मा, जगन्नाथ प्रसाद कक्कड़, मा. आदित्येन्द्र,[2] मा. फकीरचन्द, रोशनलाल आर्य, रघुनाथ प्रसाद लखेरा, मदनमोहनलाल पोद्दार, प्रभुदयाल माथुर आदि अनेक कार्यकर्ता जेल में डाल दिये गये। इसी बीच 5 जनवरी को पुलिस द्वारा कुसावर में एक प्रमुख कार्यकर्ता रमेश स्वामी को बस से कुचलवा दिया गया, जो घटनास्थल पर ही शहीद हो गये।

भरतपुर की स्थिति का अध्ययन करने के लिये अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् के अध्यक्ष पं. नेहरू ने अपने विशेष प्रतिनिधि श्री द्वारकानाथ काचरू और देशी राज्य लोक परिषद् की प्रान्तीय सभा ने लेखक को भरतपुर भेजा। वे जेल में सत्याग्रहियों से मिले। उन्होंने राज्य के प्रधान मन्त्री और अन्य अधिकारियों से भी मुलाकात की। उन्होंने अपने-अपने प्रतिवेदन सम्बन्धित संस्थाओं को भेजे। इस समय केन्द्र में राष्ट्रीय सरकार बन गई थी। अतः राज्य ने समझौते की नीति अपनाई। सभी नेता धीरे-धीरे रिहा कर दिये

---

1. श्री राजबहादुर आजादी के बाद वर्षों तक केन्द्रीय मन्त्री रहे।
2. श्री आदित्येन्द्र जनता सरकार में वित्त मन्त्री रहे।

गये। दिसम्बर सन् 1947 में भरतपुर राज्य के मन्त्रिमण्डल में प्रजा परिषद् की ओर से श्री गोपीलाल यादव और मास्टर आदित्येन्द्र और किसान सभा की ओर के ठाकुर देशराज एवं श्री हरिदत्त को शामिल किया गया।

सिरोही :

सन् 1942 के बाद सिरोही में कोई विशेष राजनैतिक हलचल नहीं हुई, सिवाय इसके कि जनवरी, 1946 में महाराजा स्वरूप रामसिंह के देहान्त पर ब्रिटिश सरकार द्वारा मंडार के तेज सिंह को गद्दी पर बैठाने पर जनता ने बड़ा विरोध किया। पर 1947 मे केन्द्र में राष्ट्रीय सरकार बन जाने पर यह गलती सुधार दी गई। भारत सरकार ने तेज सिंह के स्थान पर गद्दी के वास्तविक हकदार अभयसिंह को गद्दी पर बैठा दिया। वह नाबालिग था। ब्रिटिश सरकार द्वारा रियासतों पर सार्वभौम सत्ता समाप्त करने के निर्णय के फलस्वरूप सन् 1917 से ए. जी. जी. को लीज पर दिया गया आबू-पर्वत 5 अगस्त, 1947 को पुन: सिरोही राज्य को मिल गया। 23 अक्टूबर को राज्य के मन्त्रिमण्डल में प्रजा मण्डल के प्रतिनिधि श्री जवाहरमल सिंघी को लिया गया। नवम्बर, 1947 में भारत सरकार ने सिरोही को राजपूताना स्टेट्स एजेन्सी से हटा कर पश्चिम भारत एवं गुजरात स्टेट्स एजेन्सी के अन्तर्गत कर दिया। भारत सरकार ने 8 नवम्बर, 1948 को सिरोही का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया और श्री गोकुल भाई भट्ट को राज्य का प्रधान मन्त्री नियुक्त कर दिया।

डूंगरपुर :

वर्तमान शताब्दी में राजस्थान के राजाओं में बीकानेर के महाराजा स्व. गंगासिंह के बाद डूंगरपुर के महारावल लक्ष्मणसिंह[1] सबसे अधिक चतुर और कूटनीतिक शासक माने जाते थे। 3800 वर्ग कि. मी. में फैली डूंगरपुर एक छोटी रियासत थी जिसकी 60 प्रतिशत आबादी भीलों की थी। इस रियासत के पिछड़ेपन का अन्दाज इस बात से लगाया जा सकता है कि आजादी के पूर्व वहां की जनता में साक्षरता का प्रतिशत केवल 3 प्रतिशत था। इन परिस्थितियों में यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि राज्य मे राजनैतिक जाग्रति की शुरुआत अपेक्षाकृत देरी से हुई।

सन् 1935 में श्रद्धेय ठक्कर बापा की प्रेरणा से राज्य के सुप्रसिद्ध जन-सेवक श्री भोगीलाल पंडया[2] ने हरिजन सेवा समिति की स्थापना की। उसी वर्ष श्री शोभालाल गुप्त[3] ने राजस्थान सेवक मण्डल की ओर से हरिजनों और भीलों में काम करने के लिए सागवाड़ा में एक आश्रम स्थापित किया। कुछ ही समय बाद बिजोलिया आन्दोलन के प्रमुख सूत्राधार श्री माणिक्यलाल वर्मा जन-जातियों में काम करने के उद्देश्य से डूंगरपुर आये। उन्होंने सागवाड़ा से 16 कि. मी. दूर खडलाई ग्राम मे एक आश्रम स्थापित

---

1. महारावल लक्ष्मणसिंह जनता शासन के दौरान विधान सभा के अध्यक्ष रह चुके हैं। वे विधानसभा में वर्षों तक विरोधी दल के नेता रहे हैं। आजकल वे विधान सभा मे कांग्रेसी सदस्य है।

2- श्री पण्डया भूतपूर्व राजस्थान और और वर्तमान राजस्थान के मन्त्रिमण्डलों के कई वर्ष तक सदस्य रहे। उन्हे अप्रैल, 1976 मे उनकी समाज-सेवाओं के उपलक्ष मे भारत सरकार द्वारा पदम—भूषण से विभूषित किया गया।

3- श्री गुप्ता बिजोलिया आन्दोलन मे काम कर चुके है। वे वर्षों तक हिन्दुस्तान दैनिक के सम्पादक मण्डल मे रहे हैं।

किया। महारावल के कारिन्दों ने भीलों को श्री वर्मा के खिलाफ भड़काने का प्रयत्न किया। पर उन्हें सफलता नहीं मिली। वर्माजी ने बागड़—सेवा मन्दिर नामक संस्था बनाई और उसके अन्तर्गत विभिन्न स्थानों पर 12 केन्द्र स्थापित किये। उन्होंने उक्त संस्था के द्वारा भीलों में न केवल साक्षरता का प्रचार किया, वरन् उनमें प्रचलित विभिन्न सामाजिक कुरीतियों के निवारण का महत्वपूर्ण कार्य किया। भीलों में नये जीवन का संचार हुआ। पर वर्माजी ने अब यह महसूस किया कि भीलों के आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें राज्य द्वारा ली जाने वाली बैठ-बेगार एवं अनुचित लागबागों से मुक्त किया जाये। इसका सीधा अर्थ था राज्य से संघर्ष। पर इससे भीलों एवं अनुसूचित जातीयों में रचनात्मक काम करने वालों के लिए कठिनाइयां पैदा हो सकती थी। अतः श्री वर्मा बागड़ सेवा मन्दिर श्री पण्डया को सौंप पुनः अपने राज्य (मेवाड़) में चले गये।

राज्य सरकार बागड़ सेवा मन्दिर की प्रवृत्तियों से नाराज थी। अतः श्री पण्डया उक्त संस्था को समाप्त कर उसके स्थान पर सेवा संघ, डूंगरपुर की स्थापना की। पर राज्य सरकार संस्था के नाम से नहीं, उसके काम से नाराज थी। उसने सेवा संघ द्वारा चलाये जाने वाले छात्रावासों को बन्द कर दिया और वहां के छात्रों को आगे की शिक्षा के लिए राज्य की एकमात्र हाई स्कूल में प्रवेश देना निषिद्ध कर दिया। यही नहीं, सरकार ने एक नया कानून बनाया जिसके अनुसार राज्य में बिना सरकारी अनुमति के निजी स्कूल और छात्रावासों का चलना निषिद्ध कर दिया गया। पर सेवा संघ बिना इन काले कानूनों की परवाह किये अपनी प्रवृत्तियां चलाता रहा।

सन् 1942 की अगस्त क्रान्ति ने देश में एक अभूतपूर्व जाग्रति की लहर पैदा की। सेवा संघ के कार्यकर्ताओं को विश्वास हो गया कि वे अब अधिक समय तक राजनीति से अलग नहीं रह सकते। संघ के कार्यकर्ताओं ने जगह जगह पर जुलूस निकाले व सभाएं की। डूंगरपुर एवं अन्य कस्बों में हड़तालें हुई। पर चतुर महारावल ने कोई गिरफ्तारी नहीं की।

ता. 1 अगस्त, 1944 को सेवा संघ के प्रमुख कार्यकर्ता सर्व श्री भोगीलाल पण्डया गौरीशंकर आचार्य, हरिदेव जोशी,[1] कुरीचन्द जैन व शिवलाल कोटड़िया आदि ने नागरिकों की एक सभा बुलाई और उनमें प्रजा मण्डल का विधान स्वीकार करवाया। ता. 8 अगस्त की बैठक में श्री पण्डया को संस्था का अध्यक्ष एवं श्री कोटड़िया को मन्त्री चुना गया।

अप्रैल, 1946 में डूंगरपुर में राज्य प्रजा मण्डल का श्री पण्डया की अध्यक्षता में पहला अधिवेशन हुआ। सर्वश्री गोकुल भाई भट्ट, हीरालाल शास्त्री, माणिक्यलाल वर्मा, भूपेन्द्र त्रिवेदी, युगलकिशोर चतुर्वेदी एवं मोहनलाल सुखाड़िया आदि विभिन्न रियासतों के जन नेता इस अधिवेशन में शामिल हुए। अधिवेशन में राज्य में उत्तरदायी सरकार की स्थापना, डूंगरपुर के भारतीय संघ में शामिल होने, खानगी पाठशाला नियम एवं कवायद छात्रावास के रद्द करने आदि विषयों पर प्रस्ताव स्वीकार किये गये।

1- श्री हरिदेव जोशी सन् 1952 से अब तक लगातार विधानसभा के सदस्य रहे हैं। वे वर्षों तक राजस्थान मन्त्रिमण्डल में रहने के बाद सन् 1973 से 1977 तक राज्य के मुख्यमन्त्री रहे। वे पुनः मार्च, 1985 से राज्य के मुख्यमन्त्री हैं।

इन दिनों सरकार ने कटारा के अकालग्रस्त क्षेत्रों में लेवी वसूल करना शुरू कर दिया। यहां के किसान महारावल की शिकार के लिए आरक्षित सुअरो के उपद्रव से पहले ही परेशान थे। अतः किसानों ने सांवला निवासी श्री देवराम शर्मा के नेतृत्व में सत्याग्र ह का श्रीगणेश कर दिया। श्री शर्मा गिरफ्तार किये जाकर देवल जेल में भेज दिया गया। प्रजा मण्डल ने इस आन्दोलन को अपने हाथ में लिया। श्री पण्डया ने श्री हरिदेव जोशी को प्रचार प्रसार व उनकी स्वयं की गिरफ्तारी के बाद आन्दोलन के संचालन के लिए राज्य के बाहर भेज दिया। सरकार ने श्री जोशी और श्री उपाध्याय को राज्य से निष्कासित कर दिया। श्री पण्डया अपने 28 साथियों सहित सत्याग्रह करते हुए गिरफ्तार किये जाकर देवल जेल में बन्द कर दिये गये। वहां उनकी क्रूरतापूर्वक पिटाई की गयी। श्री पण्डया ने उन्हें व उनके अन्य साथियों को राजनैतिक बन्दी मानने के लिये अनशन शुरू कर दिया। 15 दिन बाद जब श्री पण्डया की मांग स्वीकार हुई तभी उन्होंने अपना अनशन तोड़ा।

श्री पण्डया पर जेल में किये जा रहे अमानुषिक व्यवहार के समाचार राज्य भर में फैल गये। फलस्वरूप कई स्थानों पर हड़ताल और लाठी चार्ज हुआ। कई प्रमुख कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। जब ये समाचार राजपूताना प्रान्तीय सभा को मिले तो प्रान्त के चोटी के नेता सर्वश्री गोकुल भाई भट्ट, माणिक्यलाल वर्मा, हीरालाल शास्त्री और रमेशचन्द व्यास तुरन्त डूंगरपुर पहुंच गए और महारावल से मिले। श्री पण्डया सहित सभी कार्यकर्ता रिहा कर दिये गए। श्री जोशी व श्री उपाध्याय के विरूद्ध निर्वासन आज्ञा रद्द कर दी गई। प्रजामण्डल की यह पहली विजय थी। महारावल के लिए यह सब कड़वा घूट पीने के बराबर था। उन्होंने समझ लिया कि सेवा संघ औरप्रजा मण्डल एक ही सिक्के के दो रूप हैं और अगर सेवा संघ की प्रवृत्तियों को बन्द कर दिया गया तो प्रजामण्डल अपने आप में कमजोर हो जायेगा।

अस्तु, राज्य के कर्मचारी ता. 30 मई 1947 को सेवा संघ द्वारा संचालित पूनावाड़ा की पाठशाला को बन्द करने पहुंचे। उन्होंने पाठशाला के अध्यापक श्री शिवराम को पीटा और जंगल में छिपा दिया। जब इस घटना की सूचना श्री पण्डया को मिली तो वे अपने साथी श्री उपाध्याय और श्रीकोटड़िया एवं कुछ भीलों के साथ अनेक बाधाएं पार करते हुए श्री शिवराम के गांव कुआ पहुंच गए। वहां पर उन्हें पुलिस ने सूचित किया कि श्री शिवराम शर्मा को उनके घर पहुंचा दिया गया हैं। दो दिन के भूखे प्यासे श्री पण्डया और उनके साथी पाठशाला में ज्यों ही खाना खाने बैठे कि पुलिस एवं स्थानीय जागीरदार ने उन सबको घेर कर बुरी तरह पिटाई की। पुलिस उन्हें सरकारी नाके को लूट कर जला देने के अभियोग में गिरफ्तार कर थम्बोला के थाने में ले गई। पुलिस ने उन पर मुकदमा चलाया, पर उन्होंने अदालती कार्यवाही में भाग लेने से इन्कार कर दिया। अन्तमें वे सब21 दिन बाद बिना शर्त रिहा कर दिये गये। पुलिस ने हवालात के दौरान श्रीपण्डया और उनके साथियों को अनेक यातनाएं दी। पुलिस ने श्री पण्डया को तो पानी में पेशाब मिला कर पिलाने का जघन्य अपराध भी किया।

19 जून को पुलिस ग्राम रास्तापाल की स्कूल बन्द करने गई। उस दिन स्कूल में विद्यार्थी नहीं थे। पुलिस ने मकान मालिक नानाभाई खाट को स्कूल बन्द कर चाबी सौप देने का आदेश दिया। पर जब नानाभाई ने बिना सेवा संघ की इजाजत के चाबी, देने से इन्कार कर दिया तो पुलिस ने उन्हें इस बरबरता से मारा कि वे मरणासन्न हो गए पुलिस

उन्हें उठाकर अपने कैंप में ले जा रही थी कि मार्ग में ही उनका देहान्त हो गया। स्कूल के अध्यापक सेगांभाई की भी पुलिस ने भयंकर पिटाई की। वे बेहोश हो गये। पुलिस ने उनकी कमर में रस्सा बांधकर रस्से के दूसरे सिरे को ट्रक से बांध दिया। जब ट्रक सेगां भाई को घसीटते हुए चलने लगा तो एक 12 वर्षीय भील कन्या कालीबाई ने अपनी दांतली से रस्सी काट कर सेंगाभाई के जीवन की रक्षा की। इस बीच पुलिस ने कालीबाई और उसके साथ की महिलाओं पर गोली चलाई, जिससे कालीबाई और 6 अन्य महिलाये घायल हो गयी। उन सबको डूंगरपुर अस्पताल लाया गया जहां पर कालीबाई शहीद हो गयी।

पुलिस की गोलियां चलने के साथ ही साथ भीलों ने मारूढोल बजा दिया। उसकी आवाज सुनकर आस पास के हजारों भील धनुषबाण लेकर घटना स्थल पर एकत्रित हो गए। क्रुद्ध भीड़ को देख कर पुलिस व राज्य के अन्य कर्मचारी भाग खड़े हुए। भीड़ डूंगरपुर पहुंची। उधर पुलिस पण्डया जी एवं उनके साथियों को भी लेकर डूंगरपुर आई। महारावल ने डूंगरपुर में लगभग 12 हजार सशस्त्र भीलों का हजूम देखा तो वे किंकर्तव्य विमूढ़ हो गये। उन्हें तुरन्त ही श्री पण्डया और उनके साथियों को रिहा करना पड़ा। इस प्रकार 21 दिन पुराना यह आन्दोलन शान्त हुआ। नानाभाई खाट एवं कालीबाई सामन्त शाही की बलिवेदी पर चढकर अमर हो गये। राज्य की जनता ने उनकी याद में पार्क बनवाया और उसमें उन दोनों की मूर्तियां लगवाई जहां उनकी शहादत के दिन हर वर्ष मेला लगता है।

15 अगस्त, 1947 को देश आजाद हुआ। इसके पूर्व ही डूंगरपुर भारतीय संघ में शामिल हो गया था। इन परिवर्तनों को राज्य सरकार एवं वहां के कतिपय जागीरदारों ने सहज भाव से नहीं लिया। सितम्बर, 1947 में प्रजामण्डल के प्रमुख नेता श्री हरिदेवजोशी जब कतिसोर की एक सभा में भाषण देकर अपने साथियों के साथ ग्राम काव्जा में सो रहे थे तो स्थानीय जागीरदारों ने उन पर घातक आक्रमण किया और वे बाल-बाल बचे। जब यह सूचना आसपास के गांवों में फैली तो दूसरे ही दिन लगभग दो सौ आदिवासी कार्यकर्त्ताओं की रक्षा के लिए कतिसोर और काव्जा पहुंच गए। इस घटना के विरोध में अगले ही दिन कोलखण्डा में एक विशाल सभा हुई, जिसमें रियासत के इस षड़यन्त्र का भण्डाफोड़ किया गया। विशाल जनशक्ति के इस प्रदर्शन के बाद राज्य प्रशासन अथवा जागीर दारों ने खुले रुप में कार्यकर्त्ताओं पर हमला कराने का दुस्साहस नहीं किया।

देश में तेजी से हो रहे परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए महारावल ने ता. 1 दिसम्बर 1947 को सर्वश्री गौरीशंकर उपाध्याय एवं भीखाभाई भील को प्रजा मण्डल के प्रतिनिधियों के रूप में राज्य मन्त्रमिण्डल में शामिल किया। सन् 1948 में श्री उपाध्याय राज्य प्रधानमन्त्री बना दिये गये। ता. 18 अप्रेल, 1948 को डूंगरपुर का राजस्थान में विलय हो गया।

बांसवाड़ा

बांसवाड़ा में प्रजामण्डल स्थापित करने का प्रयत्न 1943 में हुआ। श्री भूपेन्द्रनाथ त्रिवेदी बम्बई से बांसवाड़ा आये। उन्होंने सर्वश्री धूलजी भाई भावसार, मणी शंकर जानी, सिद्धिशंकर झा, चिम्मनलाल मालोत, मोतीलाल जड़िया और डाक्टर ध्यानीलाल आदि के सहयोग से प्रजामण्डल की स्थापना की। थोड़े ही समय में प्रजामण्डल लोकप्रिय

हो गया। राज्य ने प्रजामण्डल की प्रवृत्तियों को दबाने के लिए राजधानी में धारा 144 लगाकर प्रजामण्डल की सभाओं पर रोक लगा दी। प्रजामण्डल ने राजधानी के बाहर सभा की, जिसमें राज्य की दमनपूर्ण नीतियों की आलोचना की गई। दूसरे ही दिन सर्व श्री भूपेन्द्रनाथ त्रिवेदी, धूलजी भाई भावसार और चिम्मनलाल मालोत को गिरफ्तार कर लिया गया। इससे नगर में हड़ताल हो गई और जलूस निकाला गया। जनता ने चीफ मिनिस्टर का बंगला घेर लिया और गिरफ्तार नेताओं की रिहाई की माँग की। सरकार को झुकना पड़ा। तीनों नेता शाम को रिहा कर दिये गये।

सन् 1946 में प्रजामण्डल का अधिवेशन हुआ। उसमें राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने की माँग की गई। कुछ समय बाद राज्य ने विधानसभा के लिए चुनाव करवाये। प्रजामण्डल 45 स्थानों में से 35 पर विजयी रहा। राज्य ने श्री मोहनलाल त्रिवेदी और श्री नटवरलाल भट्ट को प्रजामण्डल के प्रतिनिधियों के रूप में मन्त्रिमण्डल में शामिल किया। पर प्रजामण्डल इन सुधारों से संतुष्ट नहीं था। उसने कर—विरोधी आन्दोलन चलाया। राज्य ने 1948 के शुरू में प्रजामण्डल की मांग स्वीकार कर भूपेन्द्र नाथ त्रिवेदी को मुख्यमन्त्री बनाया। सर्वश्री मोहनलाल त्रिवेदी, और नटवरलाल भट्ट प्रजा मण्डल की ओर से व श्री चतरसिंह जागीरदारों के प्रतिनिधि के रूप में मन्त्री बनाए गये।

कुशलगढ़ :

यों तो कुशलगढ़ बांसवाड़ा राज्य का ही एक अंग माना जाता था, पर अंग्रेजी शासनकाल में वह एक खुद मुख्त्यार चीफ शिप बन गया था। अप्रेल, 1942 में श्री भंवर लाल निगम की अध्यक्षता में प्रजामण्डल की स्थापना हुई। श्री वर्द्धमान गदिया संस्था के उपाध्यक्ष और श्री कन्हैयालाल सेठिया मन्त्री बनाए गये। प्रजामण्डल ने चीफ–शिप में ली जाने वाली लाग बाग और अंग्रेज प्रशासक के विरूद्ध आन्दोलन चला कर जनता को राहत दिलाई। सन् 1944 में स्वतन्त्रता सेनानी श्री दाड़मचन्द दोषी सेवा ग्राम से कुशल-गढ़ आये और उसे अपनी कर्मभूमि बनाया। उनके आ जाने से प्रजामण्डल को बड़ा बल मिला। कुछ ही समय बाद ब्रिटिश भारत में हुए अनेकों आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेने वाले एक और स्वतन्त्रता सेनानी श्री पन्नालाल त्रिवेदी अपनी जन्मभूमि कुशलगढ़ आ गए और प्रजामण्डल के महामन्त्री बन गये। वे सन् 1946 में प्रजामण्डल के अध्यक्ष बने। श्री त्रिवेदी ने राज्य के भीलों का सुदृढ़ संगठन बनाया। उन्होंने सन् 1948 में कुशलगढ़ के लोकप्रिय नेता श्री दाड़मचन्द दोषी के सहयोग से गांधी आश्रम की स्थापना की उसी वर्ष वहां पर लोकप्रिय मन्त्रिमण्डल बनाया गया, जिसमें प्रजामण्डल की ओर से सर्वश्री भंवरलाल निगम और वर्द्धमान गादिया शामिल किये गए।

प्रतापगढ़ :

सन् 1931–32 में प्रतापगढ़ के युवा नागरिक सर्वश्री रामलाल मास्टर, राधावल्लभ सोमानी और रतनलाल ने प्रतापगढ़ में खादी और स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार का आन्दोलन चलाया। देशी रियासत में इस प्रकार का आन्दोलन देश द्रोह से कम नहीं था। राज्य प्रशासन ने तीनो युवकों को गिरफ्तार कर लिया। उन्हें तीन-तीन माह की सजा हुई।

सन् 1936 में हरिजनों के मसीहा पूज्य ठक्कर बापा हरिजनोत्थान कार्य के लिये प्रतापगढ़ आये। उनकी प्रेरणा से स्थानीय एडवोकेट श्री अमृतलाल पायक ने प्रतापगढ़ में हरिजन पाठशाला स्थापित की। सन् 1938 मे बापा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू के साथ

दुबारा प्रतापगढ़ आये। तब तक श्री पायक के प्रयत्नों से प्रतापगढ़ में हरिजन कार्य ने गति लेली थी। श्री बापा के आदेश से श्री पायक हरिजन-सेवक-समिति के मन्त्री बने। श्री पायक ने इन दिनों प्रतापगढ़ में खादी प्रचार-सभा, व्यायामशाला आदि संस्थाओं की स्थापना कर जनजागरण का महत्वपूर्ण काम किया। सन् 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के सम्बन्ध में प्रतापगढ़ मे जुलूस, हड़ताल आदि के आयोजन हुये।

प्रतापगढ़ में श्री पायक और श्री चुन्नी लाल प्रभाकर के प्रयत्नों से सन् 1945 में प्रजा मण्डल की स्थापना हुई। धीरे-धीरे प्रजामण्डल एक मजबूत संगठन बन गया।

सन् 1947 के अगस्त में प्रतापगढ़ राज्य भारतीय संघ में शामिल हो गया। अगले ही वर्ष 2 मार्च, 1948 को प्रजामण्डल के दो प्रतिनिधि सर्वश्री माणिक्यलाल शाह और श्री अमृतलाल पायक मन्त्रिमण्डल में शामिल किये गये। 18 अप्रेल 1948 को मन्त्रिमण्डल की सलाह पर प्रतापगढ़ का संयुक्त राजस्थान में विलय हो गया।

शाहपुरा :

सन् 1942 के आन्दोलन में गिरफ्तार प्रजा मण्डल के नेता सर्वश्री रमेशचन्द्र ओझा, लादूराम व्यास और लक्ष्मीकान्त कांटिया 16 माह बाद जेल से रिहा किये गये। 1946 में राज्य ने प्रो. गोकुल लाल असावा की अध्यक्षता में संविधान—समिति बनाई। इस समिति ने शाहपुरा के लिये पूर्ण रूपेण जनतांत्रिक विधान का प्रारूप बनाकर प्रस्तुत किया जो राज्य ने स्वीकार कर लिया। यह विधान 14 अगस्त, 1947 को लागू कर दिया गया। उसी दिन प्रजामण्डल के अध्यक्ष प्रो. असावा के नेतृत्व में लोक प्रिय मन्त्रि-मण्डल ने शपथ ग्रहण की। मन्त्रिमण्डल में प्रो. असावा के अलावा दूसरे मन्त्री मेजर दौलत सिंह शामिल किये गये।

अन्य रियासतें :

महारावल कोटा ने 1948 के शुरु में पं. अभिन्न हरि के नेतृत्व में राज्य में लोक-प्रिय सरकार बनाने का निर्णय किया। पर उसे क्रियान्वित करने के पूर्व ही संयुक्त राजस्थान संघ (कोटा) बनाने की प्रक्रिया शुरू हो गयी। अतः राज्य में लोकप्रिय सरकार पदग्रहण नहीं कर पायी।

सन् 1944 में बून्दी राज्य में श्री हरिमोहन माथुर की अध्यक्षता में बून्दी राज्य लोक परिषद् की स्थापना हुई। परिषद् के महामन्त्री बने श्री ब्रजसुन्दर शर्मा। सन् 1946 में श्री नित्यानन्द शर्मा ने, जो राज्य से निर्वासित थे, राज्य को सूचित किया कि वे निर्वासन आज्ञा भंग कर राज्य में प्रवेश करेंगे। इस पर महाराव ने उनके निर्वासन की आज्ञा रद्द कर दी। उसी वर्ष महाराव ने बून्दी राज्य में विधान सभा बनाने और लोकप्रिय मन्त्रिमण्डल बनाने की घोषणा की। पर परिषद ने मन्त्रिमण्डल में शामिल होने से इन्कार कर दिया। क्योंकि महारावल लोक परिषद् के अलावा अन्य वर्ग के लोगों को भी मन्त्रिमण्डल में शामिल करना चाहते थे।

झालावाड़ में सन् 1947 में लोकप्रिय मन्त्रिमण्डल की स्थापना हुई जिसमें प्रधान मन्त्री स्वयं महाराजा हरिश्चन्द्र बने। इस मन्त्रिमण्डल में प्रजा मण्डल की ओर से सर्वश्री कन्हैयालाल मित्तल और मांगीलाल भव्य शामिल हुये।

———

12 स्वाधीनता संग्राम और अजमेर

राजस्थान के हृदय पटल पर स्थित अजमेर का सदियों से बड़ा महत्व रहा है। 12वीं शताब्दी में अजमेर शाकम्बरी के चौहानों की राजधानी था। अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान और मुहम्मद गौरी के बीच सन् 1192 में थानेश्वर के युद्ध में पृथ्वीराज की हार ने न केवल भारत पर विदेशी आक्रमणों का मार्ग प्रशस्त किया, वरन् अजमेर का स्वतन्त्र अस्तित्व भी सदा के लिए समाप्त कर दिया। बाद की दो शताब्दियों में अजमेर दिल्ली के सुल्तानों के अधीन रहा। इसके बाद वह कभी मेवाड़ तो कभी मारवाड़ और कभी दिल्ली के सुल्तानों के हाथ में रहा। मुगलकाल में अजमेर के भाग्य ने पलटा खाया। मुगलों ने अजमेर को सूबे का दर्जा दिया और वहीं से उन्होंने राजस्थान की विभिन्न रियासतों पर नियन्त्रण रखा। यह एक विडम्बना है कि अजमेर में ही 10 जनवरी, 1616 को इंग्लैण्ड के बादशाह जेम्स प्रथम के राजदूत सर टॉमस रो की मुगल सम्राट जहाँगीर से हुई मुलाकात ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अस्त होते हुये सितारे को चमका कर भारत में अंग्रेजी राज का बीज बो दिया।

सन् 1707 में औरंगजेब की मृत्यु के साथ ही साथ मुगल सल्तनत लड़खड़ा गयी। सन् 1761 में माधोजी सिन्धिया ने अजमेर पर अधिकार कर लिया। सन् 1787 में अजमेर सिंधिया के हाथों से निकल कर मारवाड़ के राठौड़ों के हाथों में चला गया। पर सन् 1790 में यह नगर पुनः सिंधिया के अधिकार में आ गया। इन दिनों भारत में अंग्रेजों की शक्ति तेजी से बढ़ रही थी। जून सन् 1818 में दौलतराम सिंधिया ने अजमेर अंग्रेजों के सुपुर्द कर दिया। इसी वर्ष अंग्रेजों ने राजस्थान के विभिन्न राजाओं के साथ संधियाँ कर समूचे राजस्थान पर अपनी सार्वभौम-सत्ता स्थापित कर ली। अब मुगलों की भांति अंग्रेज भी अजमेर से राजस्थान की रियासतों पर अपना नियन्त्रण रखने लगे।

अजमेर ब्रिटिश भारत का अंग था। अतः यह स्वाभाविक ही था कि अजमेर ब्रिटिश भारत में होने वाली प्रत्येक गतिविधि से प्रभावित होता। अजमेर को यह श्रेय है कि वह राजस्थान की रियासतो के राजनैतिक कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण केन्द्र और प्रेरणा-स्थली रहा। जयपुर के सुप्रसिद्ध क्रांतिकारी स्व. श्रीअर्जुनलाल सेठी ने वेलूर जेल से रिहा होने के बाद अजमेर को ही अपनी कर्मस्थली बनाया। भूपसिंह उर्फ विजयसिंह 'पथिक' ने ब्रिटिश भारत से फरार होने के बाद खरवा ठाकुर गोपाल सिंह के निजी सचिव बन कर अजमेर इलाके से ही अपने क्रान्तिकारी जीवन का श्रीगणेश किया। श्री जयनारायण व्यास के

राजनैतिक जीवन का पूर्वार्द्ध अजमेर और ब्यावर में ही बीता। श्री माणिक्यलाल वर्मा ने सन् 1938 में मेवाड़ के प्रथम सत्याग्रह का संचालन भी अजमेर से ही किया।

यों तो अजमेर में जाग्रति की शुरूआत 19वीं शताब्दी के अन्त में स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा सचालित आर्य समाज आन्दोलन से हो चुकी थी, पर वहाँ पर राजनैतिक जाग्रति का सिलसिला सही अर्थों में सन् 1914—15 में महा विप्लवी नायक रासबिहारी बोस की प्रस्तावित सशस्त्र क्रान्ति से शुरू हुआ। उन्ही दिनों खरवा ठाकुर गोपाल सिंह, ब्यावर के सेठ दामोदर दास राठी और फिरोजपुर षड़यन्त्र अभियोग में फरार भूप सिंह (विजय सिंह पथिक) ने शेष भारत के साथ राजस्थान में क्रान्ति की ज्वाला प्रज्वलित करने का बीड़ा उठाया। रासबिहारी बोस के दाहिने हाथ प्रसिद्ध क्रान्तिकारी शचीन्द्र सन्याल स्वयं राजस्थान में क्रान्ति की तैयारियों का जायजा लेने आये और सन्तुष्ट होकर गये। 21 फरवरी, 1915 को देश भर में एक 'साथ क्रान्ति प्रारम्भ करने की तिथि निश्चित की गयी थी। पर समय के पूर्व ही प्रस्तावित क्रान्ति का भेद खुल गया और क्रान्ति की योजना असफल हो गई। देश भर में क्रान्तिकारी गिफ्तार कर लिये गये। राव गोपाल सिंह ने अजमेर में 2 हजार सशस्त्र सैनिकों का दल गठित कर लिया था। उन्होंने 30 हजार बन्दूकें और बहुत सारा गोला बारूद इकट्ठा कर लिया था। क्रान्ति की असफलता की सूचना मिलते ही राव गोपाल सिंह ने बन्दूकों और गोला-बारूद को भूमिगत कर दिया और सैनिकों को बिखेर दिया। कुछ ही दिन बाद अजमेर के कमिश्नर 500 सैनिकों की सहायता से गोपाल सिंह और भूप सिंह को खरवा के निकट शिकार-ओहदी पर गिरफ्तार कर लिया और टाडगढ़ के किले में बन्द कर दिया।[1] उन्ही दिनों लाहौर षड़यन्त्र अभियोग में भूप सिंह का नाम उभरा और उन्हें गिरफ्तार कर लाहौर ले जाने के आदेश हुये। यह खबर किसी तरह भूप सिंह को समय पर मिल गई। वह भेष बदल कर टाडगढ़ के किले से फरार हो गया। वहाँ से वह गुरला, भाणा, मोही, पूठोली और चित्तौड़ आदि स्थानों पर विचरता हुआ बिजोलिया पहुंच गया, जहाँ उसने किसान आन्दोलन का संचालन किया। राव गोपाल सिंह भी कुछ समय बाद टाडगढ़ से फरार हो गये। पर वे शीघ्र ही पकड़ लिये गये। वे कई वर्षों तक अपने ही गाँव खरवा में नजरबन्द रखे गये। 1920 के शुरू में उनकी नज़रबन्दी समाप्त कर दी गई।

मार्च, 1920 में सेठ जमनालाल बजाज की अध्यक्षता में अजमेर में राजपूताना-मध्यभारत सभा का एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में सर्वश्री अर्जुनलाल सेठी, केशरी सिंह बारहट, ठाकुर गोपाल सिंह खरवा और विजय सिंह पथिक आदि नेताओं ने भाग लिया। उसी वर्ष देश में खिलाफत आन्दोलन चला। अजमेर में खिलाफत समिति की बैठक हुई जिसमें डाक्टर अन्सारी, मौलाना मोयुद्दीन, सेठ अब्बासअली एवं श्री चांदकरण शारदा ने महत्वपूर्ण योगदान दिया।

अक्टूबर, 1920 में सर्वश्री अर्जुनलाल सेठी, केशरी सिंह बारहट और विजय सिंह पथिक ने अजमेर में राजस्थान सेवा संघ की स्थापना की जिसका उद्देश्य राजस्थान की विभिन्न रियासतों में चलने वाले आन्दोलनों को गति देना था। उस समय श्री रामनारायण चौधरी वर्धा से लौट कर अपना कार्य क्षेत्र अजमेर बना चुके थे। उन्हें संघ का महामन्त्री

---

1. प्रो. शंकर सहाय सक्सेना द्वारा लिखित "विजय सिंह 'पथिक' की जीवनी" पर आधारित।

बनाया गया। संघ के तत्वावधान में "राजस्थान केशरी" नामक समाचार पत्र निकाला गया, जिसमें प्रकाशित एक समाचार को लेकर चौधरी जी पर स्थानीय पुलिस ने मान-हानि का मुकदमा चलाया। चौधरी जी को तीन माह की सजा हुई। सन् 1927 में कार्यकर्ताओं में मतभेद के कारण राजस्थान सेवा सघ टूट गया।

सन् 1926 में श्री हरिभाऊ उपाध्याय ने अजमेर की राजनीति में प्रवेश किया। श्री उपाध्याय 9 मार्च, 1893 को ग्वालियर राज्य के भौरासा गांव में पैदा हुये थे। उन्होंने सन् 1920 से 1923 तक गांधी जी की देख-रेख में अहमदाबाद से "नवजीवन" का सम्पादन किया। सन् 1927 में उन्होंने हटूण्डी आश्रम की स्थापना की। उस समय श्री अर्जुनलाल सेठी अजमेर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे। सेठी जी उग्रवादी विचार-धारा के थे और उपाध्याय जी गांधीवादी। दोनों में गहरा मतभेद हो गया। अन्त में उपाध्याय जी प्रान्तीय कांग्रेस के अध्यक्ष बन गये। सेठी जी धीरे-धीरे प्रान्तीय कांग्रेस की गतिविधियों से अलग हो गये।

अप्रेल सन् 1930 में देश में गांधी जी के नेतृत्व में नमक सत्याग्रह हुआ। सर्वश्री हरिभाऊ उपाध्याय, विजयसिंह पथिक, अर्जुनलाल सेठी, रामनारायण चौधरी और प्रोफेसर गोकुल लाल असावा गिरफ्तार हुए। उन्हें गांधी—इरविन समझौते के फलस्वरूप नवम्बर सन् 1930 में रिहा कर दिया गया। सन् 1932 के देश व्यापी सत्याग्रह में भी अजमेर का समुचित योग रहा। इस सत्याग्रह में महिलायें बड़ी संख्या में जेल गई। उसी वर्ष "हिन्दुस्तान शोसलिस्ट रिपब्लिकन सेना" के श्री रामचन्द्र नरहरी बापट ने 25 अप्रेल को स्थानीय जिला मजिस्ट्रेट के कार्यालय में अजमेर के इन्सपेक्टर जनरल ऑफ जेल्स श्री गिब्सन को गोली से उड़ाने का प्रयत्न किया। पर रिवाल्वर जाम हो गया। गिब्सन बच गया। श्री बापट गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हें 10 वर्ष की सजा हुई। वे सन् 1940 में रिहा हुये।

सन् 1935 में अजमेर पुलिस के उप अधीक्षक श्री प्राणनाथ डोगरा को कतिपय क्रान्तिकारियों ने मौत के घाट उतारने का निश्चय किया। डोगरा तो बच गया। पर उसका साथी इन्सपेक्टर सलीलुद्दीन मारा गया। इस काण्ड में सर्वश्री ज्वाला प्रसाद, रामसिंह और मांगीलाल उर्फ रमेशचन्द्र व्यास पकड़े गये। श्री रामसिंह और श्री रमेशचन्द्र व्यास पर मुकदमा चलाया गया। श्री व्यास अदालत से छूट गये। पर श्री रामसिंह को 7 वर्ष की सजा हुई। उन्हें काला पानी भेज दिया गया। श्री ज्वाला प्रसाद को कई महिनों तक नजरबन्द रखने के बाद छोड़ दिया गया।

उन वर्षों में अजमेर-मेरवाड़ा की राजनैतिक और सामाजिक प्रवृत्तियों में जिन अन्य व्यक्तियों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की उनमें प्रमुख थे सर्वश्री कुमारानन्द, बाबा नरसिंहदास, मो. अब्दुल गफूर, श्री गुलाब चन्द घूत और श्रीमती गुलाब देवी।

अगस्त सन् 1942 में कांग्रेस महासमिति के बम्बई अधिवेशन में महात्मा गांधी के नेतृत्व में भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू करने का निर्णय लिया गया। देश के अन्य भागों की तरह अजमेर मे भी कांग्रेसी कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिये गये। इनमें प्रमुख थे सर्वश्री गोकुललाल असावा, मुकुट बिहारी लाल भार्गव, लेखराज आर्य, मूलचन्द असावा, शंकर लाल वर्मा, बालकृष्ण कौल, ज्वाला प्रसाद शर्मा, रघुराज सिंह, रामनारायण चौधरी, दुर्गाप्रसाद चौधरी, चन्द्रगुप्त वार्ष्णेय, मौलाना अब्दुल शकूर, कन्हैयालाल आर्य, बालकिशन

गर्ग, ब्रजमोहन शर्मा और रामनिवास शर्मा। श्री रमेशचन्द्र व्यास भीलवाड़ा से गिरफ्तार किये जाकर अजमेर जेल में रखे गये। इसी प्रकार श्री शोभालाल गुप्त भी अजमेर जेल में रहे। 24 जनवरी, 1944 को श्री ज्वाला प्रसाद और श्री रघुराज सिंह जेल अधिकारियों की आंखों में धूल झोंक कर जेल से भाग गये। देश के शेष भागों की तरह अजमेर में भी सत्याग्रही 1944 के अन्त एवं 1945 के शुरू में जेल से रिहा कर दिये गये।

15 अगस्त, 1947 को देश स्वतन्त्र हो गया। इसके साथ ही अजमेर का वातावरण बदल गया। अजमेर अब राजस्थान की राजनैतिक गतिविधियों का केन्द्र न रहकर अजमेर मेरवाड़ा का मुख्यालय मात्र रह गया। अजमेर में राजस्थान की रियासतों के नेताओं का आये दिन रहने वाला जमघट समाप्त हो गया।

अप्रेल, 1949 में जब वृहद्-राजस्थान बना तो राजस्थान के नेता चाहते थे कि अजमेर को भी राजस्थान में मिला दिया जाय, पर न तो अजमेर कांग्रेस का नेतृत्व और न भारत सरकार ही इसके लिये तैयार हुई। यहां यह बता देना आवश्यक है कि जब बड़ा राजस्थान बनाने की प्रक्रिया चली तो राजस्थान की अधिकतर रियासतों के नेता अजमेर को राजस्थान की राजधानी बनाने के पक्ष में थे। इस प्रकार अजमेर ने राजस्थान की राजधानी बनने का एक सम्भावित अवसर खो दिया।

14

राजस्थान का निर्माण और राजशाही की विदाई

"इस अर्द्ध रात्रि को जब शेष संसार निद्रा में मग्न होगा, भारत अंगड़ाई लेगा और स्वतन्त्रता के युग में प्रवेश करेगा।"

भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री पं. जवाहर लाल नेहरु की उक्त घोषणा के साथ ही ता. 15 अगस्त, 1947 की मध्य रात्रि को भारत एक स्वतन्त्र राष्ट्र बन गया। इस प्रकार सन् 1857 में शुरू हुए 90 वर्ष लम्बे स्वतन्त्रता संग्राम का पटाक्षेप हो गया। काश्मीर, हैदराबाद और जूनागढ़ को छोड़कर देश की भौगोलिक सीमा में स्थित 550 से अधिक रियासतें 15 अगस्त के पूर्व ही भारतीय-संघ में शामिल हो गयी। लोहपुरूष सरदार वल्लभभाई पटेल की दूरदर्शिता पूर्ण नीति के फलस्वरूप भारत टुकड़ों टुकड़ो में बंटने से बच गया।

मन्त्रिमण्डल-मिशन के 22 मई, 1946 के ज्ञापन द्वारा ब्रिटिश सरकार ने घोषणा कर दी थी कि भारत के भावी सवैधानिक ढांचे में समुचित रूप से अपना भाग अदा करने के लिए छोटी-छोटी रियासतो को आपस में मिलकर बड़ी इकाइयां बना लेनी चाहिए या पड़ोस की बड़ी रियासतो या प्रान्तों में मिल जाना चाहिए।[1] राजपूताना एजेन्सी[2] के अन्तर्गत लगभग 2 दर्जन रियासतें थी, जिनमें से अधिकतर अपना पृथक अस्तित्व बनाये रखने योग्य नही थी। राजस्थान के राजाओं और जन नेताओं ने इस स्थिति को भली-भांति समझ लिया था।

राजाओं के प्रयत्न :

मेवाड़ के महाराणा भूपाल सिंह जी ने ता. 25 और 26 जून, 1946 को राजस्थान, गुजरात और मालवा के राजाओं का एक सम्मेलन उदयपुर में बुलाया। इस सम्मेलन में 22 राजा महाराजा उपस्थित थे। सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए महाराणा ने उपस्थित नरेशों से अपील की कि "हम सब मिलकर एक "राजस्थान यूनियन" का निर्माण करें ताकि वह भावी भारतीय संघ की एक सुदृढ़ इकाई बन सके"। महाराणा ने सुझाव दिया कि प्रस्तावित यूनियन भारतीय संघ की एक सब फेडरेशन के रूप में बनाई

---

1 वी पी. मेनन-दी स्टोरी आफ दी इन्टीग्रेशन आफ दी इन्डियन स्टेट्स, पृ. 46 व 479-95

2 ब्रिटिश शासन के दौरान रियासतो के समूह पर केन्द्रीय नियन्त्रण रखने के लिए एजेन्सियाँ स्थापित की गयी थी। हर एक एजेन्सी एक ब्रिटिश अधिकारी के अन्तर्गत होती थी जो एजेन्ट टू दी गवर्नर जनरल (ए. जी. जी.) कहलाता था।

जाय जिसमें रियासतें अपना अपना पृथक अस्तित्व कायम रखते हुए कतिपय विषय 'यूनियन' को सौंप दे। राजाओं ने महाराणा की योजना पर विचार करने का वादा किया

महाराणा को अपने प्रस्तावों को अमली जामा पहनाने की धुन बनी रही। उन्होंने सुप्रसिद्ध संविधान वेत्ता श्री के. एम. मुन्शी को अपना संवैधानिक सलाहकार नियुक्त किया। श्री मुन्शी की सलाह पर महाराणा ने उक्त राजाओं का एक और सम्मेलन ता. 23 मई, 1947 को उदयपुर में आमन्त्रित किया। महाराणा ने सम्मेलन में राजाओं को चेतावनी दी कि "हम लोगों ने मिलकर अपनी रियासतों की यूनियन नहीं बनाई तो सभी रियासतें जो प्रान्तों के समकक्ष नहीं हैं, निश्चित रूप से समाप्त हो जायेगी।[1] श्री मुन्शी ने भी इस सम्मेलन में महाराणा की योजना का जोरदार समर्थन किया। फलस्वरुप जयपुर, जोधपुर और बीकानेर आदि बड़ी रियासतों को छोड़कर शेष सभी रियासतों ने सिद्धान्त रूप से इस योजना में शरीक होना स्वीकार कर लिया। सम्मेलन ने प्रस्तावित "राजस्थान यूनियन" का विधान तैयार करने के लिए एक समिति (कौंसिल आफ एक्सन) का गठन किया। इस समिति ने राजाओं एवं उनके प्रतिनिधियों के ता. 14 फरवरी, 1948 के सम्मेलन में यूनियन के विधान का एक प्रारूप प्रस्तुत किया। पर सम्मेलन में उक्त प्रारूप पर मतैक्य नहीं हो सका।[2] महाराणा ने अपनी जन्म गांठ के अवसर पर ता. 6 मार्च, 1948 को राजस्थान और गुजरात के राजाओ से अपील की कि राजपूताना कीं चार बड़ी रियासतों का अस्तित्व कायम रखते हुये एक ऐसे संघ का निर्माण किया जा सकता है जो एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में भावी भारतीय संघ में महत्वपूर्ण भाग अदा कर सके।[3] पर महाराणा की इस अपील का भी राजाओं पर विशेष असर नहीं पड़ा।

जयपुर के महाराजा मानसिंह जी की स्वीकृति से वहां के दीवान सर वी. टी. कृष्णमाचारी ने भी प्रदेश के शासकों और उनके प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन में उन्होंने प्रस्ताव रखा कि प्रदेश की रियासतो का एक ऐसा संघ बनाया जाये, जिसमें हाईकोर्ट, उच्च शिक्षा, पुलिस आदि विषय सघ को सौंप दिए जांए और शेष विषय इकाइयों के पास रहे। उन्होंने सम्मेलन को यह भी कहाकि यदि उन्हें यह प्रस्ताव स्वीकार न हो तो समस्या का दूसरा हल यह है कि प्रदेश की जो रियासतें अपना पृथक अस्तित्व रखने की क्षमता नही रखती, वे पड़ौस की बड़ी रियासतों मे मिल जायें। पर सम्मेलन बिना किसी निर्णय पर पहुंचे ही समाप्त हो गया।

कोटा के महाराव भीमसिंह जी ने प्रयत्न किया कि कोटा, बूंदी और झालावाड़ को मिला कर एक संयुक्त राज्य बना दिया जाये। इसी प्रकार डूंगरपुर के महारावल लक्ष्मण सिंह जी ने कोशिश की कि डूंगरपुर, बांसवाड़ा, कुशलगढ़ और प्रतापगढ़ को मिलाकर एक इकाई में परिणित कर दिया जाय। पर दोनों अपने अपने प्रयत्नों में असफल रहे।

राजस्थान की रियासतें यह तो महसूस कर रही थी कि स्वतन्त्र भारत में छोटी छोटी रियासतें आधुनिक आवश्यकताओं के अनुसार अपने पैरों पर खड़ी नही रह सकती एवं उनके सामने आपस में मिलकर स्वावलम्बी इकाइयां बनाने के अलावा कोई रास्ता

---

1. मेवाड़ गजट—असाधारण अंक ता. 23 मई, 1947
2. मेवाड़ प्रजा मण्डल पत्रिका ता. 20 फरवरी, 1948
3. मेवाड़ गजट असाधारण अंक ता. 6 मार्च, 1948

नही है, पर ऐतिहासिक और अन्य कारणों से राजाओं में एक दूसरे के प्रति अविश्वास और ईर्ष्या की भावनायें भरी हुई थीं। राजस्थान की वड़ी रियासतों की ओर से एकीकरण की दिशा में किये गए प्रयत्नो को छोटी रियासतों ने इस रूप में लिया कि वड़ी रियासतें छोटी रियासतों को निगल जाना चाहती हैं। उनका यह सन्देह कुछ सीमा तक उचित भी था। महाराणा उदयपुर द्वारा किये गये प्रयत्नों से ऐसा लग रहा था जैसे कि वे छोटी-छोटी रियासतों को मेवाड़ में विलय कर वृहत्तर मेवाड़ की रचना करना चाहते है। दुर्भाग्य से कई बार महाराणा ने एकीकरण की चर्चा के दौरान जाने अनजाने इस प्रकार के संकेत भी दिये थे। जयपुर तो अन्त तक यह प्रयत्न करता रहा था कि वृहद राजस्थान निर्माण की अपेक्षा राजस्थान की रियासतों को तीन या चार इकाइयों में बांट दिया जाये और करौली एवं अलवर को जयपुर में मिला दिया जाये। बीकानेर ने पड़ौस की रियासत लुहारु को बीकानेर में मिलाने के लिये आकाश पाताल एक कर दिया था। परन्तु सरदार पटेल के सामने उनकी नहीं चल पाई। डूंगरपुर के "बागड़" प्रान्त के निर्माण के प्रयत्नों को वृहत्तर डूंगरपुर और कोटा के हाड़ौती निर्माण के प्रयत्न को वृहत्तर कोटा के निर्माण की संज्ञा दी गयी। छोटी रियासतों ने वंश परम्परा और प्राचीन प्रतिष्ठा के नाम पर बड़ी रियासतों के साथ मिलने का विरोध किया। जो हो राजस्थान के शासकों द्वारा एकीकरण की ओर किये गये सभी प्रयत्न बेकार हो गये। स्पष्ट था प्रबल जनमत और शक्तिशाली केन्द्रीय सत्ता ही इन रियासतों को एकीकरण के लिये मजबूर कर सकती थी।

जनमत का निर्माण

राजाओं द्वारा राजस्थान की रियासतों के एकीकरण के सम्बन्ध में किये गये किसी भी प्रयत्न मे राजस्थान की जनता अथवा जन संगठनों को विश्वास में नही लिया गया था। अतः यह स्वाभाविक था कि राजाओं द्वारा किये जाने वाले प्रयत्नों से जनता उदासीन रहती। परन्तु राजस्थान के विभिन्न राजनैतिक संगठन स्वतन्त्र रूप से वृहद राजस्थान के निर्माण के लिये प्रयत्न करते रहे। अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद की राजपूताना प्रांतीय सभा तो सितम्बर, 1946 में ही एक प्रस्ताव स्वीकार कर चुकी थी कि राजस्थान की कोई भी रियासत अपने आप मे भारतीय संघ में शामिल होने योग्य नहीं है। अत: समस्त राजस्थान एक ही इकाई के रूप में भारतीय संघ में शामिल होना चाहिए।[1] इस प्रकार प्रान्तीय सभा के इस प्रस्ताव से राजस्थान बनाने की कल्पना उभर कर सामने आ चुकी थी। बीच-बीच में रियासतों के प्रजामण्डल/प्रजा परिषद भी राजस्थान के निर्माण की आवाज उठाते रहे थे। मार्च, 1948 में प्रान्तीय सभा की कार्यसमिति ने स्पष्ट रूप से घोषणा कर दी कि राजस्थान की सभी रियासतों और अजमेर मेरवाड़ा को मिलाकर वृहद राजस्थान बनाने के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं है।[2] दूसरी ओर समाजवादी दल श्री राम मनोहर लोहिया के नेतृत्व में अखिल भारतीय स्तर पर वृहद राजस्थान राज्य के निर्माण की मांग कर रहा था। इस प्रकार जन प्रतिनिधि संस्थायें राजस्थान के निर्माण के लिए प्रबल जनमत तैयार करने में संलग्न थी।

भारत सरकार की नीति

भारत सरकार के रियासती विभाग ने निर्णय लिया कि स्वतन्त्र भारत में वे ही

---

1. राजपूताना प्रान्तीय सभा का बुलेटिन अक्टूबर, 1946
2. मेवाड़ प्रजामण्डल पत्रिका, 15 मार्च, 1948

रियासतें अपना पृथक अस्तित्व रख सकेंगी जिनकी आय 1 करोड़ रु. वार्षिक और जन संख्या 10 लाख या उससे अधिक हो।

भारत सरकार द्वारा निर्धारित उक्त मापदण्ड के अनुसार राजस्थान में केवल जयपुर, जोधपुर, उदयपुर और बीकानेर ही ऐसी रियासतें थी जो अपना पृथक अस्तित्व रख सकती थीं।

भारत सरकार ने अपनी घोषित नीति के अनुसार सितम्बर, 1947 में किशनगढ़ और शाहपुरा की रियासतों को केन्द्र शासित प्रदेश अजमेर में मिलाने का निर्णय किया। इन रियासतों का क्षेत्रफल क्रमश: 2200 वर्ग कि. मी. और 1000 वर्ग कि. मी. था। ये रियासतें अजमेर की सीमाओं से मिली हुई थीं। किशनगढ़ के महाराजा सुमेर सिंह ने ता. 26 सितम्बर को दिल्ली में विलय-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। उसी दिन भारत सरकार ने शाहपुरा के राजाधिराज सुदर्शन देव को भी अपनी रियासत को अजमेर में विलय करने सम्बन्धी विलय-पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिये आमन्त्रित किया। पर राजाधिराज ने कहा कि वह अपनी रियासत की सत्ता विधान के अनुसार जन प्रतिनिधियों को सौंप चुके हैं। वे अब राज्य के एक वैधानिक शासक मात्र हैं। अत: वे अपने मन्त्रिमण्डल की सलाह लिये बिना इस सम्बन्ध में कोई निर्णय नहीं ले सकते। रियासती विभाग एक छोटी सी रियासत के राजा से इस प्रकार का उत्तर सुनने को तैयार नहीं था। रियासती विभाग के प्रवक्ता ने धमकी भरे शब्दों में श्री सुदर्शन देव से कहा कि यदि उन्होंने रियासती विभाग के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया तो उन्हें इसके परिणाम भोगने पड़ेंगे। प्रवक्ता ने इस सम्बन्ध में अलवर के महाराजा के विरुद्ध की गई कार्यवाही का उदाहरण भी दिया। राजाधिराज ने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया कि अलवर महाराज पर गंभीर आरोप हैं, जबकि उन पर ऐसा कोई आरोप नहीं है। यह कह कर राजाधिराज रियासती विभाग से बाहर निकल आये और राज्य के प्रधानमन्त्री प्रो गोकुल लाल असावा को उक्त घटना से परिचित कराया।[1] प्रो. असावा राजस्थान के अन्य नेताओं के साथ रियासती विभाग के सचिव श्री वी. पी. मेनन और प्रभारी मन्त्री सरदार पटेल से मिले और उनसे कहा कि शाहपुरा की मंशा किसी भी तरह भारत सरकार की नीति का विरोध करना नहीं है। वे तो भी केवल यह चाहते हैं कि राजस्थान की छोटी बड़ी सभी रियासतों का एक संघ बना दिया जाय और शाहपुरा तथा किशनगढ़ का भी उस संघ में विलय कर दिया जाये। जन प्रतिनिधियों की भावना का आदर करते हुए सरदार पटेल ने तुरन्त ही किशनगढ़ और शाहपुरा को अजमेर में विलय करने का निर्णय रद्द कर दिया।[2]

नवम्बर, 1947 में सरदार पटेल को यह सुझाव दिया गया कि चूंकि पालनपुर, दान्ता, ईडर, विजयनगर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा और सिरोही आदि रियासतों की अधिकतर जनता गुजराती भाषा-भाषी है, अत: इन रियासतों को राजपूताना एजेन्सी से हटाकर पश्चिमी भारत और गुजरात एजेन्सी के अन्तर्गत कर दिया जाये।[3] श्री के. एम. मुन्शी और गुजरात के अन्य नेता "महागुजरात" का स्वप्न देख रहे थे। यह योजना भी उसी

---

1. बी. एल. पानगड़िया-राजस्थान का इतिहास पृ. 69
2. बी. एल. पानगड़िया-राजस्थान का इतिहास पृ. 315
3. वी. पी. मेनन-दी स्टोरी आफ इन्टीग्रेशन आफ इन्डियन स्टेट्स पृ. 270

स्वप्न का एक अंग थी। राजाओं और जनता के विरोध के कारण डूंगरपुर और बांसवाड़ा की स्थिति तो यथावत रह गयी, परन्तु सिरोही सहित अन्य रियासतें राजपूताना एजेन्सी से हटा कर गुजरात एजेन्सी के अन्तर्गत कर दी गयी।

मतस्य संघ का निर्माण :

देश के विभाजन के समय भारतीय उप महाद्वीप में भीषण सम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे। अलवर और भरतपुर की रियासतें भी इन दंगों से नहीं बच सकीं। उस समय अलवर के दीवान डा. एन. बी. खरे थे जो हिन्दू महासभा के अध्यक्ष रह चुके थे। भारत सरकार को इस प्रकार की शिकायतें मिली कि अलवर में दंगे भड़काने में स्वयं अलवर प्रशासन का हाथ है। इसी बीच ता. 30 जनवरी, 1948 को दिल्ली में हिन्दू महासभा के नाथूराम गोड्से ने महात्मा गांधी की हत्या कर दी। महाराजा अलवर तेज सिंह और दीवान डा. खरे के संबंध में भारत सरकार को यह सूचना मिली कि उन्होंने गांधी जी की हत्या के षडयन्त्र से सम्बन्धित कतिपय लोगों को पनाह दी। भारत सरकार ने ता. 7 फरवरी को महाराजा अलवर और डॉ. खरे को दिल्ली में नज़रबन्द कर दिया और अलवर का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया।[1]

भरतपुर में साम्प्रदायिक दंगों से उत्पन्न स्थिति से भारत सरकार इस निर्णय पर पहुँची कि वहाँ का प्रशासन राज्य में कानून और व्यवस्था बनाये रखने में सर्वथा निकम्मा साबित हुआ है। परन्तु इसके पहले कि भारत सरकार इस सम्बन्ध में कोई कदम उठाती स्वयं वहाँ के महाराजा ने भरतपुर का प्रशासन भारत सरकार को सौंप दिया।

अलवर और भरतपुर से मिली हुई धौलपुर और करौली की छोटी-छोटी रियासतें थी। ये चारों रियासतें भारत सरकार द्वारा निर्धारित मापदण्ड के अनुसार पृथक अस्तित्व बनाये रखने योग्य नहीं थी। भारत सरकार ने ता. 27 फरवरी को चारों रियासतों के राजाओं के सामने यह प्रस्ताव रखा कि उक्त रियासतों के एकीकरण द्वारा एक नये राज्य का निर्माण किया जाय। उन्होंने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। महाभारत काल मे यह क्षेत्र मत्स्य प्रदेश के नाम से विख्यात था। अतः भारत सरकार ने प्रस्तावित राज्य का नाम मत्स्य संघ रखा। इस नये राज्य का उद्घाटन भारत सरकार के मंत्री एन. वी. गाडगिल ने ता. 18 मार्च, 1948 को किया। मत्स्स संघ का क्षेत्रफल लगभग 12000 कि. मी., जनसंख्या 1.8 करोड़ और वार्षिक आय 2 करोड़ रुपये थी। संघ के राजप्रमुख महाराजा धौलपुर और उपराजप्रमुख महाराजा करौली बनाये गये।

अलवर प्रजामण्डल के प्रमुख नेता श्री शोभाराम कुम्हावत मत्स्य संघ के प्रधानमन्त्री बने। उनके मन्त्रिमण्डल के अन्य सदस्य थे श्री भोलानाथ (अलवर), श्री युगलकिशोर चतुर्वेदी (भरतपुर), श्री चिरंजीलाल शर्मा (करौली) और डॉ मंगल सिंह (धौलपुर)। भारत सरकार ने मन्त्रीमण्डल के सिर पर एक आई. सी. एस. अधिकारी को प्रशासक के रूप में बैठा दिया। सेना, पुलिस, कानून और व्यवस्था एवं राजनैतिक विभाग सीधे प्रशासक के हाथ में दे दिये गये। यही नहीं प्रशासक को यह अधिकार भी दे दिया गया कि वह बिना मन्त्रिमण्डल की सहमति के भी कोई भी आदेश जारी कर सकता है। इस प्रकार लोकप्रिय मन्त्रिमण्डल व्यावहारिक रूप से प्रशासक का मातेहत बन गया।

---

1. वी. पी. मेनन-दी स्टोरी ऑफ इन्टिग्रेशन ऑफ इंडियन स्टेट्स पृ. 253-254

संयुक्त राजस्थान का निर्माण

केन्द्रीय मन्त्री श्री एन० वी० गाडगिल महाराव कोटा भीमसिंहजी को संयुक्त राजस्थान कोटा के राजप्रमुख पद की शपथ दिलाते हुए ।

प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू मेवाड़ के महाराणा भोपालसिंह को संयुक्त राजस्थान उदयपुर के राजप्रमुख के पद की शपथ दिलाते हुए । महाराणा के पास महाराव भीमसिंह उप राजप्रमुख खड़े हैं ।

उप प्रधान मन्त्री सरदार पटेल और संयुक्त राजस्थान, उदयपुर का मन्त्रिमण्डल

बाएं से दाएं (कुर्सी पर)—1. कुमारी मणि बेन, 2. राजप्रमुख महाराणा भोपालसिंह, 3. सरदार वल्लभभाई पटेल, 4. श्री माणिक्यलाल वर्मा, प्रधान मन्त्री सं० राजस्थान ।

बाएं से दाएं (खड़े हुए)—1. प्रो० गोकुललाल असावा, राजस्व मन्त्री, 2. श्री मोहनलाल सुखाड़िया, उद्योग मन्त्री, 3. पं० अभिन्नहरि, कृषि मन्त्री, 4. श्री भोगीलाल पण्ड्या, समाज कल्याण मन्त्री, 5. प्रो० प्रेमनारायण माथुर, वित्त एवं शिक्षा मन्त्री, 6. श्री भूरेलाल बया (सरदार पटेल के पीछे), जागीर मन्त्री एवं 7. श्री बृजसुन्दर शर्मा, विधि मन्त्री ।

संयुक्त राजस्थान का निर्माण :

किशनगढ़ और शाहपुरा के अजमेर में विलय के प्रस्ताव के रद्द हो जाने के बाद रियासती विभाग ने दक्षिणी राजस्थान के छोटे-छोटे राज्यों के एकीकरण की समस्या को हाथ में लिया। रियासती विभाग ने इन रियासतों का मध्य भारत और गुजरात की रियासतों के साथ एकीकरण का प्रस्ताव रखा। पर यह प्रस्ताव न राजाओं को स्वीकार हुआ और न जनप्रतिनिधियों को। वे चाहते थे कि राजस्थान की रियासतों का एकीकरण इस प्रकार हो कि उनकी सदियों पुरानी सामाजिक और सांस्कृतिक एकता बनी रहे। रियासती विभाग ने ता. 3 मार्च, 1948 को कोटा, बून्दी, झालावाड़, टोंक, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, किशनगढ़ और शाहपुरा की रियासतों को मिलाकर "संयुक्त राजस्थान राज्य" के निर्माण का प्रस्ताव किया। प्रस्तावित राज्य के हाड़ौती और वागड़ क्षेत्र के बीच मेवाड़ की रियासत पड़ती थी। पर रियासती विभाग द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार मेवाड़ अपना पृथक अस्तित्व बनाये रखने का अधिकारी था। अतः रियासती विभाग मेवाड़ पर विलय के लिये दबाव नहीं डाल सकता था। फिर भी कतिपय राजाओं के आग्रह पर रियासती विभाग ने मेवाड़ को नये राज्य में शामिल होने की दावत दी। पर मेवाड़ के प्रधानमन्त्री सर राममूर्ती और महाराणा ने रियासती विभाग के प्रस्ताव का विरोध करते हुए कहा कि मेवाड़ का 1300 वर्ष पुराना राजवंश अपनी गौरवशाली परम्पराओं को तिलान्जलि देकर भारत के मानचित्र पर अपना अस्तित्व समाप्त नहीं कर सकता। उन्होंने कहा कि राजस्थान की रियासतें चाहें तो मेवाड़ में अपना विलय कर सकती हैं। प्रजामण्डल के हलकों में सरकार के इस रवैये की तीव्र प्रतिक्रिया हुई। मेवाड़ प्रजामण्डल के प्रमुख नेता और संविधान निर्मात्री परिषद् के सदस्य श्री माणिक्य लाल वर्मा ने दिल्ली से जारी एक वक्तव्य में कहा कि मेवाड़ की 20 लाख जनता के भाग्य का फैसला अकेले महाराणा सा० और उनके प्रधानमन्त्री सर राममूर्ती नहीं कर सकते। प्रजामण्डल की यह स्पष्ट नीति है कि मेवाड़ अपना अस्तित्व समाप्त कर राजपूताना प्रान्त का एक अंग बन जाय।[1] प्रजामण्डल के मुख पत्र "मेवाड़ प्रजामण्डल पत्रिका" के ता. 8 मार्च और 15 मार्च के सम्पादकीय लेखों में पुरजोर मांग की गयी कि आधुनिक युग में मेवाड़ एक पृथक इकाई के रूप में विकास नहीं कर सकता। अतः जनता के हितों को ध्यान में रखते हुए उसे अविलम्ब प्रस्तावित संयुक्त राजस्थान राज्य में मिल जाना चाहिये। परन्तु मेवाड़ सरकार अपने निश्चय पर अटल रही। फलतः रियासती विभाग ने बिना मेवाड़ के ही संयुक्त राजस्थान राज्य के निर्माण का फैसला किया।

प्रस्तावित संयुक्त राजस्थान में कोटा सबसे बड़ी रियासत थी। अतः रियासती विभाग ने निर्णय किया कि नये राज्य के राजप्रमुख का पद महाराव कोटा भीम सिंह जी को दिया जाये। यह प्रस्ताव बून्दी के महाराव बहादुर सिंह जी के गले नहीं उतरा। कारण यह था कि वंश परम्परा के अनुसार कोटा महाराव बून्दी महाराव के छुटभैया थे। बून्दी महाराव उदयपुर पहुंचे और महाराणा से प्रार्थना की कि यदि मेवाड़ इस नये राज्य में शामिल हो जाये तो महाराणा राजप्रमुख बन जायेंगे और उनकी कठिनाई का

---

1. मेवाड़ प्रजामण्डल पत्रिका, 8 मार्च, 1948—सं, बी. एन. पालीवाल

समाधान स्वतः ही हो जायेगा। परन्तु महाराणा ने महाराव बून्दी को भी वही उत्तर दिया जो उन्होंने कुछ दिनों पहले रियासती विभाग को दिया था। अन्तोगत्वा बून्दी को महाराव कोटा के राजप्रमुख बनाने का प्रस्ताव स्वीकार करना पड़ा। प्रस्तावित राज्य मे शामिल होने वाली सभी रियासतो के शासकों ने कोवीनेन्ट (विलय–पत्र) पर हस्ताक्षर कर दिये। हां, बांसवाड़ा के महारावल चन्द्रवीर सिंह ने विलय–पत्र पर हस्ताक्षर करने मे थोड़ी किच–किचाहट बतायी। पर अन्त में पड़ौसी रियासतों की सलाह पर उन्होंने भी विलय–पत्र पर यह कह कर हस्ताक्षर कर दिये कि, "मैं अपने डेथ वारन्ट" पर हस्ताक्षर कर रहा हूँ।[1]

शीघ्र ही मेवाड़ में राजनैतिक परिस्थितियों ने पलटा खाया महाराणा की 6 मार्च, 1948 की घोषणा के अनुसार प्रजामण्डल और सरकार के बीच मंत्रिमण्डल के पुनर्गठन के सम्बन्ध में वार्ता शुरू हुई। दोनों पक्षों के बीच एक समझौता हुआ जिसके अनुसार सरकार ने स्वीकार कर लिया कि रियासत में प्रजामण्डल के बहुमत वाले मन्त्रिमण्डल का निर्माण होगा, जिसमें महाराणा द्वारा नियुक्त दीवान के अलावा 7 सदस्य होंगे। इसमे प्रधानमन्त्री सहित 4 सदस्य प्रजामण्डल द्वारा और 2 सदस्य मेवाड़ क्षत्रिय परिषद् द्वारा नामजद होंगे। 7वां सदस्य एक ऐसा निर्दलीय व्यक्ति होगा जो महाराणा और प्रजामण्डल दोनों को स्वीकार हो। प्रजामण्डल ने प्रो. प्रेमनारायण माथुर को प्रधानमन्त्री पद के लिये और सर्व श्री बलवन्त सिंह मेहता, मोहनलाल सुखाड़िया एवं हीरालाल कोठारी को मन्त्री पद के लिये नामजद किया। निर्दलीय सदस्य के स्थान पर महाराणा ने मेवाड़ के पुराने मुत्सद्दी परिवार के डा. मोहन सिंह मेहता के नाम का सुझाव दिया। डा. मेहता उस समय रियासत के वित्त मंत्री थे। प्रजामण्डल डा. मेहता द्वारा सन् 1942 के आन्दोलन में अदा की गयी भूमिका से नाराज था। राज्य के शिक्षा–मंत्री की हैसियत से डा. मेहता ने उस समय विद्यार्थी आन्दोलन को तोड़ने का प्रयत्न किया था। अतः प्रजामण्डल ने उनके नाम का विरोध किया। इसी मुद्दे को लेकर प्रजामण्डल और सरकार के बीच गतिरोध पैदा हो गया।

प्रजामण्डल की ता० 14 मार्च को एक आवश्यक बैठक में निर्णय लिया गया कि राज्य मंत्रिमण्डल से प्रजामण्डल के प्रतिनिधि सर्वश्री मोहन लाल सुखाड़िया और हीरालाल कोठारी को हटा लिया जाये और राज्य में उत्पन्न राजनैतिक संकट पर विचार करने के लिये प्रजामण्डल की महासमिति की असाधारण बैठक बुलाई जाये। सरकार हिल उठी। उसने तुरन्त ही ता० 21 मार्च को प्रजामण्डल के नेताओं को पुनः वार्ता के लिये आमन्त्रित किया। उसने प्रजामण्डल के सुझाव पर एक निर्दलीय एडवोकेट श्री जीवन सिंह चौरड़िया को मन्त्रिमण्डल में लेना स्वीकार कर लिया।

मेवाड़ के मुत्सद्दी वर्ग और प्रधान मन्त्री सर राममूर्ती ने प्रजामण्डल की इस विजय को सहज भाव से नहीं लिया। राज दरबार में अन्दर ही अन्दर प्रजामण्डल के विरुद्ध षड्यन्त्र रचा जाने लगा। मुत्सद्दी वर्ग इस फिराक में था कि मेवाड़ का संयुक्त राजस्थान मे विलय भले ही हो जाये पर सत्ता प्रजामण्डल के हाथ मे न जाये। उसे विश्वास था कि संयुक्त राजस्थान में भी मत्स्य सघ की तरह प्रशासन मे प्रजामण्डल के प्रतिनिधियों के स्थान पर भारत सरकार द्वारा नियुक्त आइ. सी. एस. अधिकारियों का

---

1. डी. एल. पालीवाल-राजस्थान का इतिहास पृ. 368

वर्चस्व रहेगा। महाराणा मुत्सद्दी वर्ग और सर राममूर्ति के चक्कर में आ गये। उन्होंने तारीख 23 मार्च को मेवाड़ को सं. राजस्थान में शामिल करने के अपने इरादे की सूचना श्री मेनन को भेज दी। यह सब इतना गोपनीय ढंग से किया गया कि प्रजामण्डल को इसकी भनक तक नहीं पड़ी। सरकार ने ता० 23 मार्च के विशेष गजट में प्रजामण्डल से हुऐ समझौते के अनुसार प्रो. प्रेमनारायण माथुर के प्रधान मन्त्री पद पर एवं सर्व श्री मेहता, सुखाड़िया, कोठारी और चौंडिया की मन्त्री पद पर नियुक्ति की घोषणा कर दी। पर उक्त मन्त्रियों के शपथ दिलाने का प्रश्न यह कर कर टाला जाता रहा कि क्षत्रिय परिषद् द्वारा मन्त्रिमण्डल के लिये अपने प्रतिनिधियों के नामजद करने के बाद सभी मन्त्रियों को एक साथ शपथ दिलाई जायेगी। राज्य में विधान सभा के चुनाव भी चलते रहे।

ता० 4 अप्रेल को उदयपुर में विधान सभा के दो स्थानों के चुनाव थे। उनमें से एक पर प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री भूरेलाल बया उम्मीदवार थे। उनके विरुद्ध क्षत्रिय परिषद् की ओर से श्री गुमान सिंह चुनाव लड़ रहे थे। सारे नगर में चुनाव के माहौल से वातावरण तनाव पूर्ण बन गया था। उस दिन एक मतदान केन्द्र पर क्षत्रिय परिषद् के कार्यकर्ताओं ने परिषद् का केशरिया झण्डा लगा दिया। इस पर प्रजा मण्डल के समर्थकों ने उस मत-केन्द्र पर प्रजामण्डल का तिरंगा झण्डा[1] भी लगा दिया। इसको क्षत्रिय परिषद् के कार्यकर्ता बर्दाश्त नहीं कर सके। उन्होंने तिरगे झण्डे को उखाड़ कर निकट के कुऐ में डाल दिया। यह खबर सारे नगर में आग की तरह फैल गयी। मतदान केन्द्र के निकट भारी भीड़ एकत्रित हो गई। मतदान स्थगित कर देना पड़ा। झण्डा कुऐ से निकाला गया और उसे ट्रक पर पहरा कर एक जलूस के रूप में सारे शहर में घुमाया गया। जलूस मोहता पार्क पर जाकर एक विराट सार्वजनिक सभा में परिणित हो गया। सभा में प्रजामण्डल के नेताओं ने घटना की जांच कर अपराधियों को दण्ड देने की मांग की और साथ ही तिरंगे झण्डे के अपमान के विरोध में नगर में आम हड़ताल रखने की घोषणा की। इसी बीच प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री बया महाराणा से मिले और उनसे रोष भरे शब्दों में कहा कि उनका निकम्मा शासन राष्ट्रीय झण्डे के सम्मान की रक्षा करने में असमर्थ रहा है। अतः उन्हें चाहिये कि वे अविलम्ब ही सत्ता जन प्रतिनिधियों को सौंप दें। महाराणा हक्के-बक्के रह गये। उनसे कोई उत्तर नहीं बन पड़ा।

प्रजामण्डल की घोषणा के अनुसार ता. 5 अप्रेल को शहर में पूर्ण हड़ताल हो गई। नगर के मुख्य बाजारों में भीड़ जमा हो गई। तीसरे पहर क्षत्रिय परिषद् की एक जीप बड़े बजार में पहुंची। जीप में सवार नेताओं ने उपस्थित जनता से हड़ताल समाप्त करने की प्रार्थना की। जनता क्षत्रिय परिषद् द्वारा तिरंगे झण्डे का अपमान करने के कारण उससे सख्त नाराज थी। उसने 'क्षत्रिय परिषद् वापस जाओ' के नारे लगाये। पर क्षत्रिय परिषद् के नेता भाषण देते रहे। इससे सारा वातावरण उत्तेजनात्मक बन गया। सूचना मिलते ही मेवाड़ प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री भूरेलाल बया, मेवाड़ के मनोनीत प्रधानमन्त्री प्रो. प्रेमनारायण माथुर और प्रजामण्डल पत्रिका के सम्पादक

---

1. स्वतन्त्रता के पूर्व कांग्रेस/प्रजामण्डल का तिरंगा झण्डा था, जिसमें चर्खा अंकित था। इसे देश के आजाद होने तक राष्ट्रीय झण्डा माना जाता था। यही तिरंगा झण्डा स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्रीय झण्डा बन गया। फर्क इतना ही रहा कि इसमें चर्खे के बजाये अशोक चक्र अंकित कर दिया गया।

श्री बी. एल. पानगड़िया घटनास्थल पर पहुंचे। श्री बया और श्री माथुर ने भीड़ को शान्त रहने की अपील की और साथ ही क्षत्रिय परिषद् वालों को सलाह दी कि वे वहां से चले जाये। क्षत्रिय परिषद् की जीप धीरे-धीरे वहाँ से हटने लगी पर साथ ही परिषद् के नेता जीप से उत्तेजनात्मक और प्रजामण्डल विरोधी भाषण देते रहे। इससे जनता राष्ट्रीय नारे लगाते हुऐ जीप के पीछे-पीछे चलती रही। घंटाघर के पास आते-आते पुलिस ने अश्रु गैस छोड़ने या लाठी चार्ज करने के पूर्व ही बिना किसी चेतावनी के भीड़ पर गोली चला दी। फलस्वरूप दो विद्यार्थी सर्व श्री शान्तिलाल एवं आनन्दीलाल घटना स्थल पर ही शहीद हो गये। सर्व श्री गुलाब सिंह शक्तावत,[1] रोशनलाल चोरडिया तथा परशराम त्रिवेदी[2] गम्भीर रूप से घायल हुऐ एवं अन्य कई लोगों को चोटें आईं। अगले दिन प्रजामण्डल कार्यालय से शहीदों की शवयात्रा निकाली। शवयात्रा का यह जलूस उदयपुर के इतिहास में सबसे बड़ा था।

प्रजामण्डल ने राज्य में अविलम्ब पूर्ण उत्तरदायी सरकार की स्थापना और गोलीकाण्ड की जांच के लिये न्यायिक आयोग नियुक्त करने की मांग की। दिल्ली में उस समय कांग्रेस की हुकूमत थी। महाराणा घबरा गये। स्थिति का लाभ उठाकर राज्य के मुत्सद्दी वर्ग और अन्य स्वार्थी तत्व महाराणा को प्रजामण्डल के विरूद्ध भड़काने में सफल हो गये। उन्होंने महाराणा को सलाह दी कि प्रजामण्डल से मुक्ति पाने का एकमात्र हल मेवाड़ का शीघ्रातीशीघ्र संयुक्त राजस्थान में विलय कर देना है। महाराणा की ओर से इस दिशा में रियासती विभाग से चर्चा तो चल रही थी पर महाराणा इस सम्बन्ध में अन्तिम निश्चय नहीं कर पा रहे थे। मुत्सद्दियों की सलाह पर महाराणा का मेवाड़ को राजस्थान में विलय करने का निश्चय दृढ़ हो गया। उन्होने सर राममूर्ती, डा. मोहन सिंह महता और अन्य सलाहकारो को मेवाड़ के विलय की शर्तें अविलम्ब तय करने के लिये दिल्ली भेजा। रियासती विभाग तो इस प्रकार के सुनहरी अवसर की इन्तजार में ही था। वह तो केवल यह सावधानी बरत रहा था कि कहीं इस मामले में जल्दी करने से देश के अन्य राजाओं को यह भ्रम न हो जाये कि मेवाड़ को जोर जबरदस्ती अथवा किसी तरह के दबाव से विलय की ओर ढकेला जा रहा है। पर जब स्वयं महाराणा ही तेजी से मेवाड़ के विलय की ओर अग्रसर हो रहे थे तो रियासती विभाग द्वारा अवसर चूकने का प्रश्न ही नहीं था। वह तो मेवाड़ जैसी प्राचीनतम और ऐतिहासिक रियासत के विलय के लिये बड़ा से बड़ा मूल्य चुकाने को तैयार था। रियासती विभाग ने यह नीति बनाली थी कि किसी भी रियासत के शासक को 10 लाख रुपये वार्षिक से अधिक प्रिवीपर्स नहीं दी जायगी। महाराणा की ओर से 20 लाख रु. वार्षिक प्रिवीपर्स की मांग की गई। रियासती विभाग ने रास्ता ढूंढ निकाला। उसने महाराणा को 10 लाख रुपये वार्षिक प्रिवीपर्स, 5 लाख रुपये वार्षिक राजप्रमुख के पद का भत्ता और शेष 5 लाख रुपये वार्षिक मेवाड़ के राजवंश की परम्परा के अनुसार धार्मिक कृत्यों में खर्च के लिये देना स्वीकार कर लिया। उसने महाराणा को संयुक्त राजस्थान का आजन्म

---

1. श्री शक्तावत को गोली लगने के फलस्वरूप अपनी एक टांग से हाथ धोना पड़ा। ये बाद में सुखाड़िया मन्त्रिमण्डल के सदस्य रहे। मार्च 1985 में वे श्री हरिदेव जोशी के मन्त्रिमण्डल में शामिल किये गये।

2. श्री त्रिवेदी प्रमुख समाजवादी कार्यकर्ता रहे। वे इस समय जनता पार्टी के प्रमुख सदस्य हैं।

राजप्रमुख बनाना भी स्वीकार कर लिया। उस समय इतनी रिआयतें विलय होने वाली किसी अन्य रियासत के शासक को नहीं दी गयी थी। रियासती विभाग ने महाराणा को निजी सम्पत्ति के प्रश्न पर उदारतापूर्वक विचार करने का आश्वासन दिया। इसके अलावा उसने महाराणा की यह प्रार्थना भी स्वीकार कर ली कि ता. 5 अप्रेल को उदयपुर में हुए भीषण गोलीकाण्ड की न्यायिक जांच नहीं करवाई जायेगी। राज्य में सबसे बड़ा और सुविधाजनक नगर होने के कारण उदयपुर को संयुक्त राजस्थान की राजधानी तो बनाना ही था।

मेवाड़ का प्रतिनिधि मण्डल रियासती विभाग से मनचाही शर्तें मंजूर करवा कर दिल्ली से उदयपुर लौटा तो महाराणा ने राहत की सांस ली। पर महाराणा के इस निश्चय की सूचना महाराजा बीकानेर श्री शार्दुल सिंह को मिली तो उन्हें यह समझने में देर नहीं लगी कि यदि मेवाड़ जैसी प्राचीनतम और स्वावलम्बी रियासत का विलय हो गया तो बीकानेर और जोधपुर जैसी रियासतों का अस्तित्व बनाये रखना कठिन हो जायेगा। उन्होंने तुरन्त अपने प्रधान मन्त्री श्री जसवंत सिंह दाऊदसर को महाराणा के पास भेजा और कहलाया कि भारत में मेवाड़ ही एक ऐसी रियासत थी जो मुगलों के आगे नहीं झुकी। आज वही रियासत सबसे पहले कांग्रेस के सामने कैसे झुक रही है? पर महाराणा बहुत आगे बढ़ चुके थे। उन्होंने उत्तर दिया कि वे तो कांग्रेस के सम्मुख अपने आपको समर्पित कर ही रहे हैं, पर अन्य राजाओं का समर्पण भी अवश्यम्भावी है।[1] महाराजा शार्दुल सिंह और महाराणा भूपाल सिंह दोनों की भविष्यवाणी कुछ ही महिनों में सही साबित हुई। जो हो दाऊदसर खाली हाथ बीकानेर लौटे। महाराणा ने ता. 11 अप्रेल को विलय-पत्र पर हस्ताक्षर कर 13 सदी पुरानी मेवाड़ रियासत को माँ भारती को समर्पित कर दिया। इसे महाराणा का त्याग कहो या विवशता। पर इसमें सन्देह नहीं है कि जहाँ वी. पी. मेनन जैसे धुरन्धर प्रशासक और कूटनीतिज्ञ, बून्दी के महाराव बहादुर सिंह एवं मेवाड़ प्रजामण्डल जैसा सशक्त संगठन महाराणा को मेवाड़ के संयुक्त राजस्थान में विलय करने के लिये तैयार नहीं कर सका, वह चमत्कार मेवाड़ के मुत्सद्दियों ने आनन-फानन में कर दिखाया। मेवाड़-विलय में मुत्सद्दियों के रोल को लेकर राजस्थानी भाषा के आशु कवि स्व. श्री नाथूदान महियारिया के मुँह से उस समय हठात् ही निम्न शब्द निकल पड़े —

"झकमारी पहली किता,
अती न मारी और।
मिल मारो मेवाड़ ने,
मोहन और मनोर॥"

भावार्थ–मेवाड़ के साथ पहले भी कई लोगों ने बिताई है पर मोहन (डॉ. मोहनसिंह मेहता, वित्त मन्त्री) एवं मनोहर (राव मनोहरसिंह बेदला, गृहमन्त्री) ने जैसी मेवाड़ के साथ बिताई है, वैसे अन्य किसी ने नही।

कोटा में संयुक्त राजस्थान राज्य का ता. 25 मार्च को उद्घाटन होने वाला था, पर मेवाड़ के विलय के इरादे की सूचना रियासती विभाग को ता. 23 मार्च को मिल

1. रिचार्ड सेसन–"कांग्रेस पार्टी इन राजस्थान" पृ. 109

गयी थी। अतः श्री मेनन ने महाराव कोटा को सलाह दी की कि मेवाड़ के विलय के सम्बन्ध में निर्णय होने तक नये राज्य का उद्घाटन समारोह रोक दिया जाये। पर महाराव कोटा ने उत्तर दिया कि समारोह की सारी तैयारियाँ हो चुकी है। अतः समारोह निर्धारित तारीख को सम्पन्न करना होगा। रियासती विभाग ने महाराव कोटा का तर्क मान लिया। ता. 25 मार्च को भारत सरकार के मन्त्री श्री एन. वी. गाडगिल ने कोटा मे नये राज्य के उद्घाटन की रस्म अदा की। उन्होने महाराव कोटा को राजप्रमुख एवं प्रो. गोकुल लाल असावा को प्रधान मन्त्री के पद की शपथ दिलवाई। भारत सरकार की सलाह पर मन्त्रिमण्डल का निर्माण रोक दिया गया।

महाराणा द्वारा विलय-पत्र पर हस्ताक्षर करने के तुरन्त वाद रियासती विभाग ने राज्य के प्रधान मन्त्री पद के लिये मेवाड़ के तपस्वी नेता श्री माणिक्य लाल वर्मा को मनोनीत किया। उसने वर्मा जी को नवनिर्मित राज्य की भावी शासन व्यवस्था के सम्बन्ध में विचार-विमर्श करने हेतु दिल्ली बुलाया। उसने उनको बताया कि राज्य के राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं को प्रशासन का अनुभव नही है। अतः उनके मन्त्रिमण्डल को सलाह देने के लिये कुशल प्रशासकों की एक सलाहकार परिषद् बनायी जायेगी, जिसमे मेवाड़ के प्रधान-मन्त्री सर रामा मूर्ती, वित्त मन्त्री डॉ. मोहन सिह मेहता और राजपूताना के रीजनल कमिश्नर[1] श्री पी. एस. राव. होगे। रियासती विभाग ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि मन्त्रिमण्डल का कोई भी निर्णय तव तक क्रियान्वित नहीं किया जा सकेगा, जब तक कि सलाहकार परिषद् उक्त निर्णय पर अपनी मुहर नही लगा दे। लगभग इसी प्रकार की व्यवस्था रियासती विभाग मत्स्य संघ में कर चुका था। वर्मा जी सलाहकार परिषद् के वीटो अधिकार को स्वीकार करने को तैयार नहीं हुए। उन्होंने स्पष्ट रूप से रियासती विभाग को कह दिया कि जिस नौकरशाही के विरुद्ध वे आजन्म लड़े वे उसकी मुन्सरभात स्वीकार नही करेंगे। वर्मा जी सरदार पटेल से मिले और उनसे कहा "रियासती विभाग द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार मेरे लिये राजस्थान का राज्य का भार उठाना सम्भव नही है। मेवाड़ और अन्य रियासतों मे राजशाही समाप्त हो चुकी है और उसके साथ ही प्रजामण्डल की स्थापना का उद्देश्य पूर्ण हो चुका है। अव भारत सरकार जैसा चाहे इस नये राज्य का शासन चलाये। प्रजामण्डल शासन के वाहर रह कर ही जनता की सेवा करना पसन्द करेगा।"[2] सरदार स्वाभीमानी वर्मा जी की वात समझ गये। उन्होने सलाहकार परिषद् बनाने का निर्णय रद्द कर दिया। उन्होंने यह भी निश्चय किया कि संयुक्त राजस्थान के निर्माण के ऐतिहासिक महत्व को ध्यान में रखते हुए भारत के प्रधान मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू उक्त राज्य का उद्घाटन करेगे।

वर्मा जी ने उदयपुर लौटते ही सयुक्त राजस्थान के राजप्रमुख महाराणा भूपालसिंह जी से मन्त्रिमण्डल निर्माण सम्बन्धी चर्चा की। महाराणा ने वर्मा जी को मन्त्रिमण्डल में जागीरदारों को प्रतिनिधित्व देने का आग्रह किया। वर्मा जी ने राजप्रमुख का सुझाव मानने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। नये राज्य के वनते ही वैधानिक संकट पैदा हो गया। ता. 18 अप्रेल को प. नेहरू संयुक्त राजस्थान का उद्घाटन करने हेतु उदयपुर पहुँचे।

---

1. स्वतन्त्रता के वाद रियासतो के समूह की देख-रेख के लिये ए. जी. जी. के स्थान पर "रीजनल कमिश्नर" नियुक्त किये गये थे।
2. डॉ. एन. पानगड़िया-राजस्थान का इतिहास पृ. 321

उनका अपूर्व स्वागत किया गया। वर्मा जी ने महाराणा से हुई अपनी वार्ता का जिक्र करते हुए पं. नेहरू को कहा कि वे ऐसे किसी मन्त्रिमण्डल की सदारत करने को तैयार नहीं हैं जिसमें जागीरदारों का प्रतिनिधित्व हो। पं. नेहरू ने वर्मा जी की बात का सिद्धान्ततः समर्थन करते हुए कहा कि यद्यपि प्रधान मन्त्री को अपना मन्त्रिमण्डल बनाने में महाराणा और अन्य वर्गों से सलाह लेनी चाहिये तथापि इस सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय प्रधानमन्त्री का ही होगा। पं. नेहरू ने महाराणा के सलाहकार सर राममूर्ती को अपने विचारों से अवगत करा दिया। पं. नेहरू ने वर्मा जी को सलाह दी कि वे अपने पद की शपथ ले लें और मन्त्रिमण्डल बनाने में कोई कठिनाई पैदा हो तो वे और सर राममूर्ती दिल्ली जाकर रियासती विभाग से सलाह करलें। पं. नेहरू की सलाह पर राजप्रमुख के साथ ही साथ वर्मा जी ने भी प्रधानमन्त्री पद की शपथ ले ली।[1]

प्रधान मन्त्री का पद सम्भालने के तुरन्त बाद वर्मा जी दिल्ली गये और सरदार पटेल से मिले। सरदार पटेल को पं नेहरू वर्मा जी के रवैये से पहले ही वाकिफ कर चुके थे। सरदार ने महाराणा को एक पत्र द्वारा सलाह दी कि वे मन्त्रिमण्डल के निर्माण में वर्मा जी की सलाह स्वीकार कर लें। महाराणा ने वर्मा जी द्वारा दी गई सूची के अनुसार मन्त्रियों की नियुक्ति कर दी। ये मन्त्री थे सर्व श्री गोकुल लाल असावा (शाहपुरा), प्रेमनारायण माथुर, भूरे लाल बया और मोहन लाल सुखाड़िया[2] (उदयपुर), भोगी लाल पंड्या (डूंगरपुर), अभिन्न हरि (कोटा) और बृज सुन्दर शर्मा (बून्दी)। मन्त्रियों ने ता. 28 अप्रेल को अपने पद की शपथ ली। वर्मा जी ने उसी दिन मन्त्रियों में विभागों का वितरण कर दिया। कहने कि आवश्यकता नहीं कि यह मन्त्रिमण्डल विशुद्ध प्रजा-मण्डलीय था।

वर्मा जी ने अपने नवजात प्रशासकीय जीवन की पहली बाधा पार की ही थी कि उनके सम्मुख एक और समस्या आ खड़ी हुई। ता. 29 अप्रेल को श्री वी. पी. मेनन उदयपुर आये। उन्होंने बिना वर्मा जी को विश्वास में लिये राजप्रमुख की यह बात मान ली कि मेवाड़ के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री सर रामा मूर्ती को राजप्रमुख का स्वयं का एवं संयुक्त राजस्थान सरकार का सलाहकार नियुक्त कर दिया जाय। महाराणा ने तुरन्त ही सर रामा मूर्ति की नियुक्ति की आज्ञा प्रसारित कर दी। सर रामा मूर्ति ने यह कहना शुरू कर दिया कि राज प्रमुख के सलाहकार के नाते वे मन्त्रिमण्डल के ऊपर हैं। प्रधान-मन्त्री वर्मा जी ने अपने ता. 13 मई के पत्र में सर रामामूर्ति को सूचित कर दिया कि जो अधिकारी सरकार का सलाहकार होगा, वह तो मन्त्रिमण्डल के अन्तर्गत रह कर ही काम करेगा। राजप्रमुख को राज्य सम्बन्धी कार्यो के लिये सलाह देने की जिम्मेदारी मन्त्रिमण्डल की है। यदि सलाहकार जैसी एक और एजेन्सी राजप्रमुख को सलाह देना शुरु कर देगी तो राज्य में दोहरा शासन शुरु हो जायेगा, जो जनतन्त्र के सर्व सम्मत सिद्धान्तों के विपरीत होगा। उन्होंने पत्र में सर रामामूर्ति से यह भी अनुरोध किया कि वे प्रधानमन्त्री के लिये आवंटित निवास स्थान को खाली कर दें, क्योंकि उनके (सर रामा-मूर्ति) लिये दूसरा निवास स्थान आवंटित कर दिया गया है।[3]

---

1. सरदार पटेल्स कोरस्पोन्डेन्स, जिल्द–7 पृ. 396
2. श्री मोहनलाल सुखाड़िया वृहद राजस्थान में सन् 1952 से व्यास मन्त्रिमण्डल में शामिल हुए। वे सन् 1954 से सन् 1971 तक राजस्थान के मुख्यमन्त्री रहे जो अपने आप में एक कीर्तिमान है।
3. सरदार पटेल्स कोरस्पोन्डेन्स, जिल्द–7 पृ. 400-401

सर रामामूर्ति ने वर्मा जी का उक्त पत्र राजप्रमुख के सम्मुख प्रस्तुत किया तो वे बड़े खिन्न हुए। उन्होंने सर रामामूर्ति की नियुक्ति के सम्बन्ध में वर्मा जी द्वारा किये गये ऐतराज में अपना स्वयं का अपमान समझा। उन्होंने ता. 15 मई को सरदार पटेल को एक पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने कहा "आप से अधिक और कोई नहीं जानता कि मैंने अपनी रियासत का संयुक्त राजस्थान में विलय अपनी स्वयं की तरफ से पहल कर पूरी तरह स्वेच्छा से किया। मुझे विश्वास है कि आप सहमत होंगे कि मेरे साथ जो व्यवहार किया जा रहा है, वह मेरे द्वारा प्रदर्शित सद्भावना और सहयोग के अनुरूप नहीं है..........। मैं आपसे हृदय से निवेदन करूंगा कि सर रामामूर्ति की सलाहकार के पद पर की गयी नियुक्ति में किसी तरह दखल नहीं होना चाहिये।"[1]

सरदार पटेल ने अविलम्ब ही वर्मा जी को दिल्ली बुलाया। उन्होंने उनसे सर-रामामूर्ति को लिखे गये पत्र को अविलम्ब वापस लेने की सलाह दी। वर्मा जी ने सरदार के आदेशानुसार अपना पत्र वापस ले लिया। इसके बाद ता. 30 मई को सरदार ने महाराणा को लिखा कि "श्री वर्मा ने मेरी सलाह मान कर अपना ता. 15 मई का पत्र वापस ले लिया है। पर मेरा विश्वास है कि प्रधानमन्त्री के निवास स्थान को लेकर सर रामा मूर्ति अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न नहीं बना सकते। आप उन्हें इस सम्बन्ध में मन्त्रिमण्डल के निर्णय को स्वीकार करने की सलाह दें।" सरदार ने अपने पत्र में आगे लिखा कि बार-बार इस प्रकार की घटनायें होना बताता है कि सर रामा मूर्ति अपने आपको देश के बदले हुए हालात में नहीं ढ़ाल पाये हैं। कृपया आप सर रामामूर्ति को बता दें कि वे अपने तौर-तरीकों में परिवर्तन करें, अन्यथा यह स्पष्ट सम्भावना है कि उनकी गलतियों के कारण आपके और मन्त्रिमण्डल के सम्बन्ध बिगड़ जाएँ और खामोख्वाह आपकी प्रतिष्ठा और पद को आंच पहुंचे।"[2] सरदार पटेल द्वारा महाराणा को लिखे गये उक्त पत्र के बाद जब तक संयुक्त राजस्थान रहा न तो महाराणा ने और न सर रामामूर्ति ने ही राज्य के मन्त्रिमण्डल के काम में कभी दखल दिया। सरदार पटेल दूरदर्शी थे। वे जानते थे कि इस प्रकार के विवाद में उन्होंने जन प्रतिनिधियों का समर्थन नहीं किया तो इस नवजात जनतन्त्र पर सामन्ती तत्व एवं नौकर-शाही हावी हो जायेगी और देश में जनतन्त्र की जड़े मजबूत नहीं हो पायेंगी।

रियासती विभाग रियासतों के विलय से बने हर नये राज्य में एक या दो आई. सी. एस. अधिकारी मुख्य सचिव या सलाहकार के रूप में भेजा करता था। वर्मा जी ने एक स्थानीय अधिकारी श्री बी. एस. मेहता को संयुक्त राजस्थान सरकार का मुख्य सचिव नियुक्त कर दिया। रियासती विभाग ने वर्मा जी की इस कार्यवाही को पसन्द नहीं किया। उसने कुछ ही समय बाद एक वरिष्ठ आई. सी. एस. अधिकारी, एल. सी. जैन को संयुक्त राजस्थान का मुख्य सचिव नियुक्त कर उदयपुर भेज दिया। वह अधिकारी कई दिनों तक अपने सैलून में उदयपुर के रेल्वे स्टेशन पर ही पड़ा रहा। उसे मुख्य सचिव के पद का चार्ज नहीं दिया गया। सरदार पटेल ने वर्मा जी को दिल्ली बुलाया। वर्मा जी ने सरदार को विनम्रता पूर्वक कहा कि उनकी इच्छा के विपरीत संयुक्त राजस्थान पर किसी आई. सी. एस. अधिकारी को थोपा गया तो रियासती विभाग को अन्य किसी

1. सरदार पटेल कॉरसपोन्डेन्स, जिल्द—7 पृ. 398–399,
2. सरदार पटेल्स कॉरसपोन्डेन्स जिल्द-7 पृ. सं. 401—402

अधीन मन्त्री की तलाश करनी होगी। उधर सरकार ने इस बार भी वर्मा जी की बात रख ली। श्री जैन को उदयपुर से अन्यत्र जाना पड़ा। यहाँ यह समझना भूल होगा कि वर्मा जी ने मुख्य सचिव की नियुक्ति के प्रश्न को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था। उनका राज्य के बाहर के अधिकारी को चीफ सेक्रेटरी के पद पर स्वीकार नहीं करने का कारण उनकी यह मान्यता थी कि प्राचीन परम्पराओं से ग्रसित राजस्थान की रियासतों की परिस्थितियों और समस्याओं को स्थानीय अधिकारी ही भली-भाँति से निपटा सकते हैं। वर्मा जी का यह निर्णय भविष्य की कसौटी पर खरा उतरा। सरकार श्री वी. एन. मेहता एवं स्थानीय अधिकारियों के अपूर्व सहयोग से जटिल से जटिल समस्याओं का समाधान करने में सफल रही। सरकार के सम्मुख छोटी-बड़ी 10 रियासतों और उनकी राज्य सेवाओं के एकीकरण की पेचीदा समस्या थी, परन्तु उसने कुछ ही महीनों में हाईकोर्ट, न्यायालयों, विभागों, जिलों, उप-जिलों और तहसीलों का पुनर्गठन कर दिया। उसने राज्य सेवाओं के एकीकरण का कार्य मुस्तैदी और बिना भेद-भाव के इस तरह सम्पन्न किया कि किसी भूतपूर्व रियासत में कर्मचारी वर्ग या किसी भी कर्मचारी विशेष को असन्तोष व्यक्त करने की नौबत ही नहीं आई।

क्षत्रिय परिषद् जैसे सामन्ती और प्रतिगामी संगठनों द्वारा राजाओं के राज्य का पुनर्स्थापन करने के लिये समय-समय पर आदिवासी एवं अन्य अशिक्षित वर्गों को भड़काते रहने के बावजूद सरकार ने राज्य भर में बिना एक भी गोली चले न्याय और व्यवस्था अविरल रूप से कायम रखी। उसने राज्य में होने वाली राहजनियों और डकैतियों पर पूर्ण नियन्त्रण कर जनता को राहत पहुँचाई। नयी सरकार का दबदबा ऐसा बना कि वर्षों पूर्व चोरी और डकैती में गई हजारों गायें, भैंसे, और बैल पुनः अपने पूर्व मालिकों के पास पहुँच गये। एक बार फिर ग्रामीण लोग अपने घरों के ताला लगाये बिना अपने खेतों और खलिहानों में जाने लगे।

सदियों से राजस्थान सामन्तवादी व्यवस्था का मुख्य गढ़ रहा है। यहाँ पर जागीरदारी प्रथा उतनी ही पुरानी थी जितने कि यहाँ के राजवंश। यह एक संयोग मात्र नहीं है कि इस व्यवस्था के विरुद्ध देश का सर्वप्रथम अहिंसक आन्दोलन राजस्थान प्रदेश के बिजोलिया क्षेत्र में हुआ। वर्मा जी इस आन्दोलन के सूत्र और प्राण दोनों ही थे। अतः यह स्वाभाविक था कि सत्ता में आने पर वे लाखों किसानों के कन्धे से जागीरी जुए को उठा कर फेंकते। परन्तु संयुक्त राजस्थान मन्त्रिमण्डल ने जागीरदारी प्रथा को समाप्त करने का निर्णय लिया तो न केवल जागीरदारों में वरन् रियासती विभाग में भी खलबली मच गयी। रियासती विभाग का कहना था कि जागीर-उन्मूलन सारे रियासती भारत की समस्या है। उसकी मान्यता थी कि सं. राजस्थान की नवजात सरकार के सामने पहले से ही अनेक समस्याएँ हैं। अतः उसे जागीरदारी उन्मूलन जैसी पेचीदा समस्याओं को हाथ में लेकर अपने आपको जोखिम में नहीं डालना चाहिये। वर्मा जी ने विनम्र शब्दों में भारत सरकार को उत्तर दिया कि हमारे संगठन ने वर्षों पूर्व जो ऐतिहासिक वादा राजस्थान की सदियों से पीड़ित गरीब जनता से किया है, उसे पूरा किये बिना हम चैन की नींद नहीं सो सकते। उन्होंने सरदार पटेल को आश्वस्त कर दिया कि सं. राजस्थान में न्याय और व्यवस्था पर नियन्त्रण रखते हुये जागीरें पुनर्ग्रहण कर ली जायेंगी। वर्मा जी ने कानून के एक ही झटके से शक्तिशाली और सुदृढ़ सामन्ती व्यवस्था को ताश के पत्तों की तरह ढाह

दिया। एक दो जागीरदारों ने प्रतिरोध करने का प्रयत्न किया तो उन्हें सख्ती से दबा दिया। राज्य में रक्तहीन क्रान्ति हो गयी। सरदार पटेल ने वर्मा जी की दाद दी।

संयुक्त राजस्थान का मन्त्रिमण्डल केवल 11 माह रहा। पर इस अल्प अवधि में उसने वह कर दिखाया जो किसी प्रान्त या राज्य की सरकारें 11 वर्षों में भी नहीं कर पाईं। इस आश्चर्यजनक सफलता का श्रेय वर्मा जी के नेतृत्व और उनके तपे-तपाये सहयोगियों को जाता हैं, जिन्होंने परिश्रम, लग्न और दृढ़ निश्चय के साथ राजस्थान की सदियों से शोषित जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व को निभाया।

अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रान्तीय सभा 20 जनवरी, 1848 को एक प्रस्ताव द्वारा राजस्थान की सभी रियासतों को मिलाकर बृहद् राजस्थान राज्य के निर्माण की मांग कर चुकी थी। परन्तु भारत सरकार के सामने उक्त प्रस्ताव को क्रियान्वित करने में कई व्यवहारिक कठिनाइयाँ थीं। प्रदेश में जोधपुर, जयपुर और बीकानेर जैसी रियासतें थीं, जो भारत सरकार द्वारा निर्धारित माप दण्ड के अनुसार अपना पृथक अस्तित्व रख सकती थीं। स्वतन्त्र भारत के प्रथम गर्वनर जनरल लार्ड माउन्टबेटन 7 जनवरी, 1948 को भारत सरकार की ओर से राजाओं को यह आश्वासन दे चुके थे कि विलय का सिद्धान्त बड़ी रियासतों पर लागू नहीं होगा।[1] स्वयं सरदार पटेल ने 20 फरवरी, 1948 को अपने पत्र में बीकानेर के महाराजा को यह आश्वासन दिया था कि बड़ी रियासतों का विलय तभी किया जायेगा, जबकि वहाँ की जनता और शासक दोनों विलय के पक्ष में होंगे।[2] उन्ही दिनों राजस्थान के विभिन्न भागों में सामन्त वर्ग सशस्त्र रेलियां निकाल कर अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर रहा था। इस वर्ग को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से राजाओं का समर्थन प्राप्त था। अतः भारत सरकार के जिम्मेदार हलकों में यह धारणा बनती जा रही थी कि राजस्थान की रियासतों के एकीकरण से सामन्तवादी शक्तियो को संगठित होने का अवसर मिलेगा। इन परिस्थितियों में भारत सरकार ने राजस्थान की रियासतों के एकीकरण की दिशा में फूंक-फूंक कर पैर रखने की नीति अपनाई।

मार्च 1948 में मत्स्य यूनियन और अप्रेल 1948 में संयुक्त राजस्थान का निर्माण हो चुका था। मई, 1948 में सिरोही राज्य का प्रबन्ध बम्बई सरकार को सौंपा जा चुका था। जोधपुर, बीकानेर और जैसलमेर राज्यों की सीमाएँ पाकिस्तान से मिली हुई थीं, जहाँ से सदैव आक्रमण का भय बना रहता था। फिर ये रियासतें थार के विशाल रेगिस्तान का अंग थीं, जिसका विकास करना उक्त राज्यों के आर्थिक सामर्थ्य के बाहर था। इन सब कारणों से रियासती विभाग ने उक्त तीनों रियासतों को काठियावाड़ की रियासतों के साथ मिला कर एक केन्द्र शासित राज्य बनाने की योजना बनाई।[4] मेनन के अनुसार इस योजना के मित्र कम थे और शत्रु अनेक। मेनन के अनुसार इस योजना का स्वयं राजस्थान के नेताओं ने राजस्थान की विभिन्न रियासतों को एक इकाई में बांधने के बजाय

---

1. वी. पी. मेनन—'दी स्टोरी ऑफ दी इंटिग्रेशन ऑफ दी इन्डियन स्टेट्स-पृ. 90
2. डॉ. करणीसिंह, "दी रिलेशन्स ऑफ दी हाउस आय बीकानेर विद सेन्ट्रलपावर्स" पृ. 337
3. सरदार पटेल्स कॉरसपोन्डेन्स जिल्द 7, पृ, 408-411
4. वी. पी. मेनन—दी स्टोरी ऑफ दी इंटिग्रेशन ऑफ दी इण्डियन स्टेट्स पृ. 263

अनेक इकाइयों में बांटने का कड़ा विरोध किया। फलतः रियासती विभाग को सखेद अपनी योजना त्याग देनी पड़ी।

मई, 1948 में मध्य भारत यूनियन का निर्माण हुआ, जिसमें इन्दौर और ग्वालियर जैसी बड़ी रियासतें शामिल हो चुकी थीं। देश की प्राचीनतम और ऐतिहासिक रियासत मेवाड़ स्वतः ही कुछ समय पूर्व संयुक्त राजस्थान में शामिल हो गयी थी। इसी बीच समाजवादी दल ने वृहद राजस्थान के निर्माण का नारा बुलन्द किया। उसने अखिल भारतीय स्तर पर "राजस्थान आन्दोलन समिति" की स्थापना की। प्रसिद्ध समाजवादी नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने 9 नवम्बर को उदयपुर की एक महत्ती सभा में शीघ्रातिशीघ्र वृहद राजस्थान के निर्माण की मांग की। राजस्थान आन्दोलन समिति ने दिल्ली में हुई 1 दिसम्बर की बैठक में एक प्रस्ताव स्वीकार किया, जिसमें कहा गया कि सारे राजपूताना प्रदेश की रियासतों और अजमेर के विलय द्वारा अविलम्ब वृहद राजस्थान का निर्माण करना चाहिये। समिति के अध्यक्ष श्री राम मनोहर लोहिया ने अपने एक बयान में जयपुर, बीकानेर, जैसलमेर और मत्स्य को संयुक्त राजस्थान में मिला कर भारतीय संघ की एक सुदृढ़ इकाई में परिवर्तित करने की मांग की।[1] इन घटनाओं से वृहद राजस्थान के निर्माण की मांग को बल मिला। भारत सरकार के लिये इस प्रश्न को आगे टालना कठिन हो गया।

रियासती विभाग के सचिव श्री वी. पी. मेनन ने सम्बन्धित राजाओं से बातचीत करने के पूर्व जयपुर के दीवान सर वी. टी. कृष्णमाचारी और बीकानेर के दीवान श्री सी. एस. वैंकटाचारी से वृहद् राजस्थान के निर्माण के सम्बन्ध में विचार विनिमय किया। इस बैठक में सर वी. टी. ने राजपूताना की सभी रियासतों की एक ही इकाई बनाने के सुझाव का विरोध किया। उन्होंने कहा कि ऐसा कर हम पूर्वी पंजाब में सिक्खों की तरह राजस्थान में राजपूतों की "हैजेमनी" (प्रभुत्व) कायम कर देंगे जो कि देश के हित में नहीं होगा। उन्होंने सुझाव दिया कि राजपूताना की रियासतों को तीन इकाईयों में विभाजित कर दिया जाना चाहिये। पहली इकाई "संयुक्त राजस्थान" यथावत कायम रहे। दूसरी इकाई, जयपुर, अलवर और करौली के विलय से बनाई जाय। तीसरी इकाई जोधपुर, बीकानेर और जैसलमेर के विलय द्वारा पश्चिमी राजपूताना यूनियन के नाम से बनाई जाय। सर वी. टी. का सुझाव था कि भरतपुर और धौलपुर की रियासतों को पड़ौस के प्रान्त उत्तरप्रदेश में मिला दिया जाय। सर वी. टी. के सुझाव महत्वपूर्ण और वजनदार थे। परन्तु वी. पी. मेनन और श्री सी. एस. वैंकटाचारी का मत था कि प्रदेश में व्याप्त जन भावना को देखते हुये राजपूताना की रियासतों की एक ही इकाई बनाने के अलावा कोई रास्ता नहीं है। उन्होंने कहा कि आज नहीं तो कल समाजवादियों के आन्दोलन से मजबूर होकर वृहद राजस्थान राज्य का निर्माण करना होगा। फिर यह पहल समाजवादियों के हाथ में क्यों जाय ?[2]

दिसम्बर, 1948 के प्रथम सप्ताह में सरदार पटेल की सहमति से श्री वी. पी. मेनन ने जोधपुर, बीकानेर और जयपुर के राजाओं से वृहद राजस्थान के निर्माण के लिये

---

1. सरदार पटेल्स कारसपोंडेन्स, जिल्द 7, पृ 422-428
2. " " पृ. 428-430

विचार विनिमय शुरू किया। तीनों शासक अपनी-अपनी रियासतों को पृथक इकाइयों के रूप मे रखने के इच्छुक थे[1] महाराजा बीकानेर ने तो अपनी एक टिप्पणी में विचार प्रकट करते हुये यहाँ तक कहा कि बीकानेर एक पृथक इकाई के रूप में रहने का हकदार है, तो फिर उस पर विलय के लिये दबाव क्यों ?[2] अन्ततोगत्वा कई बैठकों के बाद मेनन उक्त राजाओं को विलय के लिये मनवाने में सफल हो गये। जैसलमेर का शासन प्रबन्ध पहले ही भारत सरकार के हाथ में था। ता. 14 जनवरी, 1949 को सरदार पटेल ने उदयपुर में एक विशाल सार्वजनिक सभा में घोषणा की कि जोधपुर, जयपुर और बीकानेर के महाराजाओं ने अपनी-अपनी रियासतों का राजस्थान में विलय करना स्वीकार कर लिया है और इस प्रकार महाराणा प्रताप का वृहद राजस्थान बनाने का स्वप्न निकट भविष्य में पूरा होगा। महान् सरदार की इस ऐतिहासिक घोषणा का उपस्थित जन समुदाय ने तुमुल करतल ध्वनि से स्वागत किया।

शीघ्र ही वृहद राजस्थान की भावी शासन व्यवस्था के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न पैदा हुये। राज्य का राज प्रमुख कौन हो ? मन्त्रिमण्डल व प्रशासकीय स्वरूप क्या हो एवं राजधानी कहां बने ? इन प्रश्नों का उत्तर ढूंढने के लिये श्री वी. पी. मेनन ने ता. 3 फरवरी, 1949 को सर्वश्री गोकुल भाई भट्ट, अध्यक्ष प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी, माणिक्य लाल वर्मा प्रधान मन्त्री, संयुक्त राजस्थान उदयपुर, जयनारायण व्यास प्रधान मन्त्री जोधपुर एवं हीरालाल शास्त्री मुख्य सचिव (प्रधान मन्त्री) जयपुर की एक बैठक दिल्ली में बुलाई। इस बैठक मे सर्व सम्मति से निर्णय लिया गया कि जयपुर के महाराजा सवाई मानसिंह को जीवन पर्यन्त राजप्रमुख बनाया जाये एवं उदयपुर के प्राचीन राजवंश की मान मर्यादा को ध्यान में रखते हुए महाराणा भूपाल सिंह को महाराज-प्रमुख का सम्मानीय पद दिया जाये।

बैठक में निर्णय लिया गया कि राज्य सरकार के महत्वपूर्ण विभागों में दो या तीन आई. सी. एस. अधिकारियो को सलाहकार के रूप में नियुक्त किया जाये। बैठक में यह भी निर्णय लिया गया कि सलाहकारों और मन्त्रिमण्डल के बीच किसी मसले पर मतभेद होने पर उक्त मसले को अन्तिम निर्णय के लिये भारत सरकार को सौंप दिया जाये। इस प्रकार सलाहकारों को मन्त्रिमण्डल पर "वीटो" अधिकार दे दिया गया।[3]

बैठक में राजधानी का मसला सरदार वल्लभ भाई पटेल पर छोड़ दिया गया। सरदार पटेल ने राजधानी के चुनाव के लिये विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त की। इस समिति ने जयपुर को राजस्थान की राजधानी बनाने की सिफारिश की। समिति ने राजस्थान के अन्य बड़े नगरों का महत्व बनाये रखने के लिये कुछ राज्यस्तर के सरकारी कार्यालय उक्त नगरों में रखने की सलाह दी। सरदार पटेल ने समिति की सिफारिश स्वीकार कर ली। फलस्वरूप जयपुर राजस्थान की राजधानी घोषित कर दी गई। हाईकोर्ट जोधपुर में, शिक्षा विभाग बीकानेर में, खनिज विभाग उदयपुर में एवं कृषि विभाग भरतपुर में रखने का निर्णय लिया गया।

---

1. वी. पी. मेनन—दी स्टोरी ग्राफ दी इन्टीग्रेशन आफ दी इण्डियन स्टेट्स पृ. 112—113
2. डा. करणी सिंह—दी रिलेशन्स आफ दी हाऊस आफ बीकानेर विद सेन्ट्रलपावर्स पृ. 340
3. सरदार पटेल्स कारसपोन्डेन्स, जिल्द—7 पृ. 440-442

राजस्थान के प्रधान मन्त्री की नियुक्ति का प्रश्न अत्यधिक उलझन भरा सिद्ध हुआ। इस पद के लिए जयपुर के मुख्य सचिव (प्रधान मन्त्री) श्री हीरालाल शास्त्री उम्मीदवार थे। वे प्रदेश-कांग्रेस के अध्यक्ष श्री गोकुल भाई भट्ट के सहयोग से रियासती विभागों को आश्वस्त कर चुके थे कि वे ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जो राजस्थान का प्रशासन सुचारु रूप से चला सकते हैं। वे जयपुर राज्य में अपनी प्रशासकीय योग्यता की धाक जमा चुके थे।

दूसरी ओर राजस्थान प्रदेश कांग्रेस के आम कार्यकर्ता श्री जय नारायण व्यास को प्रधान मन्त्री बनाने के पक्ष में थे। परन्तु रियासती विभाग व्यास जी को यह भार सौंपना नहीं चाहता था, बल्कि वह तो व्यास जी और उनके साथियों के विरुद्ध कतिपय आरोपों को लेकर मुकदमे चलाने की तैयारी कर रहा था। श्री माणिक्य लाल वर्मा मुख्य मन्त्री की दौड़ से यह कहकर अलग हो गये थे कि वे भविष्य में कोई सरकारी पद ग्रहण नहीं करेंगे। इन परिस्थितियों में व्यास जी और वर्मा जी ने प्रधान मन्त्री के पद के लिये श्री गोकुलभाई भट्ट के नाम का सुझाव रखा। परन्तु रियासती विभाग ने स्पष्ट कर दिया कि राज्य में विधान सभा की अदम मौजूदगी में राजस्थान के प्रशासन की जिम्मेदारी भारत सरकार पर है और वह श्री हीरालाल शास्त्री को ही प्रधान मन्त्री के पद के लिये उपयुक्त समझती है। फरवरी, 1947 में राजस्थान प्रदेश कांग्रेस समिति की दिल्ली में बैठक हुई जिसमें रियासती विभाग के निर्णय का डट कर विरोध हुआ। पर प्रदेश कांग्रेस का नेतृत्व किसी तरह इसबैठक में शास्त्री जी को प्रधान मन्त्री बनाने संबंधी प्रस्ताव स्वीकार कराने में सफल होगया।[1] यह एक विडम्बना ही थी कि रियासती विभाग को राजाओं को 'विलय-पत्र' परहस्ताक्षर करवाने में जितना पसीना बहाना पड़ा उससे कहीं अधिक पसीना उसे शास्त्री जी को प्रधान मन्त्री बनाने के लिये बहाना पड़ा।

वृहद राजस्थान की अभी विधिवत स्थापना भी नहीं हुई थी कि उसे राजनैतिक संकट से ही नहीं "देवी" संकट से भी गुजरना पड़ा। महाराजा जयपुर वृहद राजस्थान के निर्माण सम्बन्धी वार्ता के दौर में भाग लेने के लिये दिल्ली प्रस्थान करने वाले थे कि वे एक भयंकर वायुयान दुर्घटना में फंस गये। उनका वायुयान जलकर भस्म हो गया। वे स्वयं गम्भीर रूप से घायल हो गये। फलस्वरूप वार्ता कुछ दिन के लिये स्थगित रही और वृहद् राजस्थान के निर्माण में विलम्ब हुआ। अन्ततोगत्वा जब वृहद् राजस्थान के निर्माण और उद्घाटन का निर्णय हो गया तो सरदार पटेल ता. 29 मार्च, 1948 की शाम को एक विशेष वायुयान द्वारा जयपुर के लिये रवाना हुये। वायुयान में खराबी हो गयी। उसे जयपुर से कुछ किलोमीटर दूर एक शुष्क नदी के पेटे में उतरना पड़ा। चालक की होशियारी से संभावित गम्भीर दुर्घटना बच गई। परन्तु वायुयान का सम्बन्ध शेष भारत से कट गया। महाराजा जयपुर वी. पी. मेनन और राजस्थान के नेता जयपुर में सरदार पटेल के आगमन का इन्तजार कर रहे थे। पर निर्धारित समय पर जब वायुयान हवाई अड्डे पर नहीं उतरा तो सभी लोग चिंतित हो गये। थोड़ी ही समय में भारत भर में चिन्ता की लहर फैल गई। उधर सरदार पटेल और उनका दल किसी तरह रात्रि के लगभग 10.00

---

1. राजस्थान प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का बुलेटिन वर्ष—2 पत्रांक—4

बजे जयपुर पहुंचा। उसी समय आकाशवाणी के एक विशेष बुलेटिन द्वारा सरदार पटेल के सुरक्षित जयपुर पहुंचने का संवाद प्रसारित किया तो सारे देश ने राहत की सांस ली।

ये सब राजनैतिक और देवीय संकट चल ही रहे थे कि ता. 30 मार्च, 1948 को नये राज्य के उद्‌घाटन के शुभ मुहूर्त के समय प्रशासकीय लापरवाही से एक ऐसी घटना घटी जिसने राजस्थान के नेताओं में शास्त्री जी की प्रधान मन्त्री पद पर नियुक्ति को लेकर व्याप्त कटुता में और जहर घोल दिया।

इस ऐतिहासिक अवसर पर जिन्हें आमन्त्रित किया गया उनमें जोधपुर के प्रधान मन्त्री श्री जय नारायण व्यास और राजस्थान के प्रधान मन्त्री श्री माणिक्य लाल वर्मा भी थे। जब ये नेता समारोह-स्थल पर पहुंचे तो पाया कि उनके बैठने की व्यवस्था स्थानीय सामन्तों और अधिकारियों के भी पीछे की गयी है। फलतः अन्य रियासतों से आये हुए सभी नेता और कार्यकर्ता समारोह स्थल को छोड़कर अपने अपने निवास स्थान को लौट गये। निश्चय ही देश की आजादी के लिये अपना सर्वस्व बलिदान करने वाले स्वतन्त्रता सैनिकों के लिये यह व्यवस्था अपमानजनक और सामान्य शिष्टाचार के विरूद्ध थी। समारोह के जिम्मेदार अधिकारी अथवा स्थानीय राजनेताओं ने समय पर इस भयंकर भूल के परिमार्जन का कोई प्रयत्न नहीं किया। उल्टा बहिर्गमन करने वाले नेताओं पर ही दोषारोपण किया गया कि उनका व्यवहार जिम्मेदाराना नहीं था। इस घटना की परिणिति निकट भविष्य में ही राज्य के प्रधान मन्त्री श्री शास्त्री और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्री गोकुल भाई भट्ट के विरूद्ध प्रांन्तीय कांग्रेस कमेटीद्वारा अविश्वास प्रस्ताव स्वीकार करने में हुई।

श्री शास्त्री को अपना मन्त्रिमण्डल बनाने में न तो श्री जय नारायण व्यास और न ही श्री माणिक्य लाल वर्मा से सहयोग मिला। श्री शास्त्री ने ता. 7 अप्रेल, 1949 को अपना मन्त्रिमण्डल बनाया, जिसमें सर्वश्री सिद्धराज ढ्डढ़ा (जयपुर), प्रेमनारायण माथुर और भूरेलाल बया (उदयपुर) फूलचन्द बापणा, नरसिंह कछवाहा और रावराजा हणूतसिंह (जोधपुर), रघुवर दयाल गोयल (बीकानेर), और वेदपाल त्यागी (कोटा) शामिल किये गये। यद्यपि मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्य चरित्रवान और योग्य थे, तथापि इनकी जड़ें कांग्रेस संगठन में गहरी नहीं थी। इसका खमीजा श्री शास्त्री को उठाना पड़ा। रियासती विभाग के वरदहस्त के बावजूद उन्हें 21 माह में अपने पद से त्याग-पत्र देना पड़ा। पर यह एक सर्वथा अलग कहानी है। यहाँ यही कहना पर्याप्त होगा कि अन्तोगत्वा वृहद् राजस्थान बन गया।

राजस्थान की विभिन्न रियासतों के विलय के साथ ही साथ राजस्थान में सदियों पुरानी राजशाही समाप्त हो गयी। मेवाड़ के गुहिलौत, जैसलमेर के भाटी, जयपुर के कछवाहा और बूंदी के हाडा चौहान संसार के प्राचीनतम राजवंशों में से थे। राजशाही के अन्तिम चिन्ह के रूप में अब केवल मात्र राजप्रमुख के नवसृजित पद रह गये। ये पद संयुक्त राजस्थान और मत्स्य संघ में प्रान्तों के राज्यपालों (गवर्नर) के समकक्ष थे। यह एक ऐसी रक्तहीन क्रान्ति थी जिसका उदाहरण ससार के इतिहास में ढूंढने पर भी नहीं मिलेगा।

मत्स्य संघ का विलय

अलवर, भरतपुर, धौलपुर और करौली की रियासतों के एकीकरण द्वारा 18 मार्च 1948 को मत्स्य संघ बनाया गया था। अब जबकि जयपुर, जोधपुर और बीकानेर की

रियासतें राजस्थान में मिल गयी तो मत्स्य संघ को अलग इकाई के रूप में रखने का कोई अर्थ नहीं था। स्वयं रियासती विभाग ने वृहद् राजस्थान के निर्माण के समय इस समस्या पर विचार किया था। अलवर और करौली का जनमत राजस्थान में मिलने के पक्ष में था, परन्तु भरतपुर और धौलपुर की स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं थी। इन दोनों रियासतों की जनता की राय जानने के लिये सरदार पटेल ने डॉ. शंकरराव देव की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की। इस समिति ने छानबीन के बाद राय दी कि उक्त रियासतों की अधिकतर जनता राजस्थान में मिलने के पक्ष में है। भारत सरकार ने समिति की सिफारिश को ध्यान में रखते हुए मत्स्य संघ की चारों इकाईयों को ता. 15 मई, 1949 को राजस्थान में मिला दिया। वहां के प्रधान मन्त्री श्री शोभाराम को शास्त्री-मन्त्रिमण्डल में शामिल कर लिया गया।

सिरोही का प्रश्न—

गुजरात के नेता सिरोही स्थित आबू पर्वत के शैलानी केन्द्र को गुजरात का अंग बनाना चाहते थे। रियासती विभाग उनके प्रभाव में था। अतः जनता के विरोध के बावजूद भी रियासती विभाग ने नवम्बर, 1947 में सिरोही को राजपूताना एजेन्सी से हटाकर गुजरात एजेन्सी के अन्तर्गत कर दिया था। माउन्ट आबू क्षेत्र को गुजरात में मिलाने की दिशा में यह पहला कदम था। मार्च, 1948 में रियासती विभाग ने संयुक्त राजस्थान के निर्माण का फैसला किया। उसी समय उसने गुजरात स्टेट्स एजेन्सी के अन्तर्गत रियासतों को बम्बई-राज्य[1] मे मिलाने का निर्णय किया। सिरोही की जनता ने मांग की कि सिरोही को बम्बई में न मिलाया जाकर संयुक्त राजस्थान में मिलाया जाये। कुछ ही दिनों बाद उदयपुर ने भी संयुक्त राजस्थान में शामिल होने का फैसला किया। इस अवसर पर अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रान्तीय सभा के महामन्त्री श्री हीरालाल शास्त्री ने अपने ता. 10 अप्रेल के तार में सरदार वल्लभ भाई पटेल को लिखा, "यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उदयपुर संयुक्त राजस्थान में शामिल हो रहा है। इससे सिरोही का राजस्थान में शामिल होना और भी अवश्यंभावी हो गया है। फिर हमारे लिये सिरोही का अर्थ है गोकुल भाई। बिना गोकुल भाई के हम राजस्थान को नहीं चला सकते।"[2] शास्त्री जी को इस तार का कोई उत्तर नहीं मिला। उन्होंने सरदार पटेल को ता. 14 अप्रेल को दूसरा तार भेजा जिसमें उन्होने कहा :—

> "हम लोग कोई कारण नहीं देखते कि क्षण मात्र के लिए भी सिरोही को राजस्थान की बजाय रियासतों के अन्य किसी समूह में मिलाने की दिशा में सोचा जा सकता है..............................
> इस प्रश्न पर मैं आपसे निवेदन करना चाहूँगा कि आप राजस्थान की जनता की भावना की अनदेखी न करें।............मुझे विश्वास है कि आप हमारी सर्वसम्मत प्रार्थना को स्वीकार कर हमारी सहायता करेंगे।"[3]

तारीख 18 अप्रेल का संयुक्त राजस्थान के उद्घाटन के अवसर पर उदयपुर में राजस्थान के कार्यकर्ताओं का एक शिष्टमण्डल पं जवाहरलाल नेहरू से मिला और

---

1. उस समय गुजरात प्रदेश और महाराष्ट्र बम्बई प्रान्त के ही अंग थे।
2. सरदार पटेल्स कॉरस-पोन्डेन्स, जिल्द-7 पृ. 397
3. श्री हीरालाल शास्त्री-प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र पृ. 334

उनको सिरोही के सम्बन्ध में प्रदेश की जनता की भावनाओं से अवगत किया। पं. नेहरू ने दिल्ली लौटते ही उसी दिन सरदार पटेल को एक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने कहा कि राजस्थान भर के कार्यकर्त्ताओं में जिस सवाल पर सबसे अधिक रोष था वह था सिरोही के बारे में। पं. नेहरू ने आगे लिखा "मुझे बार-बार कहा गया कि सिरोही गत 300 वर्षों से भाषा और अन्य प्रकार से राजस्थान प्रदेश का अंग रही है। अतः उसे राजस्थान में मिलना चाहिये। मैंने उनसे कहा कि मुझे इस विषय के विभिन्न पहलुओं की जानकारी नहीं है, अतः मैं इस सम्बन्ध में कुछ भी कहने की स्थिति में नहीं हूँ। पर साधारणतया जहाँ मतभेद हो, वहाँ जनता की राय ही मान्य होनी चाहिये।"[1]

पं. नेहरू के पत्र का उत्तर देते हुऐ सरदार पटेल ने अपने ता. 22 अप्रेल, 1948 के पत्र में लिखा "सिरोही के सम्बन्ध में मेरी इन लोगों से कई बार बातचीत हुई है। सभी सम्बन्धित मुद्दों पर विचार करने के बाद ही हम इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि सिरोही गुजरात को जाना चाहिये। उन्हें (राजस्थान वालों को) सिरोही नहीं चाहिये। उन्हें तो गोकुल भाई भट्ट चाहिये। उनकी यह मांग सिरोही को राजस्थान को दिये बिना ही पूरी की जा सकती है।"[2]

चतुर सरदार ने जनवरी, 1950 में माउन्ट आबू सहित सिरोही का एक भाग तो गुजरात में मिला दिया और श्री गोकुल भाई भट्ट के जन्म स्थान हाथल सहित सिरोही का शेष भाग राजस्थान को दे दिया। इस प्रकार शास्त्री जी की मांग के अनुसार सरदार पटेल ने श्री भट्ट राजस्थान को दे दिया। इस निर्णय के फलस्वरूप सिरोही में व्यापक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। इस आन्दोलन में श्री भट्ट के अलावा श्री बलवन्त सिंह महता ने महत्त्वपूर्ण भाग अदा किया। यह आन्दोलन तब समाप्त हुआ जब भारत सरकार ने अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने का आश्वासन दिया। राजस्थान के साथ किये गये इस अन्याय का निराकरण ता. 1 नवम्बर, 1956 को हुआ, जब कि राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिश के आधार पर सिरोही का माउन्ट आबू वाला इलाका पुनः गुजरात से निकाल कर राजस्थान में मिलाया गया।

अजमेर का विलय—

अ० भा० देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रांतीय सभा की सदैव यह मांग रही थी कि बृहद राजस्थान मे न केवल प्रान्त की सभी रियासतें वरन् अजमेर का इलाका भी शामिल हो। पर अजमेर का कांग्रेस नेतृत्व कभी इस पक्ष में नहीं रहा। सन् 1952 के आम चुनावों के बाद वहां श्री हरिभाऊ उपाध्याय के नेतृत्व में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल बन चुका था।[3] अब तो वहां का नेतृत्व यह दलील देने लगा कि प्रशासन की दृष्टि से छोटे राज्य ही बनाये रखना उचित है। राज्य पुनर्गठन आयोग ने अजमेर के नेताओं के इस तर्क को स्वीकार नहीं किया और सिफारिश की कि उसे राजस्थान में मिला देना चाहिये। तद्नुसार ता. 1 नवम्बर, 1956 को माउन्ट आबू क्षेत्र के साथ ही साथ अजमेर मेरवाड़ा भी राजस्थान में मिला दिया गया। इस प्रकार राजस्थान निर्माण की जो प्रक्रिया मार्च, 1947 में शुरू हुई व ता. 1 नवम्बर, 1956 में सम्पूर्ण हुई।

---

1. सरदार पटेल्स कॉरसपोन्डेन्स जिल्द-7 पृ. 395, 398
2. सरदार पटेल कॉरसपोन्डेन्स जिल्द-7 पृ. 396-397
3. अजमेर मेरवाड़ा के मन्त्रिमण्डल में उपाध्याय जी के अलावा अन्य सदस्य थे, श्री बालकृष्ण कौल और ब्रजमोहन शर्मा।

चेतावनी के चूंगटिये

भारत के तत्कालीन वायसराय लार्ड कर्जन ने सम्राट एडवर्ड, सप्तम के लन्दन में राजतिलक के अवसर पर ता. 1 जनवरी, 1903 को दिल्ली में एक बड़े राजदरबार का आयोजन किया। मेवाड़ के महाराणा फतेहसिंह को भी इस अवसर पर वायसराय के दरबार में शामिल होने के लिये दिल्ली जाना पड़ा। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी स्व. केशरीसिंह बारहट को यह गवारा नहीं हुआ कि हिन्दुओं के सूर्य कहलाने वाले महाराणा एक सामन्त की हैसियत से वायसराय के दरबार की शोभा बढ़ायें। इस अवसर पर उन्होंने डिंगल भाषा में निम्न 13 सोरठे लिखकर महाराणा को भेजे :—

पग पग भम्या पहाड़, धरा छोड़ राख्यो धरम।
महाराणा र मेवाड़, हिरदे वासिया हिन्द रे ॥ (1) ॥

मेवाड़ के महाराणा पैदल पैदल पहाड़ों में भटकते फिरे उन्होंने पृथ्वी का मोह छोड़ कर धर्म की रक्षा की। इसीलिये महाराणा और मेवाड़ ये दोनों शब्द हिन्दुस्तान के हृदय में बस गये।

घण घणिया घमसाण, राण सदा रहिया निडर।
(घाव) पेखन्ता फरमाण, हलसबल किम फलमल हुये ॥ (2) ॥

अनेकानेक घोर युद्ध हुये तब भी महाराणा निर्भय बने रहे। किन्तु अब सिर्फ शाही फरमानों को देखते ही, हे फतेहसिंह ! यह हलचल कैसे मच गयी ?

गिर गंजा घमसाण, नहचे घर माई नहीं।
भावे किम महाराण, गज दोसो रा गिरद में ॥ (3) ॥

निश्चय ही जिसके मदोन्मत हाथियों द्वारा युद्ध-स्थल में उठा हुआ गर्दा पृथ्वी में नहीं समाता था वह महाराणा दो सौ गज के गिरदाव (घेरे) में कैसे समा पायेगा ?

ने ...
औरां ने आसान हांका हरवल हालणां।
राजस्थ
किम हाले कुल राणा, हरवल शांका हांकिया ॥ (4) ॥

के साथ हं... गाओं के लिये सरल है कि वे शाही सवारी को हकाले जाने पर आगे-
राजस्थान नि... यह प्रतापी गुहिलवंश उस तरह कैसे चलेगा जिसने बादशाहों को
में सम्पूर्ण हुई।

1. सरदार पटेल्स कॉरसपोन्डेन्स जिल्द-
2. सरदार पटेल कॉरसपोन्डेन्स जिल्द-7 पृ. 396 ...मी सरसी जिको।
3. अजमेर मेरवाड़ा के मन्त्रिमण्डल में उपाध्याय जी के ...फता ॥ (5) ॥
ब्रजमोहन शर्मा।

अन्य राजाओं के लिये आसान है कि वे झुक झुक कर नजराना दिखला सकेंगे। परन्तु हे महाराणा फतेहसिंह ! तेरे हाथ में तलवार होते हुये नजराने के लिये तेरा हाथ कैसे फैलेगा ?

सिर झुकिया सहसाह, सिंहासण जिण सामने।
रलणो पंगत राह, फावे किस तोने फता ॥ (6) ॥

जिस सिंहासन के सामने बादशाहों के सिर झुके हैं उसके अधिकारी होते हुये हे फतेहसिंह ! तुझे पंक्ति में आसन प्राप्त करना कैसे शोभा देगा ?

सकल चढ़ावे शीस, दान धरम जिणरे दिया।
सो खिताब बगशीस, लेवण किम ललचाय सी ॥ (7) ॥

जिसके दिये हुये दान धर्म को संसार सिर पर चढ़ाता है वह खिताबों की बख्शीस लेने के लिये कैसे ललचायेगा ?

देखेला हिन्दुवाण, निज सूरज दिस नेहसू।
पण तोरा परमाण, निरखा निशासा न्हाकसी ॥ (8) ॥

समस्त हिन्दू अपने सूर्य की ओर जब स्नेहयुक्त आंखों से देखेंगे और उस समय वह एक तारे के रूप में दृष्टिगोचर होगा तो वे अवश्य ही परिताप के निश्वास छोड़ेंगे।

देखें अंजसदीह पुलकैलो, मुलकैलो, मन ही मनां।
दंभी-गढ़ा दिल्लीह, शीस नमन्ता शीसवद ॥ (9) ॥

हे शिशोदिया ! तेरे सिर को अपने सामने झुकता हुआ देखकर दिल्ली का वह दंभी दुर्ग इस अवसर पर अंहकार से मन ही मन खूब मुस्करायेगा।

अंत बेर आखीह, पातल जे वातां पहल।
राणा-सह आखीह, जिणरी शाखी सिर जटा ॥ (10)।

महाराणा प्रताप ने अपने अन्तिम समय में जो बात कही थी उसको अब तक सब महाराणाओं ने निभाया है और इसकी साक्षी तुम्हारे सिर की जटा दे रही है।

कठण जमाना कौल, दाबे नर हिम्मत बिना।
वीरां हंदो बोल, पाताल सागे पाखियो ॥ (11) ॥

साहस खो देने पर ही मानव यह कहना शुरू कर देता है कि जमाना खराब है। इस रहस्य को वीर सांगा और प्रताप भली भांति जानते थे।

जब लग सारां आस, राण रीत कुल राखसी।
रहो सहाय सुखरास, एकलिंग प्रभु आपरे ॥ (12) ॥

सबको आशा लगी हुई है कि महाराणा अपनी कुल परम्परा की रक्षा करेंगे। सुखराशि भगवान एकलिंग आपके सहायक बने रहें।

मान मौद सिसोद, राजनीति बल राखणों ।
गवरमेन्ट री गोद, फल मीठा मीठा फता ।। (13) ।।

अपनी प्रतिष्ठा और प्रसन्नता को राजनीति के बल से कायम रखना चाहिये । हे फतेहसिंह ! अंग्रेजों की शरण में जाने से क्या तुम कभी मधुर फल पाओगे ?

ये सोरठे 'चेतावनी के चूंगठिये'[1] के नाम से विख्यात हुये । बारहट का सन्देश काम कर गया । महाराणा दिल्ली पंहुच कर भी दरबार में सम्मिलित नहीं हुये । बारहट के स्वयं के शब्दों में जब दिनांक 9 फरवरी 1903 की मध्यान्ह को लार्ड कर्जन सिंहासन पर बैठकर महाराणा के लिये सुरक्षित खाली कुर्सी की ओर ताक रहा था, ठीक उसी समय महाराणा की स्पेशल ट्रेन उन्हें लेकर चित्तोड़ की ओर दौड़ रही थी । लार्ड कर्जन महाराणा की इस हरकत पर मन मसोस कर रह गया ।

दिसम्बर, 1911 में सम्राट जार्ज के भारत आने के अवसर पर उनके सम्मान में वायसराय ने दिल्ली मे दरबार का आयोजन किया । महाराणा दिल्ली तो पहुंचे पर स्टेशन पर ही सम्राट से हाथ मिलाकर लौट आये । उन्हें बारहटजी के चेतावनी के चूंगठिये पुनः स्मरण हो आये ।

---

1. बी. एल. पानगड़िया—राजस्थान का इतिहास पृ. 27-29

परिशिष्ट—2

श्री आर. ई. हालैण्ड, ए. जी. राजपूताना द्वारा महाराणा फतहसिंह को दिनांक 17 जुलाई, 1921 को अंग्रेजी में लिखे गये पत्र का हिन्दी रूपान्तर

आपके उस सम्वाद के उत्तर में, जो कि आपने पंडित सुखदेव प्रसाद के द्वारा मेरे पास भेजा है, मैं आपको महामहिम वायसराय महोदय का सन्देश लिखित रूप में भेज रहा हूँ जो कि मौखिक रूप से आपको पहले ही बतलाया जा चुका है।

महामहिम वायसराय महोदय की सम्मति है कि मेवाड़ की जो गम्भीर स्थिति है उसे देखते हुये यह अत्यन्त वांछनीय है कि आप भविष्य में राज्य शासन में सक्रिय भाग न लें। पिछले कई वर्षों से आपने आपके राज्य का समस्त प्रशासन अपने हाथों में केन्द्रित करने का असम्भव प्रयास किया है। राज्य प्रशासन में सुधार करने की ओर भारत सरकार ने निरंतर आपका ध्यान आकर्षित किया है। किन्तु आपने उस परामर्श को स्वीकार करने की कभी भी तत्परता नहीं दिखलाई। आपकी शारीरिक शक्तियों के क्षीण होने के साथ ही राज्य में भी अभूतपूर्व राजनैतिक अशान्ति का उदय हुआ है। राज्य प्रशासन में जो दोष और त्रुटियां हैं जिन्हें पहले प्रजा विवशता के कारण सहन करती थी, आज वह उनकी खुले रूप में आलोचना और विरोध करती है। प्रशासन के दोष प्रायः राज्य के सभी विभागों में है और जनता के सभी वर्गों को प्रभावित करते हैं। राज्य भर में फैले हुये इस विस्तृत जन असंतोष का लाभ आन्दोलनकारी उठा रहे हैं। महामहिम वायसराय की सम्मति में इस आन्दोलन (किसान आन्दोलन) के फलस्वरूप स्थिति ने ऐसा गम्भीर रूप धारण कर लिया है जो कि केवल मेवाड़ राज्य के लिये ही नहीं अपितु सभी देशी राज्यों तथा ब्रिटिश भारत के लिये घोर आपत्तिजनक है। यही कारण है कि जिनसे प्रभावित होकर महामहिम वायसराय इस निर्णय पर पहुंचे हैं कि अब समय आ गया है कि आप अपने पुत्र के पक्ष में राज्य सिंहासन छोड़ दें। श्रीमान् की बढ़ती हुई आयु को दृष्टि में रखते हुये यदि आप स्वेच्छा से यह कदम उठायेंगे तो इसको इस प्रकार का रूप दिया जायेगा कि बढ़ती हुई आयु के कारण आपने स्वयं यह इच्छा प्रकट की है। इसका परिणाम यह होगा कि इस सम्बन्ध में ऐसी चर्चा नहीं होगी कि जो आपको अरुचिकर हो। मुझे पिछले चार दिनों से आपसे इस सम्बन्ध में बात करने से ज्ञात हुआ है कि आप महामहिम वायसराय के परामर्श को स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। यद्यपि आप महाराजकुमार साहब को अथवा उच्च राज्य अधिकारियों को थोड़ा अधिकार देने को तैयार हैं, परन्तु आपकी मान्यता है कि अन्तिम अधिकार आपके हाथ में रहना आवश्यक और अपरिहार्य है। मैंने इसके बावजूद भी भारत सरकार से तय किया है कि वह अगले एक माह तक इस सम्बन्ध में कोई कार्यवाही नहीं करेगी ताकि आपको वायसराय महोदय के निवेदन का उत्तर देने के पहले सोचने का पूरा अवसर प्राप्त हो जाय।

यदि मुझे उक्त अवधि पूर्व आपकी ओर से आगे से अन्य कोई सन्देश नहीं मिला तो मैं उपयुक्त समय पर आपके विचारों से भारत सरकार को अवगत करा दूंगा। इसके आगे

जैसे ही मुझे भारत सरकार से नवीन निर्देशन मिलेगा मैं आपको उसके मन्तव्य से अवगत करा दूंगा।

अन्त में भारत सरकार ने यह जानना चाहा है कि भारत सरकार के विदेशी तथा राजनैतिक विभाग के प्रस्ताव संख्या 462 दिनांक 29 अक्टूबर, 1917 के अनुसार कार्यवाही करना आवश्यक हो जावे तो क्या आप पसंद करेंगे कि नये विधान के अन्तर्गत जांच आयोग स्थापित किया जावे। भारत सरकार की इच्छा है कि जहां तक सम्भव हो वह ऐसी कोई कार्यवाही नहीं करना चाहेगी जिससे आपको पीड़ा और मनोव्यथा हो।

मैं यहां यह प्रकट करना चाहता हूं कि मैं आपके प्रति बहुत ऊंची भावना रखता हूं और आपका एक सच्चा मित्र होने का दावा करता हूँ।[1]

1. प्रो. शंकरसहाय सक्सेना "बिजोलिया किसान आन्दोलन" पृ. 275.

परिशिष्ट (3)

Copy of letter from Shri Heera Lal Shastri to Sir Mirza Ismail Prime Minister, Jaipur State, dated 16–9–1942.

I feel I must write this with my blood for I have had to decide to communicate to you something which you could not have expected from me so suddenly.

I know that H. H. the Maharaja of Jaipur can not sever the British connections and he cannot declare full responsible Government for the people except at the risk of his own existence as Ruler. This consideration compelled me to be realistic and it was as a realist that I agreed to avoid a direct conflict with His Highness and his Government. I am not at all optimistic about the future of the princely order in free and independent India but I have felt that I should not ask His Highness the Maharaja of Jaipur to do something which he cannot really do at the present moment. In the circumstances I satisfied myself with the idea that the people of Jaipur would be able to follow my advice and would have a direct fight with British Imperialism, thus leaving His Highness and his Govt. headed by you free to do all that can be done at the time like this for the welfare and happiness of the people of the State.

For the last one month or so I have been talking to you and pleading with my people about these affairs. I returned from Banasthali last evening and upto noon today I had no doubt whatsoever that I would succeed in my plans. But the coming of the afternoon seemed to bring a change and even then I little knew that I would be driven to the most painful necessity of writing this letter to you. My endeavours to gauge current public thoughts and sentiments dragged me to the extremely unhappy conclusion that my dearly cherished plans cannot work. Then I thought that either I should give up political life and the Prajamandal or I should live myself up with what I understand to be the sincere and current desire of hundreds of my fellow workers and possibly of thousands of other people. The first alternative I could not have choosen without jeopardising the peaceful existence of the Praja mandal which along with other co-workers I have watered with

my very blood for the last seven years. Then I had to take up the only other alternative left to me.

While I write this I cannot help referring to the recent statement made by the British Prime Minister in the House of Commons. Inter alia Mr. Churchill is reported to have said :—

"Outside that (meaning the Congress) party and fundamentally opposed to it are 90 million Muslims in British India who have their right of self expression, 53 million depressed classes or untouchables as they are called and 95 million subjects of the Princes of India with whom we are bound by Treaty."

I must say at once that this is the greatest falsehood which may have ever been uttered by any statesman. Leaving aside the rest I have to declare that the people of Indian States are not outside the Congress and most certainly they are not fundamentally opposed to it. This statement of Mr. Churchill must have made lakhs of the Indian people angry, in any case it has made me angry. And what answer can I make to the British Prime Minister ? I must show him not by my words which he cannot hear but my concrete acts that the people of the Jaipur State are part of the Indian National Congress and indissolubly connected with it. And what are my concrete acts ? The first of them is to declare that from this moment I am here to refuse to accept the authority of His Highness the Maharaja of Jaipur on the ground that the said au hority is derived from the British Government and cannot last for a moment without their support and that His Highness cannot unfortunately free himself and his state from the British yoke & is thus allowing himself to be regarded as a pillar of British Imperialism in this country.

I must make it clear that I have no immediate cause to pick up a quarrel with His Highness for whom personally I have had a liking in spite of numerous complaints which I do have to make against him. Nor I have any cause to be dissatisfied with the way in which you have begun your work in Jaipur. As I have had no personal contact with His Highness I can not say much about him but I know from experience that you want to serve the people of this State with all possible sincerity. I can guess, however, that His Highness cannot but have the well being of the people at heart.

But the tragedy is that these considerations are of small consequence, when I see that the thinking section of the Jaipur people is impatient to take part in the grim and great struggle which has been

going on in India against the British and that the people do not seem to have any faith in the plans which I have endeavoured to place before them. Any how many people want a struggle here and now and I feel compelled to bow my humble head to their wishes.

Since I began writing this letter I have also been thinking if there could be anything which might still avert the catastrophe. I know that with the best will His Highness or you cannot do anything and I know that in spite of all my most sincere desire to avoid a direct conflict with His Highness and his Government I cannot do anything. The people of India and this term includes the people of Jaipur are out to throw the British yoke off. While it can be understood that His Highness the Maharaja of Jaipur, even though he may perhaps be tired of the said yoke, cannot have the courage to put it off and to join his people in their struggle against the British.

Hence, the unavoidable necessity of starting a direct struggle against His Highness who is a subordinate ally of the British King.

With a view to make the Prajamandal members free from the obligation of the constitution of the Mandal I am declaring the said constitution as suspended untill further notice and then I am asking the people of Jaipur State to follow Mahatma Gandhi's lead and take as full a part as they can in the Indian struggle for Independence.

Need I tell you that I have written the letter with a heavy heart. I had to make a quick decision and to write to you immediately. I propose to make a public declaration in accordance with the terms of this letter tomorrow evening.

In the absence of H. H. I decided to address this letter to you. I hope it will be seen by H. H. as soon as possible.[1]

---

1. श्री हीरालाल शास्त्री–"प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र"

(4)

Copy of letter from Sir Mirza Ismail to Pandit Heera Lal Shastri dated 17–9–42.

Your letters gave me a rude shock. They distressed me. I fear, pardon my saying so, you have not acted with sufficient foresight or in the best interest of the State and the country in general. I may be wrong, of course, but that is my conviction. My consceince is perfectly clear and so is my duty. But I wish such a situation had not arisen at all. It will only hamper me in my work for the betterment of the people of Jaipur and interfere with the realisation of many a dream I have been dreaming for them. Let me appeal to you and your party even at this late hour to think again before taking the plunge. I wish fervently that you could even now be persuaded to abandon the idea of starting an agitation in this State, especially when things are quieting down in other States and even in British India. Let us be realistic. A vast gulf divides realities from mere emotionalism.
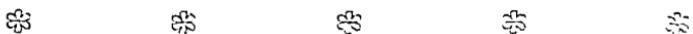
I should like to see you and any of your friends that you might like to bring along and have a heart to heart talk with you. Believe me I am as ardent a nationalist as any of you.[1]

---

1. श्री हीरालाल शास्त्री-"प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र"

Extracts from the Memo by Lord Mountbatten, Viceroy of India dated 11th August, 1947.

His Highness (Nawab of Bhopal) came to see me at 11 O'clock this morning.

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

I told HH the story that Sardar Patel had received was to the effect that HH had made contact with the young Maharaja of Jodhpur and induced him to come with him to Mr. Jinnah. That at this meeting Mr. Jinnah had offered extremely favourable terms and conditions, that they did not sign the Instrument of Accession and that the (Mr. Jinnah) had even gone so far as to turn round and say to the Maharaja of Jodhpur, "Here's my fountain pen, write your terms and I will sign it."

The story continued that after I had sent for the Maharaja of Jodhpur and had a discussion with him and sent him to see Sardar Patel, who had satisfied all his demands, the Maharaja had flown back to Jodhpur promising to come back that night or the following morning and to go straight to Sardar Patel to give him his decision.

The story goes that the Maharaja of Jodhpur returned on Sunday morning, but it was uncertain as to which airfield he would land at. HH of Bhopal was supposed, therefore, to have sent a staff officer in a car to each airfield Palam and Willingdon to make quite certain that the Maharaja should be found and taken straight to his house. He had been virtually a "prisoner" in this house and had not yet been released to keep his word and see Sardar Patel.

I pointed out to His Highness that no amount of friendship would enable me to protect either himself or his State or the new ruler of the State if the future Government of India thought that he was acting in a manner hostile to that Government by trying to induce an all–Hindu State to join Pakistan.

His Highness then offered to tell me the true version of events, which he gave me to understand on his word of honour, would be the whole truth and nothing but the truth. I gladly accepted this assurance,

for having been his friend and known him for years as a man of honour, I had no reason to doubt that he would tell me the truth. The following is His Highness's account dictated in his presence :

"About 6 August the Maharaja of Dholpur and one or two other rulers informed me that the Maharaja of Jodhpur wished to see me. I said I would gladly see him at my house. When the Maharaja came, he told me that he was particularly anxious to meet Mr. Jinnah as quickly as possible to know what terms Mr. Jinnah would offer.

"As Mr. Jinnah was very busy and on the eve of his departure from Delhi to Karachi and I had fortunately secured an interview with him that afternoon, I invited the Maharaja of Jodhpur to come along with me. The Maharaja therefore came back to my house and we drove together to Mr. Jinnah's house.

"At this interview His Highness asked Mr. Jinnah what terms he was offering to those States who wished to establish relationship with Pakistan. Mr. Jinnah said, "I have made my position quite clear, we are ready to come to treaty rel tion with the States and we shall give them very good terms and we shall treat them as independent States. They then discussed certain details about port facilities, railway jurisdiction and the supply of food, arms and ammunition. The question of whether he should or should not sign an instrumet of accession never arose.

"I returned to Bhopal and while I was there I received a telephone massage from Delhi, from HH of Dholpur and other rulers, to the effect that His Highness of Jodhpur was returning to Delhi on Saturday and that he wanted to meet me. I replied that I was in any case coming back to Delhi on Saturday.

"I arrived back in Delhi on Saturday morning and received a massage at the airfield from HH of Dholpur asking me to come straight to him. On arrival he told me to wait with him since the Maharaja of Jodhpur was at present with the Viceroy and was expected to come straight back at the conclusion of the interview. The Viceroy, however, kept him longer than was expected, so that HH of Jodhpur did not have time to come to the house but sent a telephone message to say he was going to the airfield to fly back to Jodhpur but was returning that evening.

"Since the message did not say which airfield he was taking off from, HH of Dholpur sent two ADCs in two cars to Palam and Willingdon respectively to try and catch HH of Jodhpur before he left. It is possible that one of these two cars may have been mine because mine was waiting outside the door but I am still unable to confirm that it was used.

"One of the ADCs caught HH of Jodhpur, who sent back a message to the effect that he was coming back that evening. I then went back to my house. His Highness of Dholpur came to see me on Saturday evening to say that HH of Jodhpur had not come back that night. On Sunday morning it appears that HH of Jodhpur got back, but I do not know what time as he never communicated with me.

"At about 1.30 p.m. I reccived a message from HH of Dholpur inviting me to lunch. I replied that I did not wish to have lunch but would come at 2 O'clock. On arrival I found HH of Jodhpur there and he had brought with him his guru, whom he introduced as his philosopher and guide. This was the first time I had seen HH of Jodhpur since our meeting with Ms. Jinnah.

"HH invited us all to have discussions with his guru, and HH of Dholpur and other rulers entered into a lengthy discussion with him, but I myself only contributed a few words to the conversation.

"As I was leaving, His Highness of Jodhpur said he was coming to see me on Monday morning at 10 O'clock. This morning (Monday) he kept his promise and came at 10. He told me that his guru had been unable to make up his mind but that he himself had decided that he would not leave the Union of India. I replied that I considered His Highness was the master of his own State and I would not attempt to influence his choice one way or the other."[1]

---

1. Sardar Patel's Correspondence. Vol. V App. 1. Page 515-17

राजस्थान की भूमि पर स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर चढ़ने वाले अमर शहीद

क्रम सं.	नाम	रियासत	शहादत
1-	श्री प्रतापसिंह बारहट (शाहपुरा)	शाहपुरा	ब्रिटिश सरकारी की अमानुपिक यातनाओं के शिकार होकर ता. 27 मई, 1918 को बरेली जेल में शहीद हो गये।
2-	रूपाजी धाकड़ जवनगर (बेगूं)	मेवाड़	जून सन् 1922 में बेगूं के किसान आंदोलन के दौरान किसानों का नेतृत्व करते हुये मेवाड़ राज्य की सेना द्वारा चलायी गयी गोली के शिकार हुये।
3-	किरपाजी धाकड़ अमरपुरा (बेगूं)		
4-	नानकजी भील डाबी (बून्दी)	बून्दी	सन् 1922 में बून्दी के किसान आन्दोलन के दौरान डाबी के किसान सम्मेलन में झंडागीत (प्राण मित्रों भले ही गंवाना, पर झंडा न नीचे झुकाना) गाते गाते बून्दी राज्य की पुलिस की गोली के शिकार हुये।
5-	श्री बालमुकुन्द बिस्सा पीलवा (डीडवाणा)	जोधपुर	मारवाड़ लोक परिषद् द्वारा राज्य में उत्तरदायी शासन कायम करने हेतु छेड़े गये आन्दोलन के दौरान ता. 9 जून, 1942 को गिरफ्तार होकर तारीख 19 जून, 1942 को विन्डम अस्पताल, जोधपुर में शहीद हुये।
6-	श्री सागरमल गोपा	जैसलमेर	श्री गोपा मई, 1941 में राजद्रोह के अभियोग में जैसलमेर सरकार द्वारा गिरफ्तार किये गये। ता. 3 अप्रेल, 1946 को जेल में सरकारी कर्मचारियों ने उन्हें जिन्दा जला दिया। वे अगले ही दिन शहीद हो गये।

क्र.	नाम	राज्य	विवरण
7-	श्री बीरबल सिंह जीनगर रायसिंहनगर	बीकानेर	तारीख 1 जुलाई, 1946 को रायसिंह नगर में एक जुलूस का नेतृत्व करते हुए यह हरिजन युवक तिरंगा झंडा हाथ में लिये हुए बीकानेर राज्य की सेना की गोली का शिकार हुआ।
8-	ठा. छत्रसिंह	धौलपुर	1946 में लखमीर नामक गांव में धौलपुर राज्य कांग्रेस द्वारा आयोजित सभा पर पुलिस द्वारा गोली चलाने के फलस्वरूप शहीद हुये।
9-	ठा. पंचमसिंह		
10-	श्रीरमेश स्वामी मुसावर (भरतपुर)	भरतपुर	बेगार विरोधी आन्दोलन के दौरान भरतपुर पुलिस द्वारा मुसावर में तारीख 5 फरवरी, 1947 को बस द्वारा कुचलवा कर मार दिये गये।
11-	श्री चुन्नीलाल शर्मा नीबीजोधा (लाडनू)	जोधपुर	डावडा ग्राम में किसान सम्मेलन के दौरान श्री शर्मा तारीख 13 मार्च, 1947 को अपने चार साथियों के साथ जागीरदारों द्वारा चलायी गई गोलियों के फलस्वरुप शहीद हुये।
12-	श्री पन्नाराम चौधरी डावडा		
13-	श्री रामराम चौधरी		
14-	श्री रूघाराम चौधरी लाडनू		
15-	श्रीअलकाराम चौधरी अदकासर (कुचामन)		
16-	श्री मानाभाई खांट (भील) रास्तापाल	डूंगरपुर	डूंगरपुर राज्य द्वारा सेवा संघ द्वारा संचालित पाठशालाओं को वन्द करने के अभियान के दौरान तारीख 19 जून, 1947 को राज्य की पुलिस ने रास्तापाल मे मार मार कर नानाभाई की हत्या कर दी। उसी दिन भील बालिका वीरागना काली बाई पुलिस की गोली की शिकार होकर शहीद हुयी।
17-	कु. कालीबाई भील रास्तापाल		
18-	श्री शान्तिलाल उदयपुर	मेवाड़	उत्तरदायी शासन की स्थापना के अंतिम दौर में उदयपुर मे पुलिस की गोली से दो युवा विद्यार्थी श्री शान्तिलाल एवं आनन्दीलाल तारीख 5 अप्रेल, 1948 को शहीद हुये।
19-	श्री आनन्दीलाल उदयपुर		

राजस्थान में स्वतंत्रता-संग्राम-तिथि क्रम

1857-1949

1. प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम 1857

28-5-1857 नसीराबाद (अजमेर) छावनी में ब्रिटिश सेना के भारतीय दस्तों द्वारा विद्रोह और दिल्ली की ओर कूच।

1857-1858 ता. 21 अगस्त, 1957 को एरिनपुरा (जोधपुर) छावनी में भारतीय दस्तो का विद्रोह। आबू में अंग्रेज अधिकारियों का कत्ल। विद्रोही दस्तों का आहूवा में आगमन। आहूवा ठाकुर कुशलसिह चाँपावत द्वारा विद्रोहियों का नेतृत्व। जोधपुर राज्य की सेना परास्त। अंग्रेजी सेना से मुठभेड़। विद्रोहियों की दूसरी विजय। गवर्नर जनरल कैनिंग द्वारा ता. 20-1-1858 को एक बड़ी सेना आहूवा प्रेषित। विद्रोही परास्त।

1857-58 ता. 15 अक्टूबर, 1857 को कोटा कन्टिजेन्ट द्वारा विद्रोह। अंग्रेज अधिकारियों का कत्ल। राज्य के कई मार्गो पर विद्रोहियों का अधिकार। ता. 1 मार्च, 1858 को कर्नल राबर्ट की सेना द्वारा विद्रोही परास्त। विद्रोही नेताओं को फांसी।

1857 ता. 11 दिसम्बर को तांतिया टोपे द्वारा बाँसवाड़ा राज्य पर अधिकार। महारावल का पलायन। गदर के असफल होने पर महारावल की वापसी।

1857-58 टोंक नवाब के मामा मीर आलमखाँ के नेतृत्व में टोंक की सेना के एक भाग द्वारा विद्रोह। आलमखाँ मारा गया। टोंक के 600 मुजाहिदों का दिल्ली प्रस्थान। तांतिया टोपे का बंदा के नवाब के साथ टोंक आगमन। टोपे और नवाब की वफ़ादार सेना में मुठभेड़ें। नवाब किले मे बन्द। राजधानी पर टोपे का अधिकार। जेल और कोतवाली से कैदी मुक्त। मेजर ईडन का दिल्ली से बड़ी सेना के साथ टोंक के लिये प्रस्थान। विद्रोहियों का पलायन।

2. उदयपुर (मेवाड़)

1. बिजोलिया किसान-आन्दोलन

1897 ठिकाना बिजोलिया के किसानो द्वारा जागीरदार बिजोलिया राव कृष्णसिह के विरूद्ध लाग-बाग और बैठ-बेगार लेने के विरूद्ध एक प्रतिनिधि मण्डल महाराणा को प्रेषित। मिशन असफल। जागीरदार द्वारा प्रतिनिधि मण्डल के नेता नानजी और ठाकरी पटेल जागीर से निर्वासित।

1903–1905 राव द्वारा किसानों पर चवरी कर आयद। किसानों द्वारा विरोध–स्वरूप कृषि भूमि पड़त। राव द्वारा चंवरी कर समाप्त एवं लाटे कून्ते में रिआयत।

1906–1913 राव कृष्णसिंह की मृत्यु पर नये राव पृथ्वीसिंह द्वारा तलवार-बन्दी की वसूली। साधु सीतारामदास के नेतृत्व में किसानों का विरोध। कृषि भूमि पड़त। पृथ्वीसिंह की मृत्यु। ठिकाने पर मेवाड़ सरकार द्वारा मुन्सरमात कायम।

1916–17 विजयसिंह पथिक का बिजोलिया में आगमन। श्री सीताराम दास एवं श्री माणिक्य लाल वर्मा के सहयोग से ऊपरमाल पंच बोर्ड की स्थापना। ठिकाने द्वारा प्रथम विश्व-युद्ध का चन्दा एकत्रित करने के प्रयत्न। पंच बोर्ड का विरोध। साधु सीताराम दास और श्री प्रेमचन्द भील की गिरफ्तारी। लोक मान्य तिलक की सलाह पर महाराणा द्वारा रिहाई के आदेश। ठिकाने द्वारा तलवार बन्दी और विश्व युद्ध के लिये चन्दा वसूली एवं बेगार लेना जारी।

1919 सरकार द्वारा जांच आयोग की नियुक्ति। आयोग द्वारा लाग-बागें और बेगार समाप्त करने की सिफारिश। सरकार की अकर्मण्यता। महादेव देसाई का बिजोलिया आगमन। गांधीजी का महाराणा को पत्र। मालवीय जी की महाराणा से मुलाकात। प्रयत्न असफल।

1920 बिजोलिया में असहयोग आन्दोलन छेड़ने के लिये गांधीजी का आशीर्वाद। किसानों द्वारा लाग-बाग, बेगार और भूमि का कर देना बन्द। ठिकाने की कचेहरियों का बहिष्कार। अजमेर में राजस्थान सेवा संघ की स्थापना।

1921 किसानों द्वारा बिना लगान दिये फसलों की कटाई।

1922 भारत सरकार द्वारा बिजोलिया प्रकरण में दखल। ए. जी. जी. हालैण्ड का बिजोलिया में आगमन। किसानों और हालैण्ड में समझौता। 84 में से 35 लागने माफ। ठिकाने के जुल्मी कारिन्दे बरखास्त। तीन साल के भीतर भूमि के बन्दोबस्त का आश्वासन। किसानों की अपूर्व विजय। ठिकाने द्वारा समझौता के पालन में उदासीनता। बेगू के किसान-आन्दोलन में पथिक जी गिरफ्तार। साधु सीतारामदास का बिजोलिया से प्रस्थान। श्री वर्मा किसानों के एक छत्र नेता।

1923–28 ठिकाने में भूमि का बन्दोबस्त। लगान की ऊँची दरें नियत। राज्य के सेटलमेन्ट कमिश्नर ट्रेंच का बिजोलिया आगमन। वर्मा जी की गिरफ्तारी। पथिक जी की जेल से रिहाई और साथ ही मेवाड़ से निर्वासन। किसानों द्वारा कृषि भूमि का इस्तीफा। ठिकाने द्वारा भूमि का निलाम और अन्य लोगों को आवंटन। सेठ जमनालाल बजाज की सलाह पर श्री हरिभाऊ उपाध्याय की ट्रेंच से मुलाकात। ट्रेंच द्वारा किसानों को भूमि वापस दिलाने का आश्वासन। ट्रेंच द्वारा आश्वासन भंग।

1931–33 किसानों द्वारा वर्मा जी के नेतृत्व में इस्तीफा शुदा जमीन पर हल

जोतना प्रारम्भ। वर्मा जी और 400 किसान गिरफ्तार। बजाज की महाराणा तथा प्रधानमन्त्री सर सुखदेव प्रसाद से मुलाकात। सरकार द्वारा किसानों को जमीनें लौटाने का आश्वासन। वर्माजी और किसान रिहा। सरकार की वादाखिलाफी। श्री वर्मा मेवाड़ से निर्वासित।

1941 मेवाड़ के प्रधानमन्त्री श्री सर टी. विजयराघवाचार्य से प्रजामण्डल के नेताओं की मुलाकात। राजस्व मन्त्री डॉ. मोहनसिंह महता का बिजोलिया प्रस्थान। किसानों को भूमि सिपुर्द। आन्दोलन का पटाक्षेप।

2. बेगूं आन्दोलन

1921 मेनाल नामक स्थान पर बेगूं जागीर के किसान एकत्रित। लाग-बाग, बेगार और लगान की ऊंची दरों के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ने का निश्चय। पथिक जी द्वारा आन्दोलन का भार श्री रामनारायण चौधरी को सिपुर्द। किसानों द्वारा लाग-बाग, बेगार देना बन्द। सरकारी कार्यालय का बहिष्कार। जागीरदारों का मेवाड़ सरकार के सहयोग से आन्दोलन का सामना करने का निर्णय। किसानों द्वारा जमीनों को पड़त रखने का निश्चय। बेगूं रावत द्वारा किसानों से समझौता। मेवाड़ सरकार द्वारा समझौते को 'बोल्शेविक' फैसले की संज्ञा। रावत अनूपसिंह नजरबन्द। बेगूं पर मुन्सरमात। ट्रेंच कमिशन की नियुक्ति। ट्रेंच द्वारा पथिक जी पर समानान्तर सरकार बनाने का आरोप। सरकार का दमन चक्र।

1923 ता. 13 जुलाई, 1923 को किसान स्थिति पर विचार करने के लिये गोविन्दपुरा में एकत्रित। सेना द्वारा घेराबन्दी। सेना की गोली से 2 किसान शहीद। अनेक घायल। सेना द्वारा महिलाओं का अपमान। 500 से अधिक किसान गिरफ्तार। 10 सितम्बर को पथिक जी गिरफ्तार। 5 वर्ष की सजा।

3. भील-आन्दोलन

1921 श्री मोतीलाल तेजावत द्वारा मेवाड़, सिरोही, दान्ता, पालनपुर, ईडर, और विजय नगर के आदिवासियों का संगठन। नीमड़ा (विजय नगर) नामक ग्राम में लाग-बाग और वैठ बेगार के विरोध में आदिवासियों का सम्मेलन। सम्बन्धित राज्यों की सेना द्वारा सम्मेलन पर आक्रमण। 1200 भील सेना की गोली से मरे। हजारों घायल। तेजावत जी बाल-बाल बचे, पैर में गोली। 8 वर्ष तक भूमिगत। गांधीजी की सलाह पर 1929 मे पुलिस को आत्मसमर्पण। उदयपुर में नजरबंद।

4. मेवाड़–प्रजामण्डल

1938 24 अप्रेल को उदयपुर में मेवाड़ प्रजामण्डल की स्थापना। श्री बलवन्तसिंह महता अध्यक्ष और माणिक्यलाल वर्मा महामन्त्री नियुक्त। 11 मई को प्रजामण्डल गैर कानूनी घोषित। वर्मा जी मेवाड़ से निष्कासित। वर्मा जी द्वारा अजमेर में प्रजामण्डल कार्यालय की स्थापना। अक्टूबर, 1938 मे विजयदशमी के दिन प्रजामण्डल द्वारा सत्याग्रह प्रारम्भ। लगभग 250 गिरफ्तारियाँ।

1939 ता. 2 फरवरी को मेवाड़ पुलिस द्वारा अजमेर की सीमा में वर्मा जी की नाजायज गिरफ्तारी और नृशंसतापूर्वक पिटाई। महात्मा गाँधी द्वारा मेवाड़ सरकार की कार्यवाही की आलोचना। वर्मा जी को देश-द्रोह के अभियोग में 2 वर्ष की सजा।

1940 जेल में वर्मा जी अस्वस्थ। 8 जनवरी को रिहा। गांधी जी के आदेश पर सत्याग्रह स्थगित।

1941 22 फरवरी को प्रजामण्डल पर से पाबन्दी हटी। नवम्बर में प्रजामण्डल का उदयपुर में वर्मा जी की अध्यक्षता में पहला सम्मेलन। आचार्य कृपलानी और श्रीमती विजयलक्ष्मी सम्मेलन में शामिल। सम्मेलन मे में उत्तरदायी शासन की मांग।

1942 20 अगस्त को महाराणा को भारत छोडने आन्दोलन के सम्बन्ध में अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद करने का अल्टिमेटम। 21 अगस्त को वर्मा जी उदयपुर में गिरफ्तार। शहर में हड़ताल। कॉलेज, स्कूल बन्द। 600 छात्र गिरफ्तार। आन्दोलन का जिलों में विस्तार। 500 कार्यकर्त्ता जेल में।

1943–44 अस्वस्थ होने के कारण वर्मा जी जेल से रिहा। श्री सी. राज गोपालाचार्य (राजाजी) का उदयपुर आगमन। राजाजी को वर्मा जी को भारत छोड़ो आन्दोलन से अलग होने की सलाह। वर्मा जी का इन्कार। प्रजामण्डल के नेता एवं कार्यकर्त्ता रिहा।

1945 31 दिसम्बर व 1 जनवरी, 1946 को अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् का पं. नेहरू की अध्यक्षता में उदयपुर में अधिवेशन। शेरे काश्मीर शेख अब्दुल्ला का ओजस्वी भाषण। परिषद् द्वारा रियासतों में उत्तरदायी शासन स्थापित करने की मांग।

1947 महाराणा द्वारा के. एम. मुन्शी की संवैधानिक सलाहकार के पद पर नियुक्ति। मुन्शी द्वारा मेवाड़ का विधान तैयार। ता. 23 मई (प्रताप जयन्ती) को संविधान लागू। 28 मई को मन्त्रिमण्डल में प्रजामण्डल के दो व क्षत्रिय परिषद् का एक प्रतिनिधि शामिल। जून में वर्मा जी जन प्रतिनिधि के रूप में संविधान परिषद् के सदस्य निर्वाचित। महाराणा और श्री मुन्शी के बीच सैद्धान्तिक मतभेद। मुन्शी का इस्तीफा। सर राममूर्ती प्रधानमन्त्री नियुक्त। अगस्त में महाराजा जोधपुर द्वारा महाराणा को पाकिस्तान में शामिल होने का आग्रह। महाराणा का इन्कार। मेवाड़ भारतीय संघ में शामिल। अक्टूबर में मुन्शी विधान में परिवर्तन। मेवाड़ विधान-सभा के चुनावों की घोषणा।

1948 फरवरी– विधान सभा चुनावों की प्रक्रिया शुरू। प्रजामण्डल के 8 उम्मीदवार निर्विरोध निर्वाचित।

मार्च, 6– सरकारी और प्रजामण्डल के बीच अन्तरिम मन्त्रिमण्डल के निर्माण के सम्बन्ध में समझौता। सात सदस्यों के मन्त्रिमण्डल में मुख्य-

मन्त्री सहित प्रजामण्डल के चार और क्षत्रिय परिषद् के दो प्रतिनिधि एवं एक निर्दलीय सदस्य लेने का सर्वसम्मत निर्णय।

मार्च, 23–महाराणा द्वारा मेवाड़ को संयुक्त राजस्थान में विलय करने की भारत सरकार को अनौपचारिक सूचना।

अप्रेल, 4–उदयपुर में विधान सभा के स्थानों के लिये मतदान। मतदान केन्द्र पर तिरंगे झण्डे का अपमान। राजधानी में हड़ताल। प्रजामण्डल द्वारा चुनावों का बहिष्कार।

अप्रेल, 5–शहर में हड़ताल–सरकार द्वारा चुनाव स्थगित। पुलिस द्वारा भीड़ पर गोली। 2 विद्यार्थी शहीद। कई घायल।

अप्रेल, 11–महाराणा द्वारा मेवाड़ के संयुक्त राजस्थान में विलय करने की घोषणा एवं विलय-पत्र पर हस्ताक्षर।

अप्रेल, 18–पं. नेहरू द्वारा संयुक्त राजस्थान का उदयपुर में उद्घाटन। महाराणा को राजप्रमुख एवं श्री माणिक्यलाल वर्मा को मुख्यमन्त्री पद की शपथ। संसार के प्राचीनतम राज्य मेवाड़ का अस्तित्व समाप्त। 28 अप्रेल–मन्त्रिमण्डल का निर्माण और मन्त्रियों को शपथ। जुलाई-राज्य सेवाओं का एकीकरण पूरा। दिसम्बर–जागीरदारी प्रथा का उन्मूलन।

1949 सरदार पटेल द्वारा ता. 14 जनवरी को उदयपुर में वृहत् राजस्थान के निर्माण की घोषणा। ता. 30 मार्च को जयपुर में वृहत् राजस्थान का उद्घाटन।

3. जयपुर–राज्य

1907 श्री अर्जुनलाल जी सेठी द्वारा जयपुर में वर्द्धमान विद्यालय की स्थापना। सेठीजी का सूरत कांग्रेस में लोकमान्य तिलक से सम्पर्क।

1908–11 सेठीजी का रासविहारी बोस से सम्पर्क स्थापित। विद्यालय क्रांतिकारियों के प्रशिक्षण का केन्द्र। बोस द्वारा राजस्थान में क्रांति का भार सेठीजी आदि पर। सर्वश्री विष्णुदत्त, प्रतापसिंह बारहट, मोतीचन्द आदि क्रांतिकारियों का वर्द्धमान विद्यालय में प्रशिक्षण।

1912 विष्णुदत्त आदि द्वारा क्रांति के लिये धन एकत्रित करने की योजना। निमेज के महन्त की हत्या।

1914 निमेज हत्या काण्ड का फैसला। मोतीचन्द को फांसी। सेठीजी बरी, पर जयपुर में और बाद में मद्रास की वैलूर जेल में बन्द।

1920 सेठीजी वैलूर जेल से रिहा। बाल गंगाधर तिलक के नेतृत्व में महाराष्ट्र कांग्रेस द्वारा पूना में सेठीजी का स्वागत। इन्दौर में सेठीजी का जुलूस। विद्यार्थियों का रथ में जुत कर रथ हांकना। सेठीजी का अजमेर को अपनी कर्म भूमि बनाना।

1927 श्री हीरालाल शास्त्री द्वारा वनस्थली में जीवन कुटीर की स्थापना।

1931 श्री कपूरचन्द पाटनी द्वारा प्रजामण्डल की स्थापना।

1937 सेठ जमनालाल बजाज की प्रेरणा से प्रजामण्डल का पुनर्गठन।

एडवोकेट चिरन्जीलाल मिश्रा अध्यक्ष, श्री हीरालाल शास्त्री महामंत्री एवं श्री कपूरचन्द पाटनी संयुक्त मन्त्री।

1938 जयपुर में बजाज की अध्यक्षता में प्रजामण्डल का प्रथम अधिवेशन। जयपुर राज्य में अकाल। श्री बजाज का अकाल राहत कार्यों का जायजा लेने के लिये जयपुर आने का कार्यक्रम। 16 दिसम्बर को राज्य द्वारा श्री बजाज के जयपुर राज्य में प्रवेश पर पाबन्दी।

1939 श्री बजाज द्वारा निषेध आज्ञा भंग कर ता. 1 फरवरी को राज्य में प्रवेश करने एवं नागरिक अधिकारों के लिये सिविल नाफरमानी आंदोलन शुरू करने की चेतावनी। श्री बजाज 11 फरवरी को बैराठ के निकट गिरफ्तार। इसी रात्रि को जयपुर में प्रजामण्डल के प्रमुख नेता भी गिरफ्तार। आन्दोलन शुरू। 600 गिरफ्तारियां। मार्च में गांधी जी के आदेशानुसार सत्याग्रह स्थगित। अगस्त में श्री बजाज सहित प्रजामण्डल के सभी कार्यकर्त्ता रिहा। प्रजामण्डल और सरकार के बीच समझौता। प्रजामण्डल की मूलभूत अधिकारों की मांग स्वीकार। प्रजामण्डल संस्था का पंजीयन करवाने को राजी।

1940 श्री शास्त्री प्रजामण्डल के अध्यक्ष। कार्यकर्त्ताओं में मतभेद। श्री बजाज जयपुर प्रजामण्डल से उदासीन।

1942 फरवरी में श्री बजाज का वर्धा में देहान्त। अगस्त में श्री शास्त्री के नेतृत्व में प्रजामण्डल द्वारा भारत छोड़ो आन्दोलन से अलग रहने का निर्णय। बाबा हरिश्चन्द्र द्वारा आज़ाद मोर्चे की स्थापना। मोर्चे द्वारा आन्दोलन। श्री शास्त्री की उलझन। 16 सितम्बर को प्रजामण्डल द्वारा राज्य को आन्दोलन छेड़ने का अल्टिमेटम। शास्त्री जी की प्रधानमन्त्री सर मिर्जा से मुलाकात। दोनों के बीच 'जेन्टलमेन्स एग्रीमेंट'। आज़ाद मोर्चे द्वारा आन्दोलन चालू। कई गिरफ्तारियां। नव युवकों द्वारा 2–3 स्थानों में बम विस्फोट। शिक्षण संस्थाओं में हड़ताल।

1945 जयपुर में पी. ई. एन. कान्फ्रेन्स। पं. नेहरू का आगमन। बाबा हरिश्चंद्र द्वारा नेहरू जी की उपस्थिति में आज़ाद मोर्चा भंग करने की घोषणा।

1946 राज्य में विधान सभा और विधान-परिषद् की स्थापना। 15 मई को प्रजामण्डल के प्रतिनिधि के रूप में श्री देवीशंकर तिवाड़ी मन्त्रिमण्डल में शामिल।

1947 प्रजामण्डल के एक और प्रतिनिधि श्री दौलतमल भण्डारी मन्त्रिमण्डल में शामिल। 27 मार्च को राज्य मन्त्रिमण्डल का पुनर्गठन। श्री शास्त्री मुख्यमन्त्री। प्रजामण्डल के तीन अन्य प्रतिनिधि एवं जागीरदारों के दो प्रतिनिधि मन्त्रिमण्डल में शामिल। शास्त्री भारतीय संविधान परिषद् के लिये नामजद। अगस्त में जयपुर भारतीय संघ में शामिल।

1949 14 जनवरी को सरदार पटेल द्वारा जयपुर, जोधपुर, बीकानेर राजस्थान में विलय की घोषणा। 30 मार्च को पटेल द्वारा जयपुर में वृहद् राजस्थान राज्य का उद्घाटन। महाराजा जयपुर को राजस्थान के राज प्रमुख एवं श्री हीरालाल शास्त्री को मुख्य मन्त्री के पद की शपथ।

4. जोधपुर (मारवाड़)

1. मारवाड़ में जनजागरण

1920 श्री चाँदमल सुराना और उनके साथियों द्वारा 'मारवाड़ सेवा संघ' की स्थापना।

1921 सेवा संघ द्वारा राज्य में अंग्रेजी तोल चालू करने का विरोध। सरकार द्वारा मांग स्वीकार।

1922-24 सेवा संघ द्वारा राज्य से मादा पशुओं की निकासी का विरोध। संघ की दूसरी सफलता।

1924 मारवाड़-हितकारिणी सभा की स्थापना। सभा द्वारा प्रधान मन्त्री सर सुखदेव प्रसाद को हटाने के लिये आन्दोलन। मार्च में सुराना व सभा के दो अन्य कार्यकर्त्ताओं को देश निकाला। श्री जयनारायण व्यास व अन्य कार्यकर्त्ता पुलिस में हाजरी देने के लिये पाबन्द। नवम्बर में देश निकाले की आज्ञा रद्द एवं कार्यकर्त्ताओं की हाजरी समाप्त।

1928 सरकार द्वारा मारवाड़ लोक राज्य परिषद् के अधिवेशन पर रोक। देशद्रोह के जुर्म में श्री जयनारायण व्यास को 6 वर्ष एवं उनके साथियों को 5-5 वर्ष की कैद।

1931 व्यास जी व साथी जेल से रिहा।

1937 व्यास जी मारवाड़ से निष्कापित। श्री अचलेश्वर प्रसाद शर्मा को राजद्रोह के अपराध में ढाई वर्ष की सजा।

2. मारवाड़ लोकपरिषद्

16-5-1938 मारवाड़ लोक परिषद् की स्थापना।

फरवरी, 1939 व्यास जी पर प्रतिबन्ध उठा। व्यास राज्य के सलाहकार मण्डल में शामिल।

1941 जोधपुर नगर पालिका के चुनाव। परिषद् को बहुमत। व्यास जी नगर पालिका अध्यक्ष निर्वाचित।

मई, 1942 सरकार व परिषद् के बीच तनाव। नगर पालिका से व्यास जी का इस्तीफा। सलाहकार परिषद् के चुनावों का बहिष्कार। परिषद् द्वारा प्रधानमन्त्री सर डोनाल्ड फील्ड को हटाने के लिये आन्दोलन। ता. 26 मई को व्यास जी गिरफ्तार। परिषद् द्वारा सत्याग्रह शुरू। सैकड़ों कार्यकर्त्ता गिरफ्तार।

जून, 1942 सत्याग्रहियों द्वारा जेल में दुर्व्यवहार के विरुद्ध भूख हड़ताल। ता. 19 जून को श्री बालमुकन्द बिस्सा की अस्पताल में मृत्यु।

अगस्त, 1942 लोक परिषद् 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में शामिल। लगभग 400 कार्यकर्त्ता गिरफ्तार।

अक्टूबर, 1942 जोधपुर में विद्यार्थियों द्वारा पुलिस लाइन्स में बम विस्फोट करने का प्रयत्न। विद्यार्थी गिरफ्तार।

अप्रेल, 1944 युवकों द्वारा सरकारी कार्यालयों एवं अन्य सार्वजनिक स्थानों पर बम विस्फोट। गिरफ्तारियाँ और सजा।

मई, 1944 सरकार व लोक परिषद् में समझौता व्यास जी व कार्यकर्त्ता रिहा।

सितम्बर, 45 पं. नेहरू का जोधपुर में आगमन। महाराजा उम्मेदसिंह द्वारा नेहरू जी को रात्रि भोज। नेहरू जी की सलाह पर सर डोनाल्ड फील्ड के स्थान पर श्री सी. एस. वैंक्टाचारी की प्रधान मन्त्री के पद पर नियुक्ति।

1947 महाराजा उम्मेदसिंह का देहान्त। हनुवन्तसिंह महाराजा बने। 13 मार्च, 1947 को जागीरदारों द्वारा डाबडा में किसान सम्मेलन पर हमला। श्री चुन्नीलाल शर्मा व 4 किसान कार्यकर्त्ता शहीद। सर्व श्री मथुरा दास माथुर, द्वारका दास पुरोहित एवं नरसिंह कछवाहा आदि नेता गम्भीर रूप से घायल।

अगस्त—महाराजा जोधपुर की महाराजा धौलपुर के मारफत जिन्ना से मुलाकात। जिन्ना द्वारा भारतीय राजाओं के पाकिस्तान में मिलने के लिये मनचाही शर्तें स्वीकार करने का आश्वासन। महाराजा की लार्ड माउन्टबेटन से मुलाकात। जोधपुर भारतीय संघ में शामिल।

अक्टूबर—महाराजा द्वारा वेंक्टाचार्य के स्थान पर महाराज अजीतसिंह की प्रधानमन्त्री के पद पर नियुक्ति। नेहरू जी की नाराजगी। लोक-परिषद् द्वारा नये मन्त्रिमण्डल का विरोध।

1948 फरवरी को वी. पी. मेनन का जोधपुर आगमन। व्यास जी द्वारा मिले-जुले मन्त्रिमण्डल का निर्माण।

सितम्बर—मन्त्रिमण्डल का पुनर्गठन। सर्व श्री मथुरा दास माथुर और द्वारका दास पुरोहित मन्त्रिमण्डल में शामिल।

दिसम्बर—मेनन और महाराजा के बीच जोधपुर के राजस्थान में शामिल होने के सम्बन्ध में वार्ता। महाराजा की सहमति।

30-3-1949 सरदार पटेल द्वारा वृहत् राजस्थान का जयपुर में उद्घाटन। जोधपुर का अस्तित्व समाप्त।

5. बीकानेर राज्य

1907 पं. कन्हैयालाल ढूंढ और स्वामी गोपालदास द्वारा चूरू में सर्वहितकारिणी सभा स्थापित। सभा द्वारा पुत्री पाठशाला और हरिजनों के लिये कबीर पाठशालाओं की स्थापना।

1928 महाराजा गंगासिंह द्वारा श्री जमनालाल बजाज के बीकानेर प्रवेश पर पाबन्दी।

1930 26 जनवरी को पं. चन्दनमल बहड़ और स्वामी गोपालदास द्वारा चूरू स्थित धर्मस्तूप के शिखर पर तिरंगा झंडा फहराना। महाराजा द्वारा श्री बहड़ नगर पालिका की सदस्यता से निलम्बित।

1931–32 महाराजा का गोल मेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए लन्दन प्रस्थान। श्री बहड़ और साथियों द्वारा राज्य सरकार के जुल्मों के ज्ञापन का बीकानेर राज्य, राज्य के बाहर और लन्दन में वि रण। महाराजा की सम्मेलन से वापसी। सर्वश्री बहड़, सत्यनारायण सर्राफ, स्वामी गोपाल-

दास आदि कई सार्वजनिक कार्यकर्ताओं को 3 माह से लगाकर 7 वर्ष की सजायें।

1936 श्री मघाराम वैद्य द्वारा ता. 4 अक्टूबर को बीकानेर प्रजामण्डल की स्थापना का प्रयत्न। श्री वैद्य राज्य से निर्वासित।

1942 22 जुलाई, 1942 के श्री रघुवरदयाल द्वारा बीकानेर राज्य-प्रजा-परिषद की स्थापना। श्री गोयल राज्य से निर्वासित। 29 सितम्बर को श्री गोयल द्वारा राज्य की पाबन्दी तोड़कर राज्य में प्रवेश। श्री गोयल को 1 वर्ष की सजा। अन्य कई कार्यकर्ता गिरफ्तार। श्री नेमीचन्द आँचलिया को अजमेर के एक साप्ताहिक में लेख लिखने पर राजद्रोह के अभियोग में 7 वर्ष की कठोर सजा। दिसम्बर में कार्यकर्ताओं द्वारा झंडा सत्याग्रह। महाराष्ट्रीयन युवक प्रो. बी. एल. तालेकर द्वारा मरहटा लाईट इन्फैन्टरी के सैनिक अफसरों से छोटे बडे अस्त्रशस्त्र प्राप्तकर क्रान्तिकारियों को भेजना।

1943 2 फरवरी को महाराजा गंगासिंह का देहान्त। नये महाराजा शार्दुलसिंह द्वारा राजनैतिक कार्यकर्ता रिहा।

1944 26 अगस्त को महाराजा और श्री गोयल के बीच राजनैतिक स्थिति पर विचार विनिमय। वार्ता असफल। परिषद के कार्यकर्ता गिरफ्तार। श्री गोयल राज्य से निर्वासित।

1946 ता. 25 जून को श्री गोयल का पाबन्दी तोड़कर पुनः राज्य में प्रवेश। श्री गोयल गिरफ्तार। 30 जून को रायसिंहनगर में प्रजा-परिषद का सम्मेलन। बीरबल सिंह जुलूस का नेतृत्व करते हुए पुलिस की गोली से शहीद। 18 जुलाई को श्री गोयल व अन्य लोग रिहा।

1947 अप्रेल में बीकानेर का प्रतिनिधि संविधान परिषद् में शामिल। अगस्त में बीकानेर भारतीय संघ में शामिल। दिसम्बर में राज्य में नया विधान लागू।

1948 18 मार्च को अन्तरिम मन्त्रिमण्डल का निर्माण। प्रजा-परिषद् के कार्यकर्ता मन्त्रिमण्डल में शामिल। 23 सितम्बर को राज्य की धारा सभा के चुनाव। प्रजा परिषद् द्वारा चुनावों का बहिष्कार। प्रजा परिषद् के मन्त्रियों का मन्त्रिमण्डल से इस्तीफा। राज्य में राजनैतिक गतिरोध। दिसम्बर में श्री वी. पी. मेनन की महाराजा बीकानेर से बीकानेर, जोधपुर और जयपुर आदि रियासतों के राजस्थान में विलय पर चर्चा। महाराजा का विरोध। जयपुर और जोधपुर की सहमति। तदोपरान्त महाराजा बीकानेर भी सहमत।

1949 सरदार पटेल द्वारा जनवरी, 1949 में वृहत् राजस्थान के निर्माण की घोषणा। 30 मार्च को पटेल द्वारा जयपुर में वृहत् राजस्थान का उद्घाटन। बीकानेर राज्य का अस्तित्व समाप्त।

6. कोटा राज्य

1938 पं. नयनूराम शर्मा, पं. अभिन्न हरि और श्री तनसुखलाल मित्तल आदि के प्रयत्नों से कोटा राज्य प्रजामण्डल की स्थापना। पं. नयनूराम शर्मा की अध्यक्षता में मांगरोल में प्रजामण्डल का पहला अधिवेशन। उत्तरदायी शासन स्थापित करने की मांग।

1941 पं. नयनूराम शर्मा का जंगल में असामाजिक तत्वों द्वारा कत्ल। पण्डित अभिन्न हरि की अध्यक्षता में कोटा में प्रजामण्डल का दूसरा अधिवेशन।

1942 भारत छोड़ो आन्दोलन में प्रजामण्डल के कई नेता गिरफ्तार। व्यापक जन आन्दोलन। जनता द्वारा राजधानी पर अधिकार। पुलिस बैरकों में बन्द। कोतवाली पर तिरंगा झंडा। महाराव और जनप्रतिनिधियों में समझौता। कार्यकर्ता रिहा।

1045 कोटा में नागरिक अधिकारों के लिये कार्यकर्ता गिरफ्तार व रिहा।

1947 अगस्त में कोटा भारतीय संघ में शामिल।

1948 25 मार्च को कोटा संयुक्त राजस्थान में शामिल। कोटा महाराव को राजप्रमुख के पद की एवं प्रो. गोकुल लाल असावा को प्रधानमन्त्री के पद की शपथ।

7. बून्दी राज्य

1929 पं. नयनूराम शर्मा के नेतृत्व में बैठ बेगार, लाग-बाग और लगान की ऊंची दरों के विरोध में राज्य में किसान सम्मेलन। डाबी के किसान सम्मेलन में पुलिस की गोली से श्री नानक भील शहीद।

1927 पुलिस द्वारा रामनाथ राजपुरोहित के कत्ल के विरोध में राजधानी में 9 दिन तक हड़ताल और प्रदर्शन।

1942 भारत छोड़ो आन्दोलन के सिलसिले में श्री नित्यानन्द बून्दी जेल में। राजधानी में हड़ताल व जुलूस।

1944 बून्दी राज्य लोक परिषद् की स्थापना। श्री हरिमोहन माथुर अध्यक्ष, और ब्रजसुन्दर शर्मा महामन्त्री।

1946 महाराव द्वारा परिषद् के प्रतिनिधि मन्त्रिमण्डल में लेने की घोषणा। परिषद का इन्कार।

1948 25 मार्च को बून्दी का संयुक्त राजस्थान में विलय। बून्दी महाराव नये राज्य के उपराजप्रमुख नियुक्त।

8. अलवर राज्य

1921 किसानों का सूअर विरोधी आन्दोलन। किसानों को सूअर मारने की इजाजत।

1925 राज्य द्वारा लगान वृद्धि के विरुद्ध किसान आन्दोलन । 24 मई को नीमुचाना ग्राम में किसानों और विश्वेदारों की सभा । राज्य की सेना द्वारा गोली । सैकड़ों स्त्री-पुरुष और बच्चों की हत्या । सेना द्वारा झोपड़ियों और पशुओं को जला देना ।

1931 'हिन्दुस्तान सोशियलिस्ट रीपब्लिकनआर्मी' नामक क्रान्तिकारी संगठन के नेता राजगढ़ (अलवर) के पं. भवानी सहाय शर्मा 1818 के रेगूलेशन के अन्तर्गत 7 वर्ष तक ब्रिटिश जेल में ।

1933–37 ब्रिटिश सरकार द्वारा अलवर महाराज जयसिंह का ता. 22 मई, 1933 को देश से निर्वासन । मई, 1937 में महाराजा का पेरिस में निधन । अंग्रेजों द्वारा जयसिंह के स्थान पर थाना ठिकाने के तेजसिंह को गद्दी पर बैठाने पर जनता द्वारा विरोध । सर्वश्री कुन्जविहारी लाल मोदी, हरिनारायण शर्मा आदि गिरफ्तार ।

1938 श्री मोदी और शर्मा द्वारा अलवर राज्य प्रजामण्डल की स्थापना । स्कूल फीस वृद्धि विरोधी आन्दोलन । प्रजामण्डल के कार्यकर्ता गिरफ्तार ।

1939 प्रजामण्डल द्वारा विश्व-युद्ध का चन्दा वसूल करने का विरोध । पण्डित हरिनारायण शर्मा और श्री भोलानाथ गिरफ्तार ।

1946 फरवरी में खेड़ा मंगलसिंह में प्रजामण्डल द्वारा जागीरी जुल्मों के विरुद्ध सम्मेलन । कार्यकर्ता गिरफ्तार । स्कूल, कालेज बन्द । राजधानी में हड़ताल । राज्य और प्रजामण्डल में समझौता । दस दिन बाद कार्यकर्ता रिहा ।

अगस्त में राजगढ़ में असामाजिक तत्वों द्वारा राष्ट्रीय झण्डे को जलाना प्रजा मण्डल द्वारा आन्दोलन । 600 गिरफ्तारियां । पुनः दोनों पक्षों में समझौता । कार्यकर्ता रिहा ।

1947 अगस्त में अलवर भारतीय संघ में शामिल ।

1948 महात्मा गांधी की हत्या के षड़यन्त्र में अलवर प्रशासन पर सन्देह । महाराजा एवं प्रधानमन्त्री डा. खरे दिल्ली में नजरबन्द । 7 फरवरी को केन्द्र द्वारा अलवर प्रशासन का अधिग्रहण ।
18 मार्च को अलवर का मत्स्य संघ में विलय ।

9. भरतपुर राज्य

1927 भरतपुर में पं. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा की अध्यक्षता में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का 17वां अधिवेशन । विश्वकवि रविन्द्रनाथ टैगोर, महामना मदन मोहन मालवीय और सेठ जमनालाल भरतपुर के महाराजा कृष्णसिंह के अतिथि । ब्रिटिश सरकार की नाराजगी ।

1928 महाराजा द्वारा जनता को शासन में भागीदार बनाने की घोषणा । महाराजा गद्दी से बरखास्त । महाराजा के सहयोगी एवं सार्वजनिक

कार्यकर्ता श्री जगन्नाथ दास अधिकारी राज्य से निर्वासित। जनता द्वारा अधिकारी की शानदार विदायी।

1937 सर्वश्री जगन्नाथ कक्कड़, गोकुल वर्मा और मास्टर फकीरचन्द द्वारा भरतपुर कांग्रेस मण्डल की स्थापना।

1938 श्री किशनलाल जोशी, डा. देवराज, मास्टर आदित्येन्द्र, श्री युगलकिशोर चतुर्वेदी और श्री गोपीलाल यादव द्वारा भरतपुर प्रजामण्डल की स्थापना।

1939 सरकार द्वारा मान्यता न देने के विरोध में प्रजामण्डल द्वारा सत्याग्रह। 600 से अधिक व्यक्ति गिरफ्तार। सरकार और प्रजामण्डल के बीच समझौता। प्रजामण्डल का नाम बदल कर प्रजा परिषद्। कार्यकर्ता रिहा।

1942 10 अगस्त को प्रजा परिषद् द्वारा भारत छोड़ो आन्दोलन की शुरूआत। कई कार्यकर्ता गिरफ्तार। राज्य में भयंकर बाढ़। 26 अक्टूबर को कार्यकर्ता रिहा।

1943 ब्रज जया प्रतिनिधि समिति के चुनाव। परिषद् का बहुमत।

1945 परिषद् द्वारा प्रतिनिधि समिति का बहिष्कार। श्री चतुर्वेदी और श्री राजबहादुर गिरफ्तार। दोनों पक्षों में समझौता। नेताओं की रिहाई।

1947 लार्ड वेवल और बीकानेर के महाराजा का पक्षी-विहार में जल मुर्गियों के शिकार के लिये आगमन। प्रजा परिषद् द्वारा जाटव लोगों को बेगार में पकड़ने का विरोध। हड़ताल, जुलूस एवं प्रदर्शन। पुलिस द्वारा भीड़ पर लाठी प्रहार। श्री राजबहादुर सहित अनेक कार्यकर्ता घायल। शहर में 22 दिन की हड़ताल। परिषद् के नेता गिरफ्तार। नुमावर में पुलिस की कारस्तानी से श्री रमेश शर्मा शहीद। दिसम्बर में परिषद् के नेता मास्टर आदित्येन्द्र और श्री गोपीलाल यादव एवं किसान सभा के नेता डा. देशराज और श्री हरिदत्त मन्त्रिमण्डल में शामिल।

1948 अगस्त में भरतपुर भारतीय संघ में शामिल। साम्प्रदायिक दंगों के कारण फरवरी में भरतपुर का प्रशासन भारत सरकार के हाथ में।
1 मार्च को भरतपुर का मत्स्य संघ में विलय।

10. धौलपुर राज्य

1934 श्री ज्वालाप्रसाद जिज्ञासु और श्री जौहरीलाल इन्दु द्वारा धौलपुर में नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना।

1938 श्री जिज्ञासु और श्री इन्दु द्वारा प्रजा मण्डल की स्थापना। प्रजा मण्डल द्वारा राज्य में उत्तरदायी शासन की मांग। कार्यकर्ता गिरफ्तार। श्री इन्दु राज्य से निर्वासित।

1940 श्री इन्दु द्वारा पाबन्दी तोड़कर राज्य में प्रवेश। 5 वर्ष की सजा।

1946 तखीमरे में कॉंग्रेस की सभा पर गोली। ठाकुर छत्रसिंह और पंचमसिंह घटना स्थल पर ही शहीद।

1947 महाराजा धौलपुर द्वारा महाराजा जोधपुर को पाकिस्तान में शामिल होने के लिए प्रोत्साहन। महाराजा द्वारा महाराजा जोधपुर की भोपाल के नवाब के मारफत जिन्ना से मुलाकात की व्यवस्था। अगस्त में धौल-पुर भारतीय संघ में शामिल।

1948 18 मार्च, 1948 को धौलपुर का मत्स्य संघ में विलय। महाराजा राजप्रमुख बने।

11. करौली राज्य

1927 कु. मदनसिंह द्वारा बेगार प्रथा, सुअर मारने की स्वतन्त्रता आदि समस्याओं को लेकर आन्दोलन। मांगें स्वीकार।

1938 मुन्शी त्रिलोकचन्द माथुर द्वारा सेवक संघ की स्थापना।

1939 श्री माथुर द्वारा प्रजामण्डल की स्थापना।

1942 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दौरान श्री कल्याण प्रसाद गुप्ता गिरफ्तार। 3 माह बाद रिहा। कई कार्यकर्ता भूमिगत।

1946 श्री चिरंजीलाल शर्मा प्रजामण्डल के अध्यक्ष।

1947 अगस्त में करौली भारतीय संघ में शामिल।

1948 18 मार्च को करौली का मत्स्य संघ में विलय।

12. जैसलमेर राज्य

1938 कतिपय युवकों द्वारा लोक परिषद् की स्थापना। राज्य द्वारा दमन। श्री लालचन्द जोशी को 6 माह की सजा। शेष कार्यकर्ताओं का जैसलमेर से पलायन।

1941-46 'जैसलमेर में गुण्डाराज' के लेखक श्री सागरमल गोपा 25 मई को राज्य सरकार द्वारा गिरफ्तार। बिना अदालती कार्यवाही के पांच वर्ष जेल। श्री गोपाजी पर जेल में अत्याचार। 8 मार्च, 1946 को श्री जयनारायण व्यास द्वारा पोलीटिकल एजेन्ट को गोपाजी की स्थिति का पता चलाने के लिए पत्र। पोलीटिकल एजेन्ट का 6 अप्रेल को जैसलमेर जाने का कार्यक्रम। जेल कर्मचारियों द्वारा ता. 3 अप्रेल को गोपाजी को तेल छिड़क कर जलाया। ता. 4 अप्रैल को जैसलमेर के अस्पताल में शहीद।

1947 अगस्त में महाराजा जोधपुर के साथ जैसलमेर के महारावल की जिन्ना से मुलाकात। पाकिस्तान में शामिल होने पर चर्चा। वी. पी. मेनन की समझाइश पर जैसलमेर भारतीय संघ में शामिल।

1948 जैसलमेर का प्रशासन भारत सरकार के हाथ। 30 मार्च जैसलमेर का राजस्थान में विलय।

13 डूंगरपुर राज्य

1 (1.) आदिवासियों में जाग्रति

1883 बांसिया ग्राम में उत्पन्न बणजारा परिवार के श्री गोविन्द द्वारा सम्पसभा की स्थापना। डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, मेवाड़, विजयनगर एवं अन्य रियासतों के आदिवासी (भील-ग्रासिया) सम्प सभा के नीचे संगठित।

1903-1908 गुजरात में मानापुर की पहाड़ी पर सम्प सभा का प्रथम अधिवेशन। राज्यों द्वारा बैठ-बेगार व गैरवाजिब लागतों का विरोध। हर वर्ष माना पहाड़ी पर आश्विन शुक्ला 15 को सम्प सभा का अधिवेशन। राजा लोगों में घबराहट। ए. जी. जी. को शिकायत। 1908 के सम्प सभा के अधिवेशन में उपस्थित हजारों आदिवासियों का ब्रिटिश सेना द्वारा घेराव व गोली। 1500 भील शहीद। हजारों घायल। गुरु गोविन्द गिरफ्तार। फांसी की सजा। भीलों में बगावत के डर से फांसी की सजा 20 वर्ष की सजा में परिवर्तित।

1935-37 श्री भोगीलाल पंड्या द्वारा हरिजन-सेवा-समिति की स्थापना। श्री माणिक्यलाल वर्मा द्वारा वागड़ सेवा मन्दिर की स्थापना। वर्मा जी का मेवाड़ प्रस्थान। पण्डया जी द्वारा संस्था का भार वहन।

2. राजनैतिक आन्दोलन

1942 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के सम्बन्ध में 5 दिसम्बर को श्री पंड्या की अध्यक्षता में डूंगरपुर में विराट सभा। अंग्रेजी शासन का विरोध। 6 दिसम्बर को स्कूलों एवं बाजारों में हड़ताल। स्थान-स्थान पर जुलूस।

1944 1 अगस्त को सर्वश्री भोगीलाल पंड्या, हरिदेव जोशी, गोरीशंकर उपाध्याय, शिवलाल कोटड़िया एवं कुरी चन्द जैन आदि के प्रयत्नों से प्रजामण्डल की स्थापना। 8 अगस्त को श्री पंड्या एवं श्री कोटड़िया क्रमशः प्रजामण्डल के अध्यक्ष एवं मन्त्री।

1946 ता. 3 से 5 अप्रेल तक श्री पंड्या की अध्यक्षता में राज्य प्रजामण्डल का अधिवेशन। उत्तरदायी शासन की मांग। सार्वजनिक शिक्षण संस्था सम्बन्धी कानून का विरोध। कटारा आन्दोलन। श्री देवराम शर्मा की गिरफ्तारी। श्री पंड्या 28 साथियों के साथ गिरफ्तार। प्रान्तीय नेता डूंगरपुर में। राज्य से सुलह। श्री पंड्या आदि रिहा। श्री जोशी एवं श्री उपाध्याय के विरुद्ध निर्वासन आज्ञा रद्द।

1947 पूनावाड़ा एवं रास्तापाल आन्दोलन। नाना भाई खाट और काली बाई शहीद। श्रीपंड्या गिरफ्तार एवं रिहा। डूंगरपुर भारतीय संघ में शामिल। श्री जोशी एवं साथियों पर जागीरदारों द्वारा कातिलाना हमला। जनता

में रोप। राज. मन्त्रिमण्डल में श्री उपाध्याय एवं श्री भीखा भाई शामिल।

1948 श्री उपाध्याय राज्य के प्रधानमन्त्री नियुक्त।

18 अप्रेल को डूंगरपुर का संयुक्त राजस्थान में विलय।

14. बांसवाड़ा राज्य

1943 श्री भूपेन्द्रनाथ त्रिवेदी एवं श्री धूलजी भाई भावसार द्वारा प्रजा मण्डल की स्थापना। राज्य द्वारा प्रजा मण्डल की सभाओं पर प्रतिबन्ध। कार्यकर्ता गिरफ्तार। राजधानी में हड़ताल। कार्यकर्ता तीसरे दिन रिहा।

1946 प्रजा मण्डल का अधिवेशन। उत्तरदायी शासन की मांग। विधान सभा के चुनाव। प्रजा मण्डल का बहुमत। प्रजामण्डल के सर्वश्री मोहनलाल त्रिवेदी और नटवरलाल भट्ट मन्त्रिमण्डल में।

1947 अगस्त में बांसवाड़ा भारतीय-संघ में शामिल।

1948 श्री भूपेन्द्रनाथ त्रिवेदी मुख्य मन्त्री बने।

18 अप्रेल को राज्य का संयुक्त राजस्थान में विलय।

15. कुशलगढ़ चीफशिप

1942 अप्रेल में प्रजामण्डल की स्थापना। श्री भंवरलाल निगम अध्यक्ष, श्री वर्द्धमान गदिया उपाध्यक्ष एवं श्री कन्हैयालाल सेठिया मन्त्री निर्वाचित।

1946 श्री पन्नालाल त्रिवेदी प्रजा मण्डल के अध्यक्ष।

1948 श्री त्रिवेदी एवं दाडमचन्द दोषी द्वारा कुशलगढ़ में गांधी आश्रम की स्थापना। श्री निगम और श्री गदिया राज्य के मन्त्री बने।

18 अप्रेल को कुशलगढ़ का संयुक्त राजस्थान में विलय।

16. प्रतापगढ़ राज्य

1931 युवकों द्वारा खादी और स्वदेशी का प्रचार। राज्य द्वारा तीन युवकों की गिरफ्तारी और सजा।

1936 स्व. ठक्कर बापा का प्रतापगढ़ में आगमन।

1938 स्व. ठक्कर बापा और श्रीमती रामेश्वरी नेहरू का प्रतापगढ़ में आगमन और हरिजन सेवा समिति की स्थापना।

1946 श्री अमृतलाल पायक, एडवोकेट द्वारा प्रजा मण्डल की स्थापना।

1947 अगस्त में प्रतापगढ़ भारतीय संघ में शामिल।

1948 2 मार्च को श्री पायक और श्री माणकलाल शाह राज्य के मन्त्रिमण्डल में शामिल।

18 अप्रेल को प्रतापगढ़ का संयुक्त राजस्थान में विलय।

17. शाहपुरा राज्य

1938 सर्वश्री रमेशचन्द्र ओझा और लादूराम व्यास द्वारा प्रजामण्डल की स्थापना।

1942 अगस्त में प्रजा मण्डल 'भारत छोड़ो' आन्दोलनमें शामिल। सर्वश्री व्यास और लक्ष्मीदत्त कांटिया गिरफ्तार।

1943 दिसम्बर में कार्यकर्ताओं की रिहाई।

1947 7 अगस्त को शाहपुरा भारतीय संघ में शामिल।
14 अगस्त को राज्य में नया विधान लागू। प्रो. गोकुललाल असावा प्रधान मन्त्री।
26 सितम्बर को भारत सरकार द्वारा शाहपुरा को केन्द्रीय शासित प्रदेश अजमेर में शामिल करने का प्रस्ताव। राजाधिराज और राजस्थान के नेताओं का विरोध। प्रस्ताव रद्द।

1948 18 अप्रेल को शाहपुरा का संयुक्त राजस्थान में विलय।

18. सिरोही राज्य

1922 श्री मोतीलाल तेजावत द्वारा राज्य के भीलों का संगठन। भीलों द्वारा लागबाग और जागीरी जुल्मों के विरुद्ध आन्दोलन। रोहिड़ा में अंग्रेजी फोज द्वारा गोली। 1800 स्त्री पुरुष और बच्चे मरे। हजारों घायल।

1939 23 जनवरी को श्री गोकुलभाई भट्ट द्वारा राज्य में प्रजामण्डल की स्थापना। 8 सितम्बर को प्रजामण्डल की सभा पर लाठी चार्ज। श्री गोकुल भाई घायल। श्री रामेश्वरदयाल अग्रवाल की गिरफ्तारी और सजा।

1942 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दौरान सिरोही में हड़ताल और जुलूस।

1947 अगस्त में सिरोही भारतीय संघ में शामिल।
24 अक्टूबर को श्री जवाहरमल सिंघवी प्रजा मण्डल के प्रतिनिधि के रूप में राज्य मन्त्रिमण्डल में शामिल।

1948 8 नवम्बर को सिरोही का प्रशासन भारत सरकार के हाथ में। श्री गोकुल भाई मुख्य मन्त्री।

1949 5 जनवरी को भारत सरकार द्वारा सिरोही का प्रशासन बम्बई सरकार को सुपुर्द। जनता द्वारा आन्दोलन। सिरोही को राजस्थान में मिलाने की मांग।

1950 जनवरी में माउन्ट आबू व दिलवाड़ा तहसील के 89 गांव का बम्बई में एवं शेष सिरोही का राजस्थान में विलय। राज्य में आबू को बम्बई में मिलाने के विरोध में जन-आन्दोलन। भारत सरकार द्वारा आबू के विलय पर पुनर्विचार का आश्वासन।

1956 1 नवम्बर को राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिश पर भारत सरकार द्वारा आबू व दिलवाड़ा तहसील के 89 गांव राजस्थान को हस्तान्तरित।

19. किशनगढ़ राज्य

1939 श्री कांतिचन्द्र चौथाणी के प्रयत्नों से श्री जमाल शाह की अध्यक्षता में प्रजा मण्डल की स्थापना।

1942 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दौरान राजधानी में हड़ताल व जुलूस।

1943 विधान सभा के चुनाव। प्रजा मण्डल का बहुमत।

1947 अगस्त में किशनगढ़ भारतीय संघ में शामिल।
26 सितम्बर को किशनगढ़ का अजमेर में विलय। प्रान्तीय नेताओं के विरोध पर विलय रद्द।

1948 18 अप्रेल को किशनगढ़ का सं. राजस्थान में विलय।

20. टोंक राज्य

1921 नाज निकासी विरोधी आन्दोलन। ता. 14 जनवरी को जनता ने नवाब को घेरा। नाज के भाव नियत। सैयदों के निष्कासन के विरुद्ध आन्दोलन। अंग्रेजी सेना द्वारा स्थिति पर नियन्त्रण।

1939 मजलिस्से अम्मा (विधान सभा) की स्थापना।

1947 टोंक भारतीय संघ में शामिल।

1948 18 अप्रेल को टोंक का संयुक्त राजस्थान में विलय।

21. झालावाड़ राज्य

1947 प्रजामण्डल की स्थापना। महाराजा प्रजामण्डल में शामिल। अगस्त में झालावाड़ भारतीय संघ में शामिल। लोकप्रिय मन्त्रिमण्डल की स्थापना। महाराजा स्वयं प्रधान मन्त्री एवं सर्वश्री कन्हैयालाल मित्तल एवं मांगीलाल मन्त्री नियुक्त।

1948 18 अप्रेल को राज्य का संयुक्त राजस्थान में विलय।

22. अजमेर–मेरवाड़ा

1914 राशविहारी बोस द्वारा राजस्थान में सशस्त्र क्रान्ति की जिम्मेदारी खरवा ठाकुर गोपालसिंह, ब्यावर के सेठ दामोदर दास राठी और भूपसिंह (विजयसिंह पथिक) पर। क्रान्तिकारी सेना का गठन। 30 हजार बन्दूकें एकत्रित।

1915 बोस द्वारा 21 फरवरी को क्रान्ति की तारीख निश्चित। भारत सरकार द्वारा 19 फरवरी को क्रान्तिकारियों की धरपकड़। क्रान्ति की योजना असफल। ठाकुर गोपाल सिंह और भूपसिंह टाडगढ़ में नजरबन्द। स्थानीय क्रान्तिकारी संगठन छिन्न-भिन्न।

1920 अजमेर–मेरवाड़ा में कांग्रेस की शाखा स्थापित। खिलाफत समिति की बैठक। श्री अर्जुनलाल सेठी, पथिक जी और केशरीसिंह जी बारहट द्वारा राजस्थान सेवा संघ की स्थापना।

1926 श्री हरिभाऊ उपाध्याय प्रान्तीय कांग्रेस के अध्यक्ष।

1930 अप्रेल में नमक सत्याग्रह के सम्बन्ध में सर्वश्री उपाध्याय, रामनारायण चौधरी, पथिकजी, सेठीजी व प्रो. गोकुललाल असावा आदि की गिरफ्तारियां ।

1932 असहयोग आन्दोलन । सैकड़ों कांग्रेस कार्यकर्ता व महिलायें गिरफ्तार । श्री नरहरी बापट द्वारा इंसपेक्टर जनरल ऑफ प्रिजन्स श्री गिब्सन की हत्या का प्रयत्न । श्री बापट को 10 वर्ष की सजा ।

1935 सर्वश्री ज्वाला प्रसाद शर्मा, रमेशचन्द्र व्यास एवं रामसिंह द्वारा स्थानीय पुलिस के डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट डोगरा को मौत के घाट उतारने का प्रयत्न । डोगरा घायल । तीनों क्रान्तिकारी गिरफ्तार । रामसिंह को 7 वर्ष के लिये काले पानी की सजा । श्री रमेशचन्द्र और श्री ज्वालाप्रसाद बरी । श्री ज्वालाप्रसाद नजरबन्द ।

1942 अगस्त में भारत छोड़ो आन्दोलन में कांग्रेस के सैकड़ों कार्यकर्ता गिरफ्तार । श्री ज्वाला प्रसाद और श्री रघुराज सिंह जेल से फरार ।

1952 अजमेर विधान सभा के चुनाव । कांग्रेस का बहुमत । श्री हरिभाऊ उपाध्याय के नेतृत्व में मन्त्रिमण्डल का गठन ।

1956 1 नवम्बर को राज्य-पुनर्गठन-आयोग की सिफारिश पर अजमेर का राजस्थान में विलय ।

परिशिष्ठ (8)

राजस्थान राज्य का निर्माण—घटनाचक्र

1946 ता. 25 एवं 26 जून को महाराणा उदयपुर द्वारा राजपूताना, मालवा और गुजरात के 22 राजाओं का 'राजस्थान-यूनियन' बनाने के सम्बन्ध में सम्मेलन का आयोजन। राजाओं में मतभेद। सम्मेलन असफल।

9 सितम्बर को अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रान्तीय सभा द्वारा राजपूताना की रियासतों के एकीकरण द्वारा राजस्थान निर्माण की मांग।

1947 सितम्बर में भारत सरकार द्वारा किशनगढ़ और शाहपुरा को केन्द्र शासित प्रदेश अजमेर में मिलाने का निर्णय। प्रांतीय नेताओं द्वारा विरोध। निर्णय रद्द।

1948 20 जनवरी को अ. भा. देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रान्तीय सभा द्वारा पुनः राजस्थान निर्माण की मांग।

1 फरवरी को राजपूताना की दान्ता, ईडर और विजयनगर की रियासतें पश्चिमी भारत और गुजरात एजेन्सी को हस्तान्तरित।

1 मार्च को सिरोही का पश्चिमी भारत और गुजरात एजेन्सी को हस्तान्तरण। जनता का विरोध।

27 फरवरी को अलवर, भरतपुर, धौलपुर और करौली के राजाओं द्वारा मत्स्य संघ में मिलने की सहमति।

18 मार्च को मत्स्य संघ का उद्घाटन। महाराजा धौलपुर राजप्रमुख एवं श्री शोभाराम प्रधान मन्त्री।

महाराव कोटा द्वारा कोटा, बून्दी और झालावाड़ के विलय द्वारा हाड़ोती संघ एवं महारावल डूंगरपुर द्वारा डूंगरपुर, बांसवाड़ा एवं प्रतापगढ़ के विलय द्वारा 'बागड़ संघ' बनाने के असफल प्रयत्न।

25 मार्च को (1) कोटा (2) बून्दी (3) झालावाड़ (4) डूंगरपुर (5) बांसवाड़ा (6) कुशलगढ़ चीफशिप (7) प्रतापगढ़ (8) किशनगढ़ (9) शाहपुरा एवं (10) टोंक रियासतों के विलय द्वारा संयुक्त राजस्थान का निर्माण। महाराव कोटा राजप्रमुख एवं प्रो. गोकुल लाल असावा मुख्य मन्त्री मनोनीत।

18 अप्रेल को मेवाड़ का संयुक्त राजस्थान में विलय। उदयपुर राजधानी। महाराणा उदयपुर राजप्रमुख एवं श्री माणिक्य लाल वर्मा प्रधान मन्त्री नियुक्त।

1949 14 जनवरी को सरदार पटेल द्वारा उदयपुर में जयपुर, जोधपुर, बीकानेर और जैसलमेर के राजस्थान में शामिल होने की घोषणा।

30 मार्च को वृहद राजस्थान राज्य का उद्घाटन। जयपुर राजधानी। महाराजा जयपुर राजप्रमुख एवं श्री हीरालाल शास्त्री मुख्यमन्त्री।

15 मई को मत्स्य संघ का राजस्थान में विलय।

1950 जनवरी में सिरोही का विभाजन। माउन्ट आबू और आबू तहसील के दक्षिण भाग का बम्बई राज्य में विलय व शेष सिरोही रियासत का राजस्थान में विलय। सिरोही की जनता द्वारा माउन्ट आबू को बम्बई में मिलाने के विरोध में आन्दोलन। पं. नेहरू द्वारा पुनर्विचार का आश्वासन।

1956 1 नवम्बर, को राज्य-पुनर्गठन-आयोग की सिफारिश पर भूतपूर्व सिरोही राज्य का माउन्ट आबू आदि इलाका एवं अजमेर मेरवाड़ा राजस्थान में शामिल।

परिशिष्ठ (9)

1. सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1.	डॉ० करणीसिंह	The Relations of the house of Bikaner with the Central Powers.
2.	कौलिन्स एण्ड लापियर	Freedom at midnight
3.	नाथूराम खड़गावत	Rajasthan's role in the freedom struggle of 1857
4.	जगदीशसिंह गहलोत	राजपूताने का इतिहास
5.	कालिचरण घोष	शहीद पुराण (The Roll of honour)
6.	कर्नल जेम्स टाड	Annals and antiquities of Rajasthan
7.	दुर्गादास	From Curzon to Nehru and there-after.
8.	वी. एल. पानगड़िया	राजस्थान का इतिहास
9.	सर प्रतापसिंह	महाराजा सर प्रतापसिंह का स्वलिखित जीवन चरित्र (सम्पादक—श्री राधाकृष्ण)
10.	Sardar Patel's correspondence.	
11.	डी. आर. मंकीकर	(1) Mewar Saga (2) Accession to extinction
12.	वी. पी. मेनन	The Story of the integration of the Indian States.
13.	के. एम. मुन्शी	Pilgrimage to freedom
14.	रिचार्ड सेशन	Congress party in Rajasthan
15.	White paper on Indian States.	
16.	लॉर्ड वेवल	Wavel's Journal
17.	डॉ. मथुरालाल शर्मा	कोटा राज्य का इतिहास
18.	हीरालाल शास्त्री	प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र
19.	प्रो. शंकरसहाय सक्सेना	(1) बिजोलिया का किसान आन्दोलन (2) जो देश के लिये जिये (3) विजयसिंह पथिक की जीवनी।

2. सन्दर्भ पत्र-पत्रिकाओं की सूची

1. कर्मठ राजस्थान (पाक्षिक)—सं. ठा. ओंकारसिंह
2. ज्वाला, साप्ताहिक, जोधपुर—सं. सुभाप पुरोहित
3. नवजीवन, उदयपुर—सं. कनक मधुकर
4. तरुण राजस्थान, अजमेर (1924)
5. प्रेरणा (साप्ताहिक) जोधपुर—सं. देवनारायण व्यास
6. केशरीसिंह वारहट स्मारिका—प्र. वारहट स्मारक ट्रस्ट, शाहपुरा
7. जोधपुर गवर्नमेन्ट गजट
8. मेवाड़ गजट (सज्जन कीर्ति सुधारक)
9. राजपूताना प्रान्तीय सभा का त्रैमासिक वुलेटिन—(रा. प्र. कांग्रेस कमेटी)
10. राजस्थान इंस्टीट्यूट ऑफ हिस्टोरिकल रिसर्च पत्रिकायें
11. राजस्थान पत्रिका, सं.—कपूरचन्द कुलिस
12. हरिजन (महात्मा गांधी)

अनुक्रमणिका

उदयपुर (मेवाड़)

करोली

किशनगढ़

कुशलगढ़

कोटा

जयपुर

जैसलमेर

जोधपुर (मारवाड़)

झालावाड़

टोंक

डूंगरपुर

धौलपुर

प्रतापगढ़

बांसवाड़ा

बीकानेर

राजस्थान से सम्बन्धित अन्य विशिष्ठ व्यक्ति

परिशिष्ठ (11)

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	परा	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
3.	3	6	फहगाना	फरगाना
4.	1	1	बाबर की भांति	भांति
12.	2	2	2 मई	28 मई
13.	3	4-5	सिंह जोरावर	जोरावरसिंह
24.	2	7	किसानों की	किसानों को
30.	1	6	1888	1908
31.	3	13	में	ने
40.	3	6	भवानी शंकर	भवानी सहाय
43.	1	6	महाराज	महाराज कुमार
45.	1	9	रियासतों	रियासत
49.	3	1	1948	1938
65.	3	4	शीत	विचारशील
67.	2	1	राज्यमण्डल	प्रजामण्डल
72.	3	2	सी. आर.	सी.
75.	1	1	भ	भी
82.	3	2	जोधपुर	धोलपुर
83.	3	1	दमन	कदम
83.	5	6	1984	1944
93.	5	2	वांढवाड़ा	वांसवाड़ा
104.	4	9	1.8 करोड़	18 लाख
105.	2	4	छट मैय्या	छुट मैय्या
107.	2	6	मत केन्द्र	मतदान केन्द्र
120.	4	11	में	को
131.	2	5	the	he
139.	4	1	छोड़ने	छोड़ो
140.	7	3	जेठीजी	सेठीजी